साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२२ अंक-७ ❖ पृष्ठ ८८ | माघ-फाल्गुन, संवत्-२०७३ | फरवरी २०१७

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२
फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३
इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०
वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००
वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००
विदेश में
एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)
वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

इस अंक में

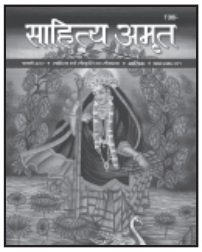

संपादकीय

संत सिपाही दशम गुरु का ३५०वाँ… ४

प्रतिस्मृति

बच्चे तो जरूर समझ लेंगे/ *चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, ललितांबिका* ८

आलेख

शब्दों की भाव-समाधि जैसी हैं स्वामी विवेकानंद की कविताएँ/ *प्रकाश मनु* १०

लंदन में भारत की खुशबू/ *मृदुला सिन्हा* १७

सांप्रदायिक सौहार्द के प्रतीक पुरुष : बाबू वृंदावनलाल वर्मा/ *जगदीश खरे 'जीवमित्र'* २७

फिजी में रामायण मेला/ *सीतेश आलोक* ३६

कथाकार गंगा प्रसाद मिश्र : एक सफल आयोजक/ *इंदु शुक्ला* ५०

निराला का यह 'भिक्षुक' कौन है/ *भारत यायावर* ५६

कहानी

काल-दंश/ *ऋता शुक्ल* २२

एक सच्ची-मुच्ची की प्रेम कहानी/ *सुभाष चंदर* ३०

गॉड ब्लैस यू…/ *वंदना मुकेश* ३८

मृग-तृष्णा/ *राजेश सहाय* ७६

लघुकथा

नाटक/ *रामदरश मिश्र* १६

स्मरण

पं. दीनदयाल उपाध्याय : काया दुर्बल, सबल आत्मबल/ *राजेंद्र अरुण* २०

अनुपम मिश्र : जिनका समाज साफ माथे का था/ *संदीप जोशी* ६०

कविता

यादों के दर्पण में मेरे/ *त्रिभुवन माहेश्वरी* २६

ऐ मेरे वतन…/ *तन्वी सिंह* ३५

न खींचो लक्ष्मण-रेखाएँ/ *नीता चौबीसा* ५५

श्रीहरि की मधुशाला/ *रोहित कुमार* ५९

नया जोश हो, नई उमंगें/ *कृपा शंकर शर्मा 'अचूक'* ६३

नीतिपरक दोहे/ *शिव ओम अंबर* ६७

मन कहता कुछ गीत लिखूँ…/ *विजय रंजन* ७५

निबंध

जग वसंत की अगवानी में बाहर निकला/ *अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी* ३३

राम झरोखे बैठ के

अपने-अपने राष्ट्र-निर्माण कार्यक्रम/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४७

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

सोचकर रह गया दंग/ *के.वी. तिरुमलेश* ५४

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

जीवन-झरना/ *एमिलिया पार्डो बाजान* ६४

लोक-साहित्य

'घी के बिना होम-हवन नहीं, बेटी के बिना संसार नहीं'/ *मालती शर्मा* ६६

यात्रा-संस्मरण

उत्तरांचल के चारों धाम की यात्रा/ *एम.डी. मिश्रा 'आनंद'* ६८

बाल-संसार

वसंत-पंचमी/ *शकुंतला शर्मा* ७४

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८१

वर्ग-पहेली ८२

साहित्यिक गतिविधियाँ ८३

संपादकीय

संत-सिपाही दशम गुरु का ३५०वाँ प्रकाशोत्सव

खालसा जनक

दशम गुरु गोविंद सिंह का ३५०वाँ प्रकाशोत्सव पूरे देश में बड़े हर्षोल्लास से मनाया गया। उनके जन्मस्थान पटना साहब में भव्य आयोजन हुए। इसी प्रकार आनंदपुर साहब, दशम गुरु की प्रेरणा से जहाँ खालसा का जन्म हुआ, वहाँ भी बड़े-बड़े जश्न मनाए गए। दिल्ली के भाई वीरसिंह सदन में आयोजित तीन दिवसीय अंतरराष्ट्रीय गोष्ठी का उद्घाटन मान. उपराष्ट्रपति श्री हामिद अंसारी ने किया। गुरु गोविंद सिंह की एक जीवनी का भी विमोचन हुआ। आशा है, इस गोष्ठी में प्रस्तुत किए गए आलेख पुस्तकाकार प्रकाशित होंगे। गुरु गोविंद सिंह केवल सिख समुदाय के ही आदरणीय नहीं हैं। वे उन मानव-मूल्यों के प्रतीक हैं, जिनकी आज देश और विश्व को बड़ी आवश्यकता है। उनका जीवन बलिदान और त्याग, निस्पृहता और निडरता की जीती-जागती कहानी ही नहीं, मशाल है, प्रकाश-स्तंभ है। बचपन में सभी की धार्मिक स्वतंत्रता के लिए पिता गुरु तेग बहादुर का आत्मोत्सर्ग और अपने चारों पुत्रों का बलिदान धर्म और सिद्धांतों के लिए बलिदान की गाथा अनुपमेय है। वे एक कुशल योद्धा तो थे ही, पर साथ-ही-साथ साहित्य-प्रेमी, कवि, दार्शनिक और रचनाकार भी थे। वे विद्वानों व कवियों के संरक्षक रहे और उन्हें सदैव प्रोत्साहन देते रहे। गुरुजी के संघर्षमय जीवन में भी साहित्यिक गतिविधियाँ चलती रहती थीं। वे स्वयं हिंदी, ब्रज, पंजाबी, संस्कृत, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के ज्ञाता थे। उनकी प्रशासनिक दृष्टि ऐसी थी कि उन्होंने मसनदों की परंपरा को समाप्त कर दिया, क्योंकि वे जनता का शोषण कर रहे थे। गुरुजी न्याय और सत्य के पक्षधर थे। सही माने में उनको संत-सिपाही की संज्ञा दी गई। सब कष्टों के बावजूद करुणा और मानवता के गुण उनके व्यक्तित्व एवं व्यवहार में सदैव प्रदर्शित होते रहे। इसलाम धर्म से उनका विरोध नहीं था। वे तो मुगलों और उनके सूबेदारों के अत्याचारों के विरोध में लड़ते रहे। गुरु गोविंद सिंह के करीब ग्यारह काव्य ग्रंथ हैं। उनमें गुरु की दार्शनिकता, रहस्यवादी प्रवृत्ति और जीवन के लक्ष्य का पता चलता है। 'वचित्तर' नाटक में गुरुजी की अपनी कहानी है।

उनका 'जफरनामा' अत्यंत प्रभावी है। जफरनामा फारसी में काव्यात्मक एक पत्र है। औरंगजेब को गुरु गोविंद सिंह ने लिखा कि सब कोशिशों के बाद भी न्याय न दिखे तो तलवार उठाना उचित है। दशम ग्रंथ में उनकी सब रचनाएँ संकलित हैं। गुरु गोविंद सिंह ने गुरु ग्रंथ को अंतिम रूप दिया, उसमें अपने पिता गुरु तेगबहादुर की कुछ रचनाएँ शामिल कीं, पर अपनी नहीं। गुरु गोविंद सिंह की जादुई वाणी और करिश्माई व्यक्तित्व ने बंदा वैरागी (माधव दास) को बंदा बहादुर सिंह के रूप में निखार दिया और बंदा का नाम भी आत्माहुति और बहादुरी के लिए इतिहास में अंकित हो गया। नांदेड़ पड़ाव में जब वे दक्षिण जा रहे थे, दो अफगान सेवकों ने उनको छुरा भोंक दिया, जिससे कुछ दिनों के बाद उनका देहांत हो गया। अपनी मृत्यु के पहले गुरु गोविंद सिंह ने एक बड़ा दूरदर्शिता का कार्य किया। गुरु सत्ता किसी व्यक्ति को न देकर श्रीगुरुग्रंथ साहब को ही भविष्य के लिए अनंत गुरु घोषित कर दिया। अपनों के लिए भी भविष्य में उत्तराधिकार के विषय में किसी विवाद की संभावना ही नहीं रही। ऐसे महामानव के प्रति पूरा देश श्रद्धापूर्वक नतमस्तक है।

कलेंडर में फोटो का विवाद

सरकार व्यर्थ में कभी-कभी ऐसे विवादों में फँस जाती है, जो बेमानी हैं, किंतु विरोधी दलों को सरकार की आलोचना करने का एक अवसर मिल जाता है, वे भ्रांति फैलाते हैं। इसी प्रकार का प्रकरण है—खादी ग्रामोद्योग कमीशन के २०१७ के कलेंडर में गांधीजी की तसवीर की जगह प्रधानमंत्री मोदी की चरखा चलाते हुए फोटो को रखना। शायद खादी कमीशन की २०१६ की डायरी में भी यही हुआ था। राजग सरकार द्वारा प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को अधिक-से-अधिक प्रचारित करने में कोई बुराई नहीं है। यह उचित ही है, पर इसमें कुछ कल्पनाशीलता, सोच और समझदारी दिखाना आवश्यक होता है। अन्य सरकारें भी अपने प्रधानमंत्री को प्रचारित करती रही हैं। कलेंडर के प्रकरण में खादी कमीशन के कुछ कर्मचारियों ने विरोध प्रदर्शन कर लिया, पर वह शांत हो गया। इस समय पर ऐसा राजनैतिक माहौल है कि कांग्रेस, तृणमूल, सी.पी.एम. एवं कुछ अन्य विरोधी दल इस फिराक में ही रहते हैं कि कहीं कुछ मिले तो उसे तिल का ताड़ बना दिया जाए। एन.सी.पी. के नेता प्रफुल्ल पटेल ने कहा है कि कलेंडर और डायरी विवाद निरर्थक है। खादी कमीशन का यह भी कहना है कि न ऐसी कोई परंपरा है और न ही कोई नियम अथवा कानून है कि केवल गांधीजी का ही फोटो कलेंडर अथवा डायरियों में रखा जाए। पहले कई सालों के कलेंडर में गांधीजी की फोटो नहीं रही थी, किंतु न कांग्रेस, न अन्य किसी विरोधी दल ने कोई एतराज किया। इसीलिए हमने कहा कि खादी कमीशन के अधिकारी कुछ कल्पनाशीलता और दूरदर्शिता दिखाते तो यह व्यर्थ का बवंडर होने से बच जाता। यह भी सही है कि नरेंद्र मोदी ने खादी के प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया। बदलते परिवेश में उसमें आधुनिक रुचियों का ध्यान रखना चाहिए, इस बात पर जोर दिया गया है। प्रधानमंत्री द्वारा उत्साहित करने के कारण खादी प्रचार को बल मिला और खादी की बिक्री में २० प्रतिशत की वृद्धि हुई।

अतएव गांधीजी की फोटो रहते हुए भी प्रधानमंत्री के चरखा चलाते हुए फोटो को रखा जा सकता था। गांधीजी की फोटो कुछ बड़ी और

उनके साथ मोदी की फोटो कुछ छोटी, जैसा कि अकसर हम विज्ञापनों में देखते हैं, जहाँ प्रधानमंत्री की बड़ी फोटो के साथ किसी अन्य मंत्री की छोटी फोटो होती है। तब किसी को यह कहने का मौका नहीं मिलता कि प्रधानमंत्री गांधीजी का स्थान ले रहे हैं। कहा जा सकता कि मोदी गांधीजी की विरासत को और समृद्ध कर रहे हैं। हालाँकि विरोधियों का गांधी विचारधारा से कोई संबंध नहीं है। गांधीजी ने देश में चरखे के प्रचलन के लिए अथक परिश्रम किया, अतएव खादी के साथ उनका नाम जुड़ गया। ऐतिहासिक और भावात्मक दृष्टि से हमें उसका आदर करना चाहिए। गांधी राष्ट्रपिता हैं, खादी उनकी विशेष देन है। उन पर अथवा खादी पर एक विशेष पार्टी का ही एकाधिकार नहीं है।

प्रधानमंत्री को कोसनेवाले यह भूल जाते हैं कि राजनैतिक वंशवाद का प्रारंभ नेहरू-गांधी परिवार के रूप में हुआ। यही नहीं, कितनी संस्थाओं योजनाओं, हवाई अड्डे, पार्क, सड़कें, अस्पतालों आदि के नाम इस बात के परिचायक हैं कि व्यक्तिवाद के जन्मदाता कौन हैं। जहाँ तक हमारा प्रश्न है, कोई भी राजनैतिक दल हो, लोकतंत्र में व्यक्तिपूजा का स्थान नहीं होना चाहिए। डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान बनने के उपरांत देश को इस दिशा में आगाह भी किया था। एक बात, जो बहुत अखरती है—वह है राजनैतिक दलों में बढ़ती बड़बोलों की संख्या। भाजपा में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है। सरकार भाजपा की है, अतएव वह भी इनकी टिप्पणियों की चपेट में आ जाती है। हरियाणा के एक वरिष्ठ मंत्री विज कलेंडर के विवाद में कूद पड़े और मोदी को खादी के लिए बेहतर ब्रांड बताया। यह भी कह डाला कि गांधी का नाम नोट के ऊपर चिपक गया, जिससे नोट का अवमूल्यन हो गया। बाद में अपना कथन वापस लिया। थूककर चाटना कोई अच्छी बात नहीं। स्पष्टीकरण की जरूरत होती तो मोदी हर प्रकार से सक्षम हैं। इस तरह की बातों में चाटुकारिता की गंध आती है। अत्यधिक उत्साह में बिना किसी वैज्ञानिक प्रमाण के राजस्थान के एक मंत्री कह गए कि गाय केवल ऑक्सीजन की साँस लेती है और ऑक्सीजन ही निकालती है। ऐसे बयान हास्य के कारण बन जाते हैं।

२०१७ का विश्व पुस्तक मेला

२०१७ के दिल्ली के विश्व पुस्तक मेले में स्वास्थ्य की बाध्यताओं के कारण हमारा स्वयं जाना नहीं हो सका, यद्यपि काफी पुस्तकें सूचीपत्रों और व्यक्तिगत जानकारी के आधार पर मँगा सका। किंतु क्रय करने के पहले पुस्तक के पन्ने खोलने, इधर-उधर थोड़ा पढ़ने आदि से जो सुख मिलता है, उससे वंचित रहा। समाचार-पत्रों में पढ़कर कि इस बार प्रतिदिन अच्छी भीड़ रही और रविवार होने से अंतिम दिन और भी ज्यादा भीड़ मेले में देखने को मिली। लड़के-लड़कियाँ, महिलाएँ, वृद्ध, सभी ने मेले में रुचि दिखाई। केवल भीड़ ही नहीं जुटी, समाचार-पत्रों के अनुसार पिछले वर्ष के मुकाबले में पुस्तकों की खरीदारी करीब २० प्रतिशत अधिक रही। पुस्तक विक्रेताओं और प्रकाशकों के लिए यह बहुत संतोषजनक बात है। नोटबंदी के कारण डर था कि कहीं पुस्तकों की माँग पर बुरा असर न पड़े, अत: डिजिटल माध्यम से भी पेमेंट करने की व्यवस्था की गई थी। पर यह डर पाठकों के उत्साह के कारण गलत साबित हुआ। महिलाओं की रचनाधर्मिता विषय को इस वर्ष केंद्र में रखा गया था। पूरे देश में पिछले दो सौ सालों से महिलाएँ अपने अनुभव पर आधारित बहुत कुछ लिख रही हैं, पर उन्हें प्रकाशन के अवसर नहीं मिल पाते थे। अब धीरे-धीरे यह अभाव दूर हो रहा है। बाल-साहित्य के विषय में भी रचनाकारों को यह आकलन करने का अवसर मिला होगा कि बालिकाएँ और बालक आज के तकनीकी और वैश्विक वातावरण में किस प्रकार की रचनाओं की अपेक्षा करते हैं, क्योंकि वे मानसिक रूप से पहले की पीढ़ियों के मुकाबले अधिक चैतन्य हैं। खैर, जो भी हो, इस बात से प्रसन्नता है कि आनेवाली पीढ़ियाँ केवल इंटरनेट पर ही निर्भर नहीं रहेंगी, वे हाथ में लेकर पुस्तक पढ़ना चाहेंगी। ये अच्छे लक्षण हैं। प्रकाशक खुश हैं कि अच्छी बिक्री रही और साहित्यकार भी कि पाठक उनकी रचनाओं का आदर करते हैं। कुछ प्रकाशकों ने आखिरी दिन पुस्तकों पर दस की जगह बीस प्रतिशत का डिस्काउंट दिया। हिंदी और अंग्रेजी पुस्तकों की खरीदारी संतोषजनक रही। कुछ बड़े प्रकाशक, खासकर अंग्रेजी के उसमें शामिल नहीं हुए, ऐसा क्यों हुआ? यही नहीं, हमारी पुरानी शिकायत कि राज्य सरकारों के प्रकाशन संस्थान एवं विभागीय प्रकाशनों का अभाव इस बार भी रहा। नेशनल बुक ट्रस्ट को दूसरे राज्यों के प्रकाशकों से अधिक संपर्क साधना चाहिए। राज्य सरकारों से भी इस विषय पर बातचीत करनी चाहिए। अगर मेला देश के प्रकाशकों का समुचित प्रतिनिधित्व नहीं करेगा तो वह कुछ विदेशी स्टॉलों के आधार पर, जो केवल प्रचार के लिए होते हैं, सही माने में 'विश्व पुस्तक मेला' नहीं कहा जा सकता। वैसे आज भारत का प्रकाशन विश्व स्तर का होता जा रहा है और भारतीय प्रकाशन का स्वयं में विविधता की दृष्टि से अपना एक संसार है।

सरकार को निर्यात के लिए भारतीय प्रकाशकों को विशेष सुविधाएँ देने पर विचार करना चाहिए। हम समझते हैं कि कुछ छोटे प्रकाशक देश के, दिल्ली के आसपास के भी एवं ऐसी संस्थाओं के प्रकाशन, जो पाठकों की सुविधा के लिए अपना लाभांश कम रखते हैं, वे भी मेले में भाग नहीं ले पा रहे हैं। संबंधित सरकारी मंत्रालयों और विभागों को किराए के बारे में पुनर्विचार करना चाहिए। मेले में आने की फीस नाममात्र की होनी चाहिए। पुस्तकों को आज पावर या मृदु शक्ति कहा जाता है, जबकि उनकी क्षमता का इतिहास साक्षी है। राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा आर्थिक परिवर्तन की दृष्टि से पुस्तकों का प्रभाव कम नहीं है। वैसे भी अच्छी पुस्तकों की आवश्यकता है, अच्छे नागरिक तब ही बन सकेंगे। मानव संसाधन मंत्रालय और संस्कृत मंत्रालय को भान होना ही चाहिए कि पुस्तक प्रकाशन एवं पढ़ने की आदत में वृद्धि के लिए कुछ भी दिया जाना, जनता के धन का जनता के हित में और देश के विकास के लिए सदुपयोग ही है। नेशनल बुक ट्रस्ट को हीरक जयंती के लिए बधाई, साधुवाद। साठ वर्षों से प्रशंसनीय कार्य किया है, भविष्य में उसे और कैसे आगे बढ़ाया जाए, इसके लिए जनसंवाद करना चाहिए। विश्व पुस्तक मेले को कैसे और अधिक सार्थक बनाया जा सकता है, उसके बारे में विज्ञों और स्टॉक होल्डरों से विस्तृत विचार-विमर्श करना चाहिए। आपसी संवाद खुलकर होंगे, तभी विश्व पुस्तक मेला अधिक आकर्षक और अर्थपूर्ण होगा।

मालवीयजी और बी.एच.यू. के सौ वर्ष

इस स्तंभ में एक बात की ओर, जिसके विषय में कई बार चर्चा कर चुके, किंतु उस दिशा में प्रगति होती दिख नहीं रही है, ध्यान दिलाना चाहते हैं। मालवीयजी की १५०वीं वर्षगाँठ कब की बीत चुकी। घोषणा की गई थी विश्वविद्यालय के विशेष कन्वोकेशन, जिसमें नेपाल के तत्कालीन राष्ट्रपति को 'डॉक्टरेट' की मानद डिग्री प्रदान की गई थी। स्वयं हमने तथा बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी के कुलाधिपति डॉ. करन सिंह ने भी कहा कि सरकार से आर्थिक सहायता मिलने के बावजूद कुछ काम नहीं हो रहा है, विशेषतया, मालवीयजी के भाषणों और लेखों, साक्षात्कार आदि के संकलन का। युवा मालवीय कांग्रेस के दूसरे वार्षिक अधिवेशन (कलकत्ता) में शामिल हुए और तीन बार कांग्रेस के प्रेसीडेंट चुने गए। दीर्घकालीन सामाजिक और राजनीतिक सक्रिय जीवन में वे अनेक संस्थाओं से जुड़े। प्रांतीय और सेंट्रल एसेंबली, दोनों के सदस्य रहे। उनके भाषण हिंदी और अंग्रेजी में जगह-जगह बिखरे पड़े हैं। उनकी पत्रावली भी होगी। सबको खोजना है। १९४० के उपरांत उनकी सार्वजनिक गतिविधियाँ वृद्धावस्था के कारण कम होने लगी थीं, किंतु मृत्युपर्यंत देश में क्या हो रहा है, वे सजग रहे। डॉ. करन सिंह और संस्कृति मंत्रालय को जब यह सुझाव दिया था कि उनके भाषण, लेखों आदि के संकलन का दायित्व नेहरू मेमोरियल और लाइब्रेरी को दिया जाए, शीघ्रता से और सामग्री का पता लगाकर वहाँ के अनुभवी और विज्ञ शोधकर्ता संकलन का संपादन कर सकते हैं। वैज्ञानिक ढंग से यह काम होगा। तत्कालीन नेहरू लाइब्रेरी के डायरेक्टर डॉ. रंगरंजन और संस्कृति मंत्रालय के ज्वॉइंट सेक्रेटरी ने बताया कि हमारा सुझाव स्वीकार हो गया है। बी.एच.यू. में इस बृहत् कार्य के लिए न उचित वातावरण है और न सक्षम शोधकर्ता हैं। बहुत से कलक्टेड और सलेक्टेड वर्क्स नेहरू लाइब्रेरी के तत्त्वावधान में प्रकाशित हो चुके हैं। मोतीलाल नेहरू के चयनित वर्णन उनमें हैं। राजाजी के सेलेक्टेड वर्क्स (चुनिंदा संकलन) पर काम हो रहा है। दो या तीन भाग निकल भी चुके हैं। बनारस विश्वविद्यालय का प्रकाशन विभाग कभी बहुत अच्छा था, वह अब दयनीय अवस्था में है।

मालवीयजी की १५०वीं जयंती पर वहाँ कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं हुआ। केवल खाना-पूरी हुई। कुछ पुराने प्रकाशन पुन: प्रकाशित कर दिए गए—बिना किसी परिमार्जन अथवा परिवर्तन के। हम इस ओर इस वजह से विशेष ध्यान दिलाना चाहते हैं कि २०१६ बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी का शती वर्ष है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, जो वाराणसी के सांसद भी हैं, प्रारंभिक आयोजन में गए भी थे। विश्वविद्यालय के प्रारंभिक दिनों के विषय में एक अच्छा शोधग्रंथ एक विदेशी महिला द्वारा लिखा गया, प्रकाशित भी हुआ था। यूनिवर्सिटी ने भी ३०-४० साल पहले 'हिस्टरी ऑफ बी.एच.यू.' नामक ग्रंथ निकाला था। दो साल पहले जब वाराणसी गया तो देखा, उसको जैसे का तैसा फिर छाप दिया गया है। कोई पूरक या सप्लीमेंट जोड़ने की भी कोशिश नहीं की गई। हम चाहते हैं कि कम-से-कम इस वर्ष तो मालवीयजी की कृतियों के संकलन पर किसी प्रकार का वैज्ञानिक रूप से कार्य प्रारंभ हो। नेहरू लाइब्रेरी को इसका दायित्व तुरंत देना चाहिए। रचनावलियों या संगृहीत भाषणों का केवल सामग्री एकत्र करने के काम तक सीमित नहीं है। उन पर टिप्पणियों की आवश्यकता होती है, ताकि जो कहा गया, उसकी पृष्ठभूमि और संदर्भ स्पष्ट हो सकें। यूनिवर्सिटी कम-से-कम अपने विकास के इतिहास को २०१५ तक लाने की कोशिश करे, कम-से-कम नया न लिखवा सके तो पुराने ग्रंथ का एक समुचित पूरक ही तैयार करवाकर प्रकाशित करे। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का सौ वर्ष का गौरवशाली इतिहास है। वह ऐसे व्यक्ति की देन है, जिसे न कभी किसी प्रकार का मद रहा, न किसी तरह का मोह और जिसने अपनी सेवाओं व उपलब्धियों से देशवासियों का मन मोह लिया। अतएव विश्वविद्यालय की विकास-यात्रा का परिचय जन-साधारण को होना चाहिए।

राष्ट्रगान या कुछ और

गत माह के अंक में सर्वोच्च न्यायालय ने सिनेमाघरों में फिल्म दिखाने, उसके साथ राष्ट्रध्वज फहराने के विषय में जो निर्णय दिया, उसमें जो प्रोटोकॉल या आचार-संहिता निश्चित हुई, उसके विषय में जो प्रतिक्रियाएँ आईं, उसके विषय में कुछ लिखा गया था। अब इस संबंध में जो समाचार आ रहे हैं, उनसे पता चलता है कि जनता ने इस कदम को सराहा और स्वीकार किया है। तथाकथित व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं विभिन्न विचार व्यवहार के झंडावरदारों द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को बड़े विकृत रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की गई, इसे जनता पर दक्षिणपंथी विचारधारा और देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता की अवधारणा से जोड़ने का प्रयास किया, पर कोई खास सफलता नहीं मिली। वैसे जब विचार हो रहा था कि कौन सा राष्ट्रगान हो—टैगोर का 'जन-गण-मन' अथवा बंकिम का 'वंदेमातरम्', तो देश में दो प्रकार की राय थी और उसके अलग-अलग तर्क थे। जनता का बहुमत तो 'वंदेमातरम्' के पक्ष में था, किंतु अन्य कारणों से प्रधानमंत्री नेहरू ने 'जन-गण-मन अधिनायक' को राष्ट्रगान घोषित करवा दिया। आज हम सब उसे स्वीकार करते हैं। उस समय क्या तर्क थे और क्या सोच थी, एक राष्ट्रगान के क्या लक्षण हैं आदि, उसका एक अनुमान हमें लगा, जब एक पारसी प्रो. के.डी. सेठना, जिनको 'अमल किरन' का नाम श्रीअरविंद ने दिया था, उन्होंने 'मदर इंडिया' में, जो उस समय बंबई से प्रकाशित होता था, इस विषय में अपने विचार संपादकीय के रूप में प्रकाशित किए, पत्रिका का संपादन प्रो. के.डी. सेठना करते थे। यह संपादकीय इस कारण महत्त्वपूर्ण है कि प्रो. सेठना प्रत्येक संपादकीय पहले श्रीअरविंद के अवलोकन और संस्तुति के लिए भेजते थे। श्रीअरविंद 'वंदेमातरम्' के पक्ष में थे, क्योंकि उस समय के राष्ट्रीय संघर्ष में यह 'बेटल क्राई' यानी 'युद्धघोष' की तरह प्रेरक था। यह संपादकीय 'The Indian Spirit and the World Scene' नामक चयनिका में १९५३ में छपा और चयनिका पुन: २००४ में मुद्रित हुई। यह श्री सेठना (स्व.) के अन्य बड़े संकलन 'India and the World Scene' में भी है, जो १९९७ में छपा। दोनों श्रीअरविंद सोसाइटी, पांडिचेरी के प्रकाशन हैं। बहुत से पाठक शायद उसे पढ़ना चाहें।

इस समय बहुत सी समस्याएँ हैं, जो एक अनिश्चितता और परेशानी का कारण बन सकती हैं। चीन और पाकिस्तान की बढ़ती हुई दोस्ती, चीन की परोक्ष में धमकियाँ, इंडियन महासमुद्र में अपनी न्यूक्लियर पनडुब्बियाँ भेजने जैसे कदम हमारी परेशानियाँ बढ़ा सकते हैं। भारत के अमेरिका से बेहतर रिश्तों के कारण पाकिस्तान रूस को भी रिझाने की तरह-तरह से कोशिश कर रहा है। रूस पिछले कुछ दशकों से भारत का न केवल हथियार प्राप्त करने का सबसे बड़ा स्रोत रहा है, वरन् संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् में जम्मू-कश्मीर विवाद में हमारा साथ देता रहा है। उसके सैन्य संबंध पाकिस्तान से बन रहे हैं। अब कुछ मामलों में बेरुखी दिखाई देती है। हमारी सुरक्षा और विदेश नीति को इन सब प्रवृत्तियों के निराकरण के लिए एक संतुलित और गतिशील रणनीति बनानी होगी। यह भारत के लिए बड़ी चुनौती है।

विमुद्रीकरण के कारण जो विवाद पैदा हुआ, वह अभी चलता रहेगा। आनेवाले बजट सत्र में भी यह विवाद भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट हो सकता है। जी.एस.टी. पहली अप्रैल से लागू होना था, वह जुलाई तक टल गया है। यह आर्थिक सुधारों की दृष्टि से एक धक्का है। राष्ट्रपति महोदय ने अपने एक भाषण में कहा था कि जिन वर्गों के ऊपर नोटबंदी का विपरीत असर पड़ा है, उनकी तकलीफें दूर करने की तुरंत कोशिश होनी चाहिए। प्रधानमंत्री ने अपने ३१ दिसंबर के उद्‌बोधन में कुछ कदमों की चर्चा की, जो सरकार राहत के लिए उठा रही है। बजट में शायद कुछ और सुविधाएँ घोषित हों, किंतु यह ध्यान में रखना होगा कि प्रधानमंत्री ने जो घोषित किया था कि वे शोषित, वंचित और पीड़ित वर्गों को कुछ मनलुभावन खिलौने या लॉलीपॉप एवं राजनैतिक लाभ उठा लेने-देने में विश्वास नहीं करते हैं, बल्कि उनको सशक्त करना चाहते हैं, ताकि वे अंततोगत्वा अपने पैरों पर स्वयं आत्मसम्मान के साथ खड़े हो सकें और सरकारों का मुँह जोहने की आवश्यकता न रहे। सबके आर्थिक सशक्तीकरण का मुद्दा आर्थिक सुधारों का एक बहुत बड़ा अंग है, दोनों आवश्यकताओं में सामंजस्य बिठाना होगा। गरीबी तभी दूर होगी, जब देश की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होगी। विशेषतया आज एक राजनीतिक वैमनस्य और कड़वाहट का वातावरण पैदा किया जा रहा है, अत: बहुत समझदारी से इस ओर कदम उठाने होंगे।

२० जनवरी को प्रेसीडेंट ओबामा का कार्यकाल समाप्त हो गया और डोनाल्ड ट्रंप ने २० तारीख को अमेरिकी राष्ट्रपति का कार्यभार सँभाला। ट्रंप ने अपनी पिछली प्रेस कॉन्फ्रेंस में मीडिया को बहुत भला-बुरा कहा तो मीडिया ने भी उसी प्रकार का उत्तर दिया। भारत की ओर ट्रंप का कुछ रुझान दिखाई पड़ता है, पर आगे क्या होगा, कहना कठिन है। ट्रंप के नेतृत्व में अमेरिका किस प्रकार की आर्थिक नीति, किस प्रकार की विदेश नीति और कैसे अमेरिका अंतरराष्ट्रीय समझौतों एवं दायित्वों का निर्वाह करना चाहेगा, इस पर विश्व में अटकलबाजियाँ चल रही हैं। ट्रंप किस प्रकार का नेतृत्व देते हैं और किस प्रकार की नीतियाँ अपनाते हैं, उससे अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य बहुत कुछ प्रभावित होगा। अभी तो संशयात्मक स्थिति है।

सेना और अर्धसैनिक बलों की कुछ समस्याएँ

२६ जनवरी को देश ने गणतंत्र दिवस मनाया, हमारी सीमाओं और आंतरिक सुरक्षा में जवान अपनी जान हथेली पर लेकर लगे हुए हैं, उन जवानों के प्रति देश कृतज्ञता प्रकट करता है, उनको आश्वस्त करता है कि देश उनके साथ है और उनके परिवारों का ध्यान रखेगा। यह आवश्यक है, पर इस संकल्प के कार्यान्वयन में बहुत सी कमियाँ रहती हैं। पिछले दिनों देखा गया कि सैनिक एवं अर्धसैनिक बल के जवान कुछ बेचैन हैं। उनकी कुछ शिकायतें हैं, एक है भोजन की गुणवत्ता के बारे में। भोजन पोषक होना चाहिए। समय-समय पर कुछ विविधता भी उसमें दिखनी चाहिए। दूसरी है कि समय पर उनको घर जाने की छुट्टी नहीं मिलती है। हताशा में वे आत्महत्या कर बैठते हैं या दूसरों पर बंदूक चला देते हैं। छुट्टी का मामला एक जवान के लिए बहुत भावनात्मक होता है, यह हम नहीं भूल सकते। इस विषय में संवेदनाशीलता की आवश्यकता होती है। तीसरी बड़ी शिकायत है कि उनसे घरेलू तथा निम्न स्तर के काम लिये जाते हैं, जो उनके व्यक्तिगत सम्मान के विरुद्ध हैं। संसद् की एक समिति ने कुछ साल पहले अपनी रिपोर्ट दी थी, पर उस पर काररवाई नहीं हुई। एक और शिकायत अकसर यह होती है कि शहीदों के परिवारों को समय से और नियमानुसार जो मुआवजा या सहायता मिलनी चाहिए, वह नहीं मिलती है। समाचार-पत्रों में यदा-कदा इस प्रकार के समाचार आते रहते हैं। जिससे जवान आशंकित होते हैं। यह एक ऐसा मामला है, जिस पर सरकार की उचित निगरानी रहनी चाहिए। जो नियम है या जो वादा किया जाए, वह शीघ्रता से पूरा होना चाहिए। अतएव आवश्यकता इस बात की है कि इन शिकायतों को गंभीरता और निरंतरता से लिया जाए, ताकि हमारे सैनिक, अर्धसैनिक जवान संतुष्ट रहकर अपने कर्तव्यों का पालन समुचित रूप में अनुशासित रहकर कर सकें।

पाँच राज्यों में चुनाव

पाँच राज्यों में विधान सभाओं के चुनाव का बिगुल बज गया है। ये राज्य हैं—उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, पंजाब, गोवा और मणिपुर। सबसे ज्यादा आँखें उत्तर प्रदेश की ओर लगी हैं। महीनों से देश ने समाजवादी पार्टी का नाटक देखा। बहुत उलट-पलट और कलाबाजियों के बाद अब वह प्रहसन में परिवर्तित हो गया, जब मुलायम सिंह अखिलेश से अड़तीस सीटों के लिए सिफारिश करते हैं, जिसमें शिवपाल सिंह भी शामिल हैं। अखिलेश शिवपाल और मुलायम की अन्य चुनावी टिकट की सिफारिशों का क्या करते हैं, देखना है। कांग्रेस का अस्तित्व उत्तर प्रदेश में आजकल न के बराबर है, राहुल गांधी की सब कोशिशों के बावजूद। अखिलेश की साइकिल पर बैठना निश्चय किया, ताकि कांग्रेस का वजूद कुछ तो रहे। बसपा, कांग्रेस-समाजवादी गठबंधन और भाजपा के बीच मुकाबला है। आप के केजरीवाल दिल्ली के मुख्यमंत्री का दायित्व सिसोदिया को देकर पंजाब और गोवा के चुनाव में लगे हैं। पंजाब में अकाली दल और कांग्रेस तथा आप के बीच अच्छी टक्कर रहेगी। देखें, ऊँट किस करवट बैठता है।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी)

प्रतिस्मृति

बच्चे तो जरूर समझ लेंगे

● **चक्रवर्ती राजगोपालाचारी**

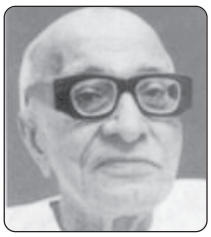

गांधीवादी क्षेत्र के चाणक्य 'भारत रत्न', चक्रवर्ती राजगोपालाचारी (१८७८-१९७२) वर्चस्वी राजनीतिज्ञ व वकील के साथ ही साथ सुविख्यात साहित्यकार भी थे। लब्धप्रतिष्ठ अमरीकी पत्रकार लुई फिशर के मुलाबिक गांधीजी के दोस्तों में तलवार की धार जैसी पैनी बुद्धिवाले अधिवक्ता राजाजी भी थे। 'महाभारत' और 'रामायण' का राजाजीकृत रूपांतर अपने ही तरीके का है। देश-विदेश की अनेक भाषाओं में राजाजी के ग्रंथों का रूपांतर हो चुका है। चेन्नै के सेलम में जनमे राजाजी का स्वर्गवास २८ दिसंबर, १९७२ को हुआ।

''देवलोक की भाषा संस्कृत है।'' एक दिन शास्त्रीजी ने कहा।

''प्रभु तो तमिल में ही बोलता है।'' कुछ और लोगों ने बहस की तो झट से उत्तर भारत के चंद सज्जनों ने कहा—

''भगवान् हिंदी में बोलता है, उस सरलतम हिंदी में, जो समस्त जनों की आम भाषा है।''

यह सुनते ही चार-पाँच बंगाली महाशय धीमे से हँसे।

''नहीं-नहीं, वास्तव में ईश्वर की व शिव की भाषा तो हमारी मराठी है।'' सबको नकारते हुए कुछ मराठी सज्जन तुरंत बोले।

इस पर एक अंग्रेज पादरी ने कहा, ''एय! जन्नत की भाषा अंग्रेजी है।''

''गलत, बिल्कुल ही गलत, लैटिन है, सुरलोक की भाषा, जिसका इस्तेमाल अब कोई नहीं करता।'' ये शब्द एक अन्य पादरी के थे।

''मगर सत्य तो कुछ और ही है। अल्लाहताला तो अरबी भाषा में बोला करता है और दूसरी भाषाओं का इस्तेमाल बिरले ही करता है।''

''अच्छा, एक सवाल मैं करूँ?'' उन्होंने कहा, ''कुरान कौन सी भाषा में है। आखिरकार अरबी में है न? तो संशय किस बात का? खुदा की जबान अरबी ही है।''

इस भाषायी बहस में भाग लेने के लिए कुछ और जन वहाँ आ पहुँचे, फिर क्या कहना था। बिल्कुल कोलाहल ही कोलाहल! किसी भी किस्म का समझौता न हो सका तो आखिरकार उन्होंने सीधे-सीधे प्रभु के सम्मुख जाकर मामला निपटाने का निश्चय कर लिया।

आपस में बातचीत करते हुए जब सब नीचे उतरे।

''भइया, सुना नहीं भगवान् तो शुद्ध हिंदी में ही बोला।''

''परमेश्वर के मुँह से निकले मराठी वाक्य सुने नहीं क्या?'' फौरन सवाल किया किसी ने।

तभी चार-पाँच बंग-बंधु बोले, ''प्रभु के शब्द बांग्ला में थे, इसीलिए देवभाषा बस वही है।''

इस तरह अरबी, अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, चीनी, स्पेनिश आदि भाषाएँ बोलनेवालों ने कहा कि उनकी भाषा ही भगवान् की भाषा है।

चंद पंछी एक वृक्ष पर बैठकर यह वाद-विवाद देख रहे थे। वे आपस में बाले, 'बिल्कुल अजीबो-गरीब है' मानव जाति की बेवकूफी, ईश्वर ने तो इन परिंदों की भाषा का इस्तेमाल किया।''

''भगवान् के डैने परदे के भीतर बैलर एकदम चमक उठे, कितना मनमोहक दृश्य था वहाँ! पंछी बोला।

''भगवान् की सूँड़ नहीं देखी तुमने?'' एक हाथी का प्रश्न था अपनी पत्नी से।

''मैंने तो आड़ से उसके दाँत ही देखे।'' उसने कहा

तभी एक तपस्वी ने कहा, ''वाह! कैसी मौन मूरत।''

अकस्मात् एक संगीतज्ञ बोले, ''प्रभु का मधुर संगीत सुनने के उपरांत एक गीत की आवश्यकता नहीं।''

इसपर एक नास्तिक ने अपनी राय प्रकट की—

''विभिन्न लोगों को विभिन्न लगनेवाली यह चीज तो यथार्थ नहीं, इनसान मिथ्या है।''

''मिथ्या नहीं।'' तुरंत ही तमिल पंडित ने बताया नास्तिक को।

''माया बिल्कुल एक अव्यक्त चीज है, जो सबसे परे है। इसलिए तो तमिल भाषी उसे 'कटवुल' कहता है। वह यों है। ऐसा निर्णय करना सरासर दुष्कर है।'

एक नास्तिक ने बताया—

''आखिरकार इधर खड़े होकर यों बहस करने से क्या फायदा? आओ, हम सब नदी के तट पर चलकर जरा हवाखोरी करते हुए बहस करें।'' सहसा सुनाई पड़ा।

''यह एक कथा के रूप में बच्चों को सुना दो।'' गणेश के ये शब्द सुने तो मैंने संशय प्रकट किया।

''बच्चे समझ लेंगे क्या?''

''केवल बुड्ढे ही नहीं समझ पाएँगे, बच्चे तो जरूर समझ लेंगे।''

□

हार की कीमत

● **ललितांबिका**

इकलौती औपन्यासिक कृति अग्निसाक्षी के लिए काफी चर्चित व बहुप्रशंसित ललितांबिका अंतर्जन्म मलयालम की मशहूर कथाकार हैं। चक्रवती का उपहार मनुष्य पुत्री 'माणिक्कन' आदि कहानियों में उनकी अपरंपार प्रतिभा की चमक मिलती है। केंद्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार, वयलार अवार्ड व उरोरक्कुषल पुरस्कार अलंकृत अंतर्जनम् की 'अग्निसाक्षी' पर यशस्वी निर्देशक श्यामप्रसाद ने फिल्माया है। माणिकन पर लोकप्रिय धारावाहिक और चार बरस पूर्व जन्म शताब्दी समारोह के अवसर पर कालितारिनक अंतर्जन्म की संपूर्ण कहानियाँ प्रकाशित हुईं।

अर्द्धनारीश्वर देवालय के कपाट के सम्मुख बैठकर वह बेलमाला पिरो रही थी।

''तुम यह हार क्यों पिरोती हो?'' युवा ने सवाल किया।

''ईश्वर पर चढ़ाने, मन्नत देनेवालों को बेचने के लिए।'' वह बोली।

''क्या कीमत है इसकी?''

युवती ने कीमत बताई।

''अच्छा, एक हार मुझे दो।''

उस युवा ने माला खरीदी और मूर्ति पर चढ़ाई, फिर ईश्वर के सामने खड़े होकर आरजू की और प्रसाद लेकर चला गया।

कुछ समय के बाद दुर्गा मंदिर पहुँचा तो, युवा ने देखा कि वही युवती उधर एक स्थली पर बैठकर फूलमाला पिरो रही है।

''क्या यह माला भी मनौती देनेवालों के लिए है?'' युवा ने पूछा।

''जी हाँ।'' चट से वह बोली, ''इधर तो सौनक मुख्य है। रक्तेश्वरी है इधर की मूर्ति, इसलिए रक्तमाला पिरोती हूँ।''

मूल्य पूछने के उपरांत एक हार खरीदकर युवा ने मूर्ति पर चढ़ाया और चला गया।

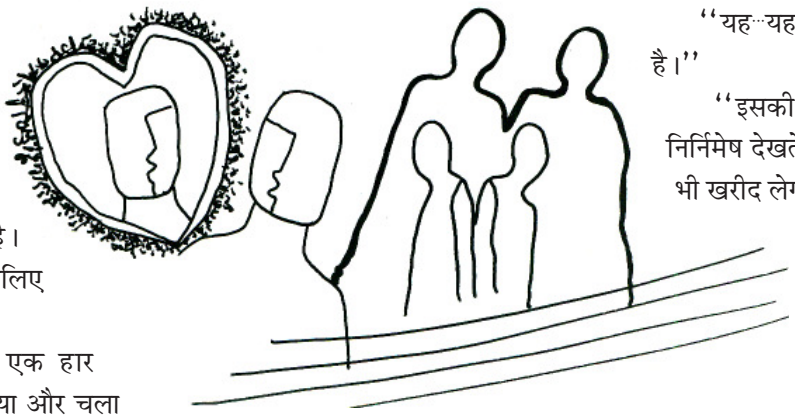

कुछ समय के पश्चात् जब युवक राधाकृष्ण मंदिर पहुँचा तो देखा कि वही युवती उधर बैठकर तुलसीहार पिरो रही है।

यही तो राधा-कृष्ण की इब माला होती है न?''

युवती बस मुसकराती रही।

''अच्छा एक तुलसी माला मुझे दो, लो पैसा।''

सदा की भाँति वह मंदिर जाकर प्रभु पर तुलसीहार चढ़ा आया। तदनंतर प्रसाद लेकर चला गया।

इस प्रकार युवक ने देखा कि उस चारदीवारी के भीतर के सातों देवालयों के वास्ते सात तरह के पुष्पहार एक ही युवती पिरोती है।

शाम का वक्त। देवालय के निकटवाला एक घर। युवा उधर पहुँचा तो वही युवती एक हार पिरोने में तल्लीन है। दालान में बैठी उस सुनयना को देखकर युवक के विस्मय की सीमा न रही।

''खैर, यह माला कौन सी मूर्ति पर चढ़ाने के लिए है?'' मुसकराते हुए अकस्मात् सवाल किया।

''यह···यह तो बस अपुन के घर के लिए है।''

''इसकी कीमत?'' सुनकर उसकी ओर निर्निमेष देखते वह फिर बोली, ''यह हार जो भी खरीद लेगा, उसे इसकी कीमत के तौर पर खुद-ब-खुद निजी जिंदगानी देनी पड़ेगी।''

प्रस्तुति : डॉ. वेणुगोपाल कृष्ण
इंदीवरम, मायनाडु
कालीकट (केरल)
दूरभाष : ०४९५२३५८८२८

आलेख

शब्दों की भाव-समाधि जैसी हैं स्वामी विवेकानंद की कविताएँ

● प्रकाश मनु

स्वामी विवेकानंद के बारे में अगर एक पंक्ति में कहना हो, तो कहा जा सकता है कि उनका व्यक्तित्व शक्तिमय था। एक गहरा, निर्बंध आवेग लिये हुए। आकाश और दिशाओं को बिजलियों की तरह कँपाता एक शक्ति का स्रोत था उनके भीतर, जो एक साथ हजारों हृदयों को मथ देता था। उनके इस प्रभाव से असंपृक्त रह पाना कठिन था। यहाँ तक कि जो निंदा या उपहास के भाव से उनके निकट आए, वे भी कब मन की सारी मलिनता भुलाकर उनके अपने हो गए, इसका खुद उन्हें ही पता न चलता था। और देश-दुनिया में ऐसे तो अनगिनत लोग थे, जिन्होंने अपना समूचा जीवन इस महान् संन्यासी के महत् कार्यों के लिए समर्पित कर दिया। उन्हें महसूस हुआ कि इस चुंबकीय व्यक्तित्व के स्पर्श से उनका मानो पुनर्जन्म हुआ है, और उन्हें जीने का एक नया अर्थ मिल गया।

यह स्वामी विवेकानंद का आध्यात्मिक शक्ति से मंडित, निर्भीक और तेजोदीप्त व्यक्तित्व ही था, जिसने गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारत की दीन-दुखी जनता में एक नई शक्ति का संचार कर दिया। और इस शक्ति के केंद्र में था उनका भावावेगमय हृदय, जिसके भीतर से ऊर्जा का अनवरत विकिरण होता था। उनकी बातों और व्याख्यानों के रूप में। उनके शब्द-शब्द से मानो कविता फूटती थी। उन्हें पढ़ते हुए लगता है, जैसे उनके भीतर हर वक्त एक ऊर्जा-भट्ठी जलती थी। इसलिए अपने रोजमर्रा के जीवन में वे जो कुछ भी कहते, वह काव्यमय था। उनका हर कथन, चिंतन, बोलचाल की भंगिमा, सबमें एक विदेह कवि का वास था। उनके निकट के सभी लोगों ने यह अनुभव किया कि उनका समूचा व्यक्तित्व जितना लोकोत्तर था, उतना ही काव्यमय भी।

सच तो यह है कि विवेकानंद ने कवि हृदय पाया था, जिसकी बानगी उनकी कई सुंदर और अद्वितीय कविताओं के साथ-साथ उनके व्याख्यानों में भी देखने को मिलती है, जिनमें उन्होंने मानो अपना हृदय उँड़ेल दिया है। चाहे वे भारत की हजारों वर्ष पुरानी ज्ञान व अध्यात्म की परंपरा और वेदांत के बारे में बोल रहे हों या वर्तमान भारत की घोर गरीबी, जातिगत उत्पीड़न, भेदभाव और छिछले धार्मिक अंधविश्वासों पर, या फिर विदेशी धन के बल पर धोखे से भारत की गरीब और भोली-भाली जनता का धर्मांतरण कर रहे चालाक पादरियों के षड्यंत्र पर, उनके शब्द भावनाओं के किसी वेगवान झरने की तरह फूट पड़ते हैं। और उनका सच्चा, निर्मल आवेग खुद-ब-खुद उन्हें कविताओं के रूप में ढाल देता है। इसी काव्य-रस के कारण उनके व्याख्यान सीधे दिल में उतरते हैं और मन को आंदोलित कर देते हैं। देर तक मन पर उनका प्रभाव छाया रहता है। कभी-कभी तो अवाक् कर देने की हद तक। आज पुस्तकों में उन्हें पढ़ते हुए हम जैसी भावनात्मक थरथराहट महसूस करते हैं, उससे कल्पना की जा सकती है कि उन्हें सुननेवाले किस तरह के गहरे चमत्कारिक प्रभाव से गुजरे होंगे।

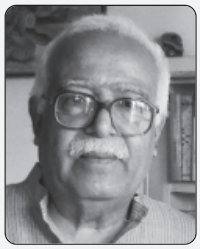

वरिष्ठ कवि-कथाकार। 'यह जो दिल्ली है', 'कथा सर्कस' और 'पापा के जाने के बाद' उपन्यास चर्चित हुए। 'एक और प्रार्थना', 'छूटता हुआ घर' कविता-संग्रह तथा 'अंकल को विश नहीं करोगे', 'अरुंधती उदास है' समेत ग्यारह कहानी-संग्रह। शिखर साहित्यकारों से मुलाकात, संस्मरणों और आलोचना की कई पुस्तकें। साहित्य अकादमी के पहले बाल-साहित्य पुरस्कार, उ.प्र. हिंदी संस्थान के 'बाल-साहित्य भारती' पुरस्कार तथा हिंदी अकादमी के 'साहित्यकार सम्मान' से सम्मानित।

यही कारण है कि महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और रामविलास शर्मा सरीखे हिंदी साहित्य के बड़े कवियों ने स्वामी विवेकानंद की कविताओं से आकर्षित होकर उनके अनुवाद में गहरी रुचि ली। निराला और पंत द्वारा अनूदित विवेकानंद की कविताओं को पढ़ते हुए लगता है, मानो उसमें स्वामी विवेकानंद की भावाकुलता में निराला और पंत के हृदय का आलोड़न भी आकर मिल गया हो। यह भी एक पावन संगम ही है, एक साथ कई महा नदियों का संगम। इसलिए इन कविताओं के हिंदी अनुवाद को पढ़ने का आनंद ही कुछ और है।

इस संबंध में निरालाजी से जुड़ा एक प्रसंग स्वयं रामविलासजी से सुनने का सौभाग्य मुझे मिला। हुआ यह कि निरालाजी ने, जो स्वामी विवेकानंद के वेदांत से बहुत प्रभावित थे, उनके बहुत से व्याख्यानों के साथ-साथ उनकी कविताओं के अनुवाद का भी बीड़ा उठाया। पर विवेकानंद की महावेग में बहती कविताओं का अनुवाद खुद किसी चुनौती से कम न था। निरालाजी उन कविताओं का जो अनुवाद करते, वह समय-समय पर रामविलासजी को भी सुनाया करते थे और रामविलास मुग्ध होकर उन्हें सुनते। पर स्वामी विवेकानंद की एक कविता का अनुवाद करने में निराला को दिक्कत आ रही थी। उन्होंने दो-तीन बार

कोशिश की, पर अपने अनुवाद से वे स्वयं ही संतुष्ट नहीं हुए। आखिर खीजकर उन्होंने कहा, 'डॉक्टर, इस कविता में इतने जटिल भाव हैं कि मुझे लगता है, हिंदी में इसका अनुवाद हो ही नहीं सकता।' डॉ. रामविलास शर्मा ने इसे एक चुनौती की तरह लिया, और अनुवाद में जुट गए। उन्होंने अत्यंत प्रवाहमय भाषा में स्वामी विवेकानंद की कविता का इतना सुंदर अनुवाद किया कि स्वयं निराला ने मुग्ध होकर उनकी प्रशंसा की।

इससे समझ में आता है कि स्वामी विवेकानंद सिर्फ एक आध्यात्मिक शख्सियत ही नहीं थे, बल्कि वे इससे बड़े, बहुत बड़े थे। उन्हें एक शक्तिमय और आभामंडित व्यक्तित्व मिला था, जिसमें से हुए ऊर्जा-प्रवाह ने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया। साहित्य को भी, और कविता को विशेषकर। उनका आवेग एक गरजते हुए महासिंधु की तरह किसी के बाँधे बँधता न था। इसलिए उनकी कविताएँ हिंदी के बड़े-बड़े महारथियों को चुनौती देती कविताएँ हैं, जिनके अनुवाद के लिए हिंदी के बड़े और दिग्गज कवियों ने सहर्ष अपनी सेवाएँ दीं।

मैं समझता हूँ, अपने लिखे से साहित्य और साहित्यकारों को इस तरह की चुनौती देनेवाली कोई और शख्सियत हमारे यहाँ नहीं है। हाँ, कुछ बाद में चलकर महात्मा गांधी आए और उन्होंने प्रेमचंद समेत हिंदी के बहुत से साहित्यकारों को प्रभावित किया। पर उनका अपना लिखा हुआ ही साहित्य और साहित्यकारों के लिए अभिव्यक्ति की चुनौती बन जाए, ऐसा शायद नहीं हुआ।

कविताओं में हलचल भरे हृदय की छाप

विवेकानंद को महासमाधि लिये आज सौ बरस से अधिक हो गए, पर केवल इस देश में ही नहीं, बल्कि विश्वहृदय में उनके शब्दों की गूँज अब भी सुनाई देती है, इसका कारण वह कविता ही है, जो उनके शब्दों में एक बिल्कुल अलग तरह का आत्मिक आवेग भर देती है। कविता की सबसे बड़ी शक्ति है कि वह सुनते ही सीधे दिल में उतर जाती है। विवेकानंद के व्याख्यान भी ऐसे ही हैं, जो सुनते ही आपके भीतर गूँज पर गूँज पैदा करते हैं और हमेशा के लिए आपकी स्मृति में गड़ जाते हैं। कविता का दूसरा बड़ा गुण है, अद्वितीयता। उसे सुनते हुए लगे कि यह बात तो इस तरह हम पहली बार सुन रहे हैं। विवेकानंद के व्याख्यानों में भी यही अद्वितीयता है, जो उन्हें बार-बार पढ़ने को बाध्य करती है।

पर यही नहीं, सौभाग्य से विवेकानंद ने अपनी भावमग्न दशा को व्यंजित करनेवाली कई सुंदर कविताएँ भी लिखी हैं। ऐसी कविताएँ जो वही लिख सकते थे, और उनमें उनके गहरे हलचल भरे हृदय की छाप है। साथ ही उनकी लंबी गैरिक साधना का तप भी। विवेकानंद ने छोटी-बड़ी कई कविताएँ लिखीं, पर उनमें तीन कविताओं 'संन्यासी का गीत', 'मेरा खेल खत्म हुआ' और 'नाचे उस पर श्यामा' की बहुत चर्चा होती है। इसके अलावा उनकी 'समाधि', 'जाग्रत देवता', 'शांति', 'प्याला' और 'मुक्ति' भी बहुत सुंदर कविताएँ हैं, जिनमें उनके भीतर के गहरे आत्मिक द्वंद्व, तीव्र मुक्ति-कामना और उदात्त भावों की झलक देखी जा सकती है।

स्वामीजी की ज्यादातर कविताएँ मूल रूप में अंग्रेजी में लिखी गईं, बाद में उनका हिंदी में अनुवाद हुआ। कुछ कविताएँ बँगला में भी लिखी गईं, जो बाद में अनूदित होकर हिंदी में आईं। पर झरने की तरह बहते कविता के शब्दों में अपनी तीव्रतम आभ्यंतरिक हलचल पिरो देने वाले विवेकानंद अंग्रेजी में लिखें या बँगला में, ज्यादा फर्क नहीं पड़ता। कविताओं के शब्द-शब्द में उनका हृदय बहा आता है और उसके संवेग को सँभालना पाठक के लिए कठिन हो जाता है। यहाँ तक कि हिंदी में अनूदित उन कविताओं को पढ़ने पर भी, पाठक का हृदय एक गहरे शक्तिपात का अनुभव करता है।

स्वामी विवेकानंद की कविताओं में 'संन्यासी का गीत' बहुत प्रसिद्ध कविता है, जिसमें उनका समूचा व्यक्तित्व और चिंतन बहुत सघन रूप में सामने आता है। इसे उन्होंने जुलाई, १८९५ में न्यूयॉर्क के थाउजेंड आइलैंड पार्क में लिखा था। कविता मूल रूप में अंग्रेजी में लिखी गई थी और उसे लिखा जाना एक घटना थी। स्वामीजी अपने कुछ प्रिय शिष्यों के साथ कुछ समय के लिए वहाँ रहे थे। उस दौरान वह सुरम्य स्थल मानो गुरु और शिष्यों की गहन आध्यात्मिक अनुभूतियों का आश्रम बन गया। वहाँ के सुंदर प्राकृतिक सौंदर्य के बीच निरंतर गुरु और शिष्यों का निराला आध्यात्मिक संवाद चलता रहा, जिसमें उनके कुछ शिष्यों को तो यीशु की झलक दिखाई दी। गहरी जिज्ञासाएँ और समाधान। यह स्वामीजी के अमेरिकी शिष्यों के लिए एक विरल और कभी न भूलने वाला अनुभव था। स्वयं विवेकानंद मानो एक लोकोत्तर अनुभव से गुजर रहे थे।

वहीं शिष्यों से गहन आध्यात्मिक संवाद के बीच अचानक स्वामीजी कुछ समय के लिए वहाँ से चले गए। उसी समय उन्होंने यह विलक्षण आवेगपूर्ण कविता 'संन्यासी का गीत' लिखी, जिसमें एक संन्यासी के रूप में उनके कठिन आदर्शों की एक झाँकी बड़े सुंदर और सघन रूप में सामने आती है—

छेड़ो हे वह तान, अनंतोद्भव अबंध वह गान,
विश्व-ताप से शून्य गह्वरों में गिरि के अम्लान,
निभृत अरण्य प्रदेशों में जिसका शुचि जन्मस्थान,
जिनकी शांति न कनक काम, यश, लिप्सा का निश्वास
भंग कर सका, जहाँ प्रवाहित चित का अविलास
स्रोतस्विनी उमड़ता जिसमें वह आनंद अयास
गाओ बढ़ वह गान, वीर संन्यासी, गूँजे व्योम।
ओम तत्सत ओम।

कविता की ये पंक्तियाँ लगता है, जैसे किसी अरण्य में गूँजती हजारों बरस पुरानी यज्ञ और आहुति की ध्वनियाँ हमारे कानों में पड़कर हमें विकल कर रही हों। क्योंकि ये केवल ध्वनियाँ ही नहीं हैं, उनके भीतर एक स्रोतस्विनी का उमड़ता हुआ आवेग और आनंद भी है। और मुक्तिबोध से शब्द उधार लें, तो 'एक पुकारती हुई पुकार' है इसमें! पूरी कविता में यही गूँज, यही पुकार है।

कविता आगे और गहनतम होती जाती है। एक संन्यासी का जीवन निभृत अरण्य प्रदेशों की महाशांति में गूँजते किसी अलौकिक गान की

तरह है, जिससे दिशाएँ गूँज उठती हैं और जिसका आनंद भीतर समाता नहीं है। विश्व-ताप से शून्य गिरि गह्वरों में उस अलौकिक गान, उस आनंद का जन्मस्थान बताते हैं। आगे विवेकानंद उस मुक्ति की व्यर्थता की बात करते हैं, जिसकी तलाश में हमारा पूरा जीवन चला जाता है। सच तो यह है कि हम माया के बंधनों से मुक्त हो ही कैसे सकते हैं, जबकि खुद हमने अपने हाथों से पाश को पकड़ रखा है—

कहाँ खोजते उसे सखे, इस पार कि या उस पार,
मुक्ति नहीं है यहाँ, वृथा सब शास्त्र, देवगृहद्वार।
व्यर्थ यत्न सब, तुम्हीं हाथ में पकड़े हो वह पाश,
खींच रहा जो साथ तुम्हें तो उठो बनो न हताश।
छोड़ो कर से दाम, कहो संन्यासी विहँस रोम—
ओम तत्सत ओम।

सच पूछिए तो मुक्ति उन्हीं के पास है, जो कभी मुक्ति-मुक्ति की रट नहीं लगाते। वह धार्मिक कर्मकांडियों और मंदिर-मठों के उच्च-भ्रू वाले अहंकारियों को नहीं, बल्कि उन सीधे-सरल लोगों को मिलती है, जो सुख-साधन जोड़ने की परवाह नहीं करते। वे दूब के नरम पलंग पर सोते हैं और प्रकृति में व्याप्त दिव्य आनंद की स्रोतस्विनी से अपने हृदय का संबंध जोड़ लेते हैं—

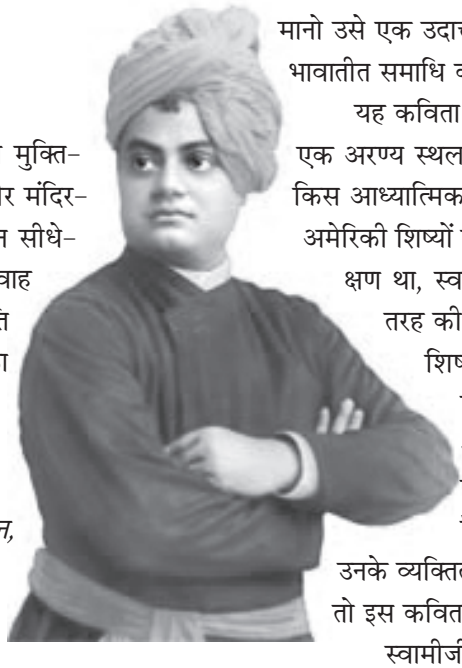

मत जोड़ो गृह-द्वार, समा तुम सको कहाँ आवास,
दूर्वादल हो तल्प तुम्हारा, गृहवितान आकाश।
खाद्य स्वत: जो प्राप्त, पक्व या इतर, न दो तुम ध्यान,
खानपान से कलुषित होती आत्मा वह न महान।
जो प्रबुद्ध हो, तुम प्रवाहिनी स्रोतस्विनी समान,
रहो मुक्त निर्द्वंद्व, वीर संन्यासी छेड़ो तान।
ओम तत सत्।

इससे भी बड़ी बात है निंदा और स्तुति में सम रहना। तभी तो हम उस महापाश को खोल पाएँगे, जिसने हमारी आत्मा को जकड़ा हुआ है। उसी पाश से मुक्त होना ही सच्चे आनंद से जुड़ जाना है। लगता है, भगवद्गीता का सारा मर्म ही इन पंक्तियों में उतर आया है। और हम स्वामी विवेकानंद के शब्दों में स्वयं श्रीकृष्ण का ही यह गीता-संदेश सुन रहे हैं—

विरले ही तत्त्वज्ञ करेंगे शेष अखिल उपहास,
निंदा भी, नरश्रेष्ठ, ध्यान मत दो निबंध अयास।
यत्र-तत्र निर्भय विचरो तुम, खोलो माया-पाश,
अंधकार पीड़ित जीवों के दु:ख से बनो न भीत।
सुख की भी मत चाह करो, जाओ हे रहो अतीत,
द्वंद्वों से सब, रटो वीर संन्यासी मंत्र पुनीत।
ओम तत्सत ओम।

और जीवन जीते हुए भी मुक्ति का यह अहसास विरला है, जिसमें मैं-तुम या जीव और ईश्वर का फर्क भी विलीन हो जाता है। सब कुछ एक लोकोत्तर आनंद में समा जाता है। इन पंक्तियों को पढ़ते हुए लगता है, मानो स्वामी विवेकानंद खुद अपने जीवन का मर्म बता रहे हों—

इस प्रकार दिन-प्रतिदिन जब तक कर्मशक्ति हो क्षीण,
बंधनमुक्त करो आत्मा को, जन्म-मरण हों लीन।
फिर न रहे गए मैं, तुम, ईश्वर, जीव या कि भवबंध,
मैं सबमें सब मुझमें— केवल मात्र परम आनंद।
कहो तत्त्वमसि संन्यासी, फिर गाओ गीत अमंद—
ओम तत्सत ओम।

किसी निर्जन वन में बहते झरने की तरह प्रशांति लिये इस कविता में हर पद की समाप्ति पर 'ओम तत्सत ओम' की गंभीर आवृत्ति मानो उसे एक उदात्त भूमि पर पहुँचा देती है, जहाँ कविता में भावातीत समाधि का आनंद भी समा गया जान पड़ता है।

यह कविता एक तरह की गवाही भी है कि न्यूयॉर्क के एक अरण्य स्थल में, गुरु और शिष्यों का लोकोत्तर संवाद किस आध्यात्मिक ऊँचाई पर पहुँच गया था। विवेकानंद के अमेरिकी शिष्यों के लिए यह गहन आध्यात्मिक अनुभव का क्षण था, स्वयं विवेकानंद के लिए भी। इसीलिए एक तरह की भाव समाधि के क्षण में थोड़ी देर के लिए शिष्य-मंडली को विस्मयाभिभूत छोड़कर, विवेकानंद वहाँ से अनुपस्थित हो जाते हैं। और इसी अबूझ भावदशा में एकांत में जाकर वे यह कविता लिखने के लिए प्रवृत्त होते हैं। यह विवेकानंद का अपना ढंग था, जिसमें उनके व्यक्तित्व की गूँज है। और वही गूँज, गौर से सुनें तो इस कविता के शब्द-शब्द में सुनाई देती है।

स्वामीजी की ऐसी ही भावदशा की एक और बड़ी महत्त्वपूर्ण कविता 'मेरा खेल खत्म हुआ' भी न्यूयॉर्क में ही लिखी गई थी, सन् १८९५ के वसंत के दिनों में। यह कविता भी मूल रूप में अंग्रेजी में लिखी गई थी। कविता में सांसारिक सुखों की निष्फलता के गहरे अहसास के साथ ही उनकी मुक्ति की आकुलता देखते ही बनती है। वे समय की गति के साथ लहरों पर अनवरत तैरते हुए परेशान हैं, क्योंकि यह सब वृथा है, जो उन्हें अब जरा भी नहीं रुचता। जीवन में उठना और गिरना, लगातार चलते रहना और कहीं न पहुँचना, यह तो बड़ा थकाने वाला सिलसिला है। भीषण ताप जैसा। इसमें सुख कहाँ है, आनंद कहाँ है? कविता क्षिप्रता से भरी मुक्त लय में लिखी गई है और शब्द कहीं अधिक सहज और खुले हुए हैं—

समय की लहरों के साथ
निरंतर उठते और गिरते
मैं चला जा रहा हूँ,
जिंदगी के ज्वार-भाटे के साथ-साथ
ये क्षणिक दृश्य एक पर एक आते-जाते हैं।
आह, इस अप्रतिहत प्रवाह से
कितनी थकान हो आई है मुझे,

ये दृश्य बिल्कुल नहीं भाते
यह अनवरत बहाव और पहुँचना कभी नहीं,
यहाँ तक कि तट की दूर की झलक भी नहीं मिलती।

कविता के अंत में वे अपनी मुक्ति-आकांक्षा को प्रकट करते हुए काल के उस पहिए का जिक्र करते हैं, जो बड़ी क्रूरता से हमें कहीं पटक देता है और हम लाचार होकर वहीं एक निरर्थक दिनचर्या का हिस्सा बनकर अपनी सारी शक्तियों को नष्ट कर देते हैं—

बहुत देर से उम्र को ज्ञान मिलता है
जब पहिया हमें दूर पटक देता है,
नए स्फूर्त जीवन अपनी शक्तियाँ इस चक्र को पिला देते हैं
जो चलता रहता है अनवरत, दिन पर दिन, वर्ष पर वर्ष।
यह केवल है माया का एक खिलौना,
झूठी आशाओं, इच्छाओं और सुख-दु:ख के अरों से बना
यह पहिया

अंत में बहुत आर्त होकर विवेकानंद माँ जगदंबा को पुकारते हैं, ताकि वे निरर्थक यात्राओं, द्वंद्वों और भीषण ताप से बचाकर उन्हें सामने नजर आते किनारे पर पहुँचने में मदद करें—

मैं भटका हूँ, पता नहीं किधर चला जाऊँ
मुझे इस आग से बचाओ,
रक्षा करो दयामयी माँ इन इच्छाओं में बहने से बचाओ
अपना भयावना रौद्रमुख न दिखाओ माँ
यह मेरे लिए असह्य है
मुझ पर कृपा करो, दया करो
माँ, मेरे अपराधों को सहन करो
माँ, मुझे उस तट तक पहुँचाओ
जहाँ ये संघर्ष न हों
इन पीड़ाओं इन आँसुओं और भौतिक सुखों से परे
जिस विराट् की महा को
ये रवि, शशि, उडुगण और विद्युत् भी अभिव्यक्ति न देते,
महज उसके प्रकाश का प्रतिबिंब लिये फिरते हैं
ओ माँ, ये मृगपिपासा भरे स्वप्नों के आवरण
तुम्हें देखने से मुझे रोक न सकें, मेरा खेल खत्म हो रहा है, माँ
ये शृंखला की कड़ियाँ तोड़ो
मुक्त करो मुझे।

कविता में व्याकुल कर देने वाली गहरी तड़प है और एक साधक के रूप में स्वामी विवेकानंद की आर्त पुकार हमारे भीतर हलचल मचा देती है। पर साथ ही, यह जीवन जीते हुए भी जीवन मुक्त होने की प्रेरणा भी देती है।

मूल रूप से बँगला में लिखी गई 'नाचे उस पर श्यामा' विवेकानंद की सर्वाधिक शक्तिमय और बहुचर्चित कविता है। अध्यात्म-पथ के साधक का गहरा अंतर्मंथन है इसमें। इसमें विवेकानंद मानो स्वयं को ही संबोधित कर, अपने आप को फटकारते हुए से कहते हैं—

रे उन्मत्त, भुलाता है तू अपने को, न फिराता दृष्टि,
पीछे भय से कहीं देख तू, भीमा महाप्रलय की सृष्टि।
दु:ख चाहता, बता उसमें क्या भरी नहीं है सुख की प्यास,
तेरी भक्ति और पूजा में चलती स्वार्थ सिद्धि की साँस।
छागकंठ की रुधिर धार से सहम रहा तू भ्रम संचार,
अरे कापुरुष, बना दया का तू आधार— धन्य व्यवहार।
फोड़ो वीणा, प्रेमसुधा का पीना छोड़ो, तोड़ो वीर,
दृढ आकर्षण है जिसमें, उस नारी माया की जंजीर।
बढ़ जाओ तुम उदधि ऊर्मि, गरज-गरज गाओ निज गान,
आँसू पीकर जीना, जाए देह हथेली पर लो जान।

आगे कविता का स्वर उद्बोधन से भरा हुआ है। अगर हम अपने सच्चे स्वरूप को जानें तो क्या सिर पर चक्कर काटते इस जाल को काट नहीं सकते? एक सच्चा साधक भी तो एक सच्चा वीर ही है और सच्चा वीर क्या कभी डरता है—

जागो वीर, सदा ही सिर पर काट रहा है चक्कर काल,
छोड़ो अपने सपने भय क्यों काटो-काटो यह भ्रमजाल।
दुख भार इस भव के ईश्वर, जिनके मंदिर का दृढ द्वार,
जलती हुई चिताओं में है, प्रेत-पिशाचों का आगार।
सदा घोर संग्राम छेड़ना उनकी पूजा के उपचार,
वीर डराए कभी न, आए अगर पराजय सौ-सौ बार।
चूर-चूर हो स्वार्थ, साध सब न हृदय हो महाश्मशान,
नाचे उस पर श्यामा, लेकर घन रण में निज भीम कृपाण।

कविता में दुष्टों के दलन के लिए भीषण रण में हाथों में कृपाण लिये नाचती काली का चित्र हृदय में एक गहरा प्रकंप पैदा करता है। विवेकानंद की इस आवेगपूर्ण कविता में शक्ति और औदात्य का एक चमत्कारी सहमेल-सा है, जिसे पढ़ते हुए रोम खड़े हो जाते हैं। खासकर 'नाचे उस पर श्यामा···!' पंक्ति का प्रभाव इतना गहरा है कि एक बार सुनने के बाद बार-बार मन में नए-नए ढंग से यह कविता गूँजती है। और निश्चित रूप से, एक सच्चे मनुष्य के लिए आत्मिक सहारा भी बनती है।

एक अचरज भरे संसार की छवियाँ

स्वामी विवेकानंद की एक छोटी सी, पर सुंदर कविता 'समाधि' मूल रूप से बँगला में लिखी गई थी। और इसमें गहन मुक्ति-क्षण का वह उदात्त चित्र है, जिसमें सूर्य, चंद्र सभी विलीन हो जाते हैं। एक अचरज भरा संसार जहाँ सूर्य भी नहीं है, 'ज्योति—सुंदर शशांक नहीं, छाया सा व्योम में' यह विश्व नजर आता है।

इसी तरह एक और अपेक्षाकृत छोटी कविता 'जाग्रत देवता' ९ जुलाई, १८९७ को अलमोड़े से एक अमेरिकन मित्र को लिखी गई थी। यह बड़ी उदात्त भावभूमि की कविता है। पर उतनी ही सहज भी। इस कविता में विवेकानंद ने उस देवता की पूजा का आग्रह किया है, जो सब दीवारों और बंधनों से परे है, यहाँ तक कि धर्म के घेरे में भी वह नहीं आता। इसलिए कि वह हर मनुष्य के साथ है और उसके भीतर समाया

हुआ है। एक तरह से विवेकानंद की यह कविता मनुष्य और मनुष्यत्व की प्रतिष्ठा की कविता है, जो बड़े ही सहज शब्दों में सामने आती है—

वह जो तुममें है और तुमसे परे भी
जो सबके हाथों में बैठकर काम करता है
जो सबके पैरों में समाया हुआ चलता है,
जो तुम सबके घट में व्याप्त है
उसी की आराधना करो और
अन्य प्रतिमाओं को तोड़ दो।

स्वामी विवेकानंद की एक और छोटी सी कविता 'प्याला' मूल रूप से अंग्रेजी में लिखी गई थी। कविता प्रतीकात्मक है, हलकी रहस्यात्मकता लिये हुए भी। पर फिर भी, निगूढ़ नहीं। सीधी, सुलझी हुई व्यंजना है। इस संसार में से हर व्यक्ति के हाथ में इच्छाओं का जो कभी न भरनेवाला प्याला है। कविता में उसका बिंब है। सभी उसी प्याले की माया से भ्रमित हैं। इसीलिए ईश्वर तक पहुँचने की राह इतनी कष्टकर और बाधाओं से भरी हुई है। और उससे भी बड़ा सत्य तो यह है कि राह के ये पत्थर स्वयं प्रभु ने रखे हैं, क्योंकि वह चाहता है कि हम मुश्किलों का सामना करना सीखें और यह भी जान लें कि सत्य हमेशा दुर्गम रास्तों पर चलकर ही हासिल होता है—

यही तुम्हारा प्याला है
जो तुम्हें शुरू से मिला है,
नहीं मेरे वत्स, मुझे ज्ञात है
यह पेय घोर कालकूट
वह तुम्हारी मंथित सुरा-निर्मित हुई है
तुम्हारे अपराध, तुम्हारी वासनाओं से
युग, कल्पों, मन्वंतरों से
यही तुम्हारा पथ है कष्टकर बीहड़ और निर्जन
मैंने ही वे पत्थर लगाए जिन्होंने तुम्हें कभी बैठने न दिया।

हालाँकि रास्ता कितना ही दुर्गम क्यों न हो, ईश्वर की करुणा भरी आँख हम पर है और वह चाहता है कि हर बाधा पार करके हम उस तक पहुँचें। हमें उस तक पहुँचना ही होगा, क्योंकि इसके बगैर किसी की मुक्ति संभव नहीं है। हर मान-अपमान में, बगैर यश और गौरव की परवाह किए हमें यह यात्रा जारी रखनी होगी। यों इसका एक आसान तरीका यह भी है कि हम बाहर से अपनी दृष्टि भीतर की ओर फेर लें। अगर आँख बंद करें, तो उस करुणामय को हम अपने सामने पाएँगे। कविता की ये पंक्तियाँ कितनी शीतल और शांतिमयी हैं—

किंतु मेरे वत्स, तुम्हें तो मुझ तक यात्रा करनी ही है
यही तुम्हारा काम है जिसमें न सुख है न गौरव ही मिलता है
किंतु यह किसी और के लिए नहीं, केवल तुम्हारे लिए है
और मेरे विश्व में इसका सीमित स्थान है, ले लो इसे,
मैं कैसे कहूँ कि तुम यह समझो
मेरा तो कहना है कि मुझे देखने के लिए नेत्र बंद कर लो।

अध्यात्म की गहन लोकोत्तर अनुभूति को थोड़े से शब्दों में कैसे बाँधा जा सकता है, यह कविता इसकी मिसाल है।

'शांति' कविता का मिजाज कुछ भिन्न है। विचार से बोझिल नहीं, बल्कि एकदम सीधी-सहज थिराई हुई अभिव्यक्ति। इस कविता में विवेकानंद बड़े सुंदर अल्फाज में सुंदरता, प्रेम, गीत और ज्ञान को व्याख्यायित करते हुए शांति को अंतिम आश्रय बताते हैं, जो जीवन का चरम लक्ष्य है। यह कविता न्यूयॉर्क के रिजले मनर में सन् १८९९ में अंग्रेजी में लिखी गई थी और आज भी बड़ी ताजगी भरी लगती है—

सुंदरता वह है जो देखी न जा सके
प्रेम वह है जो अकेला रहे,
गीत वह है जो जिए बिना गाए
ज्ञान वह है जो कभी जाना न जाए।
जो दो प्राणों के बीच मृत्यु है
और दो तूफानों के बीच एक स्तब्धता है,
वह शून्य जहाँ सृष्टि आती है
और जहाँ वह लौट जाती है,
वहीं अश्रुबिंदु का अवसान होता है
प्रसन्न रूप को प्रस्फुटित करने को,
वही जीवन का चरम लक्ष्य है, और शांति ही एकमात्र शरण है।

कहना न होगा कि शांति यहाँ स्थूल अर्थ में नहीं, बल्कि एक समाधि की अवस्था है। यह वह भावनात्मक क्षण है, जब इंद्रियाँ शांत हो जाती हैं और मन किसी उच्चतर अवस्था में पहुँच जाता है। शांति की इस अवस्था में शून्य से जनमी यह सृष्टि दो तूफानों के बीच की स्तब्धता की तरह, फिर शून्य में लौटती नजर आती है और जीवन की हलचलें थम जाती हैं।

विवेकानंद की एक और सुंदर कविता 'मुक्ति' ४ जुलाई, १८९८ को अमेरिका के स्वतंत्रता दिवस पर लिखी गई थी। उस समय स्वामीजी अपने कुछ अमेरिकी मित्रों के साथ कश्मीर के पर्यटन पर थे। अचानक ४ जुलाई को सुबह उन्होंने अपने अमेरिकी शिष्यों को यह कविता सुनाकर सभी को चकित कर दिया। यह सुंदर कविता बाद में विवेकानंद की एक अनन्य शिष्या और प्रशंसक धीरा माता के पास सुरक्षित रही, और अद्वैत प्रकाशन द्वारा छपे विवेकानंद की कविताओं के संचयन में शामिल है—

ओ देवता, निर्बाध बढ़ो अपने पथ पर
तब तक
जब तक कि यह सूर्य आकाश के मध्य में न आ जाए
जब तक तुम्हारा आलोक विश्व में प्रत्येक देश में फलित न हो
जब तक नारी और पुरुष सभी उन्नत मस्तक होकर यह नहीं देखें

कि उनकी जंजीरें टूट गईं
और नवीन सुखों के वसंत में उन्हें नवजीवन मिला।

यह कोई कम आश्चर्य की बात नहीं कि ४ जुलाई को ही, चार बरस बाद सन् १९०२ में विवेकानंद ने इस ऐहिक जीवन से मुक्ति प्राप्त की और महालोक में समा गए। मानो चार वर्ष पहले ही उन्होंने स्वयं अपना समाधि-लेख लिख लिया हो, जिसमें उनके पूरे जीवन-कार्यों और जीवन-लक्ष्य की एकदम मुकम्मल और सधी हुई अभिव्यक्ति है!

स्वामी विवेकानंद की कई कविताओं में प्रकृति की बड़ी अनुपम और मुग्ध कर देने वाली छवियाँ हैं। 'सागर के वक्ष पर' कविता भी ऐसी ही विलक्षण और चित्रात्मक कविता है, जिसमें आकाश में घुमड़ते मेघदलों का रागमय सौंदर्य है—

नील आकाश में बहते हैं मेघदल
श्वेत, कृष्ण, बहुरंग
तारतम्य उनमें तारल्य का दीखता
पीत भानु माँगता है विदा
जलद रागछटा दिखलाते।

कविता की आखिरी पंक्तियों में सागर की विराटता का भव्य चित्र है। सागर भव्य है। असीम है। शक्तिमय है। अनेक रहस्यों से मंडित, अनेकांत और विशाल भी, जिसमें सबके गीत, लय, ज्योति, रूपराग और सौंदर्य समा जाते हैं—

नीचे सिंधु गाता बहु तान,
महीमान किंतु नहीं वह,
भारत तुम्हारी अंबुराशि विख्यात है
रूपराग जलमय हो जाते हैं
गाते हैं यहाँ किंतु
करते नहीं गर्जन।

'प्रलय अथवा गंभीर समाधि' स्वामी विवेकानंद की एक छोटी सी, लेकिन यादगार कविता है, जिसमें समाधि की सर्वोच्च अवस्था का चित्र है। एक ऐसी निर्विकल्प समाधि, जिसमें सूर्य, चंद्र सब विलीन हो जाते हैं और रह जाती है केवल महा आनंद की अनुभूति। सचमुच एक ऊँचे आध्यात्मिक अनुभव की बड़ी विरल अभिव्यक्ति है यह—

सूर्य भी नहीं है ज्योति सुंदर शशांक नहीं
छाया सा व्योम में यह विश्व नजर आता है,
मनोआकाश अस्फुट भासमान विश्व वहाँ
अहंकार स्रोत ही में तिरता डूब जाता है,
धीरे-धीरे छायादल लय में समाया जब
धारा निज अहंकार मंद गति बहाता है,
बंद वह धारा हुई शून्य में मिला है शून्य
अवाङ्मनसगोचरम, वह जाने जो ज्ञाता है।

जिसे अध्यात्म-जगत् में इंद्रियातीत अनुभव कहते हैं, स्वामी विवेकानंद अपनी भाषा-समाधि के जरिए मानो उसे भी शब्दों में बाँधने का जोखिम उठाते हैं। यों अपने को समेटकर जिस शून्य की अभिव्यक्ति कोई महत्तर योगी करता है, विवेकानंद का कवि उसे बड़ी ही सहज भाषा में व्यक्त कर देता है।

हिंदी-जगत् के लिए यह आनंद की बात है कि स्वामी विवेकानंद ने हिंदी में भी एक प्रगीतात्मक कविता लिखी थी, 'श्रीकृष्ण संगीत'। गीत में गोपिका प्रसंग के व्याज से गहरी भक्ति तन्मयता और बड़ी सुमधुर संगीतात्मकता है। यह लयात्मक रागबद्ध गीत अनायास स्फूर्त जान पड़ता है—

मुझे वारि बनवारी सैयाँ,
जाने को दे,
जाने को दे रे सैयाँ
जाने को दे। (आजपु भला।)
मेरो बनवारी बाँदि तुम्हारी
छोड़े चतुराई सैयाँ,
जाने को दे।
(आजपु भला,
मोरे सैयाँ।)

गीत की आखिरी पंक्तियों में गोपी की मान-मनुहार का पूरा दृश्य है, 'जमुना किनारे भरों गगरिया/जोरे कहत सैयाँ,/जाने को दे।'

इससे यह जरूर पता चलता है कि स्वामी विवेकानंद बँगलाभाषी होते हुए भी हिंदी के महत्त्व को जानते थे, और उसमें अपने भावों को प्रकट कर सकने में निपुण थे। जाहिर है, इस भक्तिमय प्रगीतात्मक कविता का महत्त्व भी इस कारण कहीं अधिक बढ़ जाता है।

रोम्याँ रोला ने स्वामी विवेकानंद के बारे में बड़ी सुंदर बात कही है कि उनका व्यक्तित्व ऐसा विलक्षण करिश्माई था कि वे हर क्षेत्र में सबसे अलग, सबसे आगे नजर आते थे। कहीं भी उनके दूसरे स्थान पर होने की कल्पना करना मुश्किल था। उनके भीतर शक्ति का वह अक्षय स्रोत था कि जहाँ भी वे गए, शिखर पर पहुँचे। इस लिहाज से देखें तो बेशक उनकी कविताएँ भी शब्दों की ऐसी सुंदर भाव समाधि लिये हुए हैं कि उन्हें पढ़ते हुए मन के भीतर से एक गहरी पुकार आती है, कि ऐसी कविताएँ सिर्फ और सिर्फ विवेकानंद ही लिख सकते थे, जिनका पूरा जीवन ही एक भावनात्मक समाधि की तरह है।

स्वामी विवेकानंद पराधीनता की पीड़ा और अपमानों से व्यथित भारतीय जनता में एक नया आत्मविश्वास जगाने के लिए आए थे। और उनकी कविताएँ भी, जो शक्ति के विस्फोट की तरह हैं, हमें अपने आपको पहचानने और पूर्ण शख्सियत हासिल करने के लिए ललकारती हैं। शायद इसीलिए विवेकानंद की कविताओं को पढ़े बिना उनकी शक्ति के उद्गम और गहरी आध्यात्मिक विकलता को समझा ही नहीं जा सकता।

५४५ सेक्टर-२९, फरीदाबाद-१२१००८ (हरियाणा)
दूरभाष : ०९८१०६०२३२७

नाटक

● रामदरश मिश्र

भुवन वर्मा अपनी कार से जा रहे थे। सामने एक लड़की आ गई। उसे हलका सा धक्का लगा और वह भहराकर गिर पड़ी। वार्माजी ने कार से उतरकर उसे उठाया और बोले, ''चोट लग गई है?'' लड़की ने कहा, ''हाँ।'' वर्माजी उसे डॉक्टर के पास ले गए। लड़की ने बताया कि उसके पाँव में काफी चोट लगी है। डॉक्टर ने पट्टी की, इंजेक्शन लगाया और कहा, ''सब ठीक है, कुछ भी सीरियस नहीं है।''

लड़की लँगड़ाकर चलने लगी। वर्माजी ने पूछा, ''कहाँ रहती है, चलिए, वहाँ छोड़ देता हूँ।''

लड़की कराहती हुई सी बोली, ''मैं तो दूसरे शहर की हूँ, यहाँ यूनिवर्सिटी हॉस्टल में रहती हूँ।''

''तो चलिए, वहाँ छोड़ देता हूँ।'' वर्माजी ने कहा।

''वहाँ मेरी देख-देख कौन करेगा? अभी तो ठीक से चल नहीं पा रही हूँ।'' लड़की बोली।

''तो क्या करूँ? आपको कहाँ छोड़ूँ?''

''ऐसा कीजिए, कुछ दिन अपने यहाँ रहने दीजिए। पाँव को आराम पड़ते ही मैं हॉस्टल चली जाऊँगी।''

वर्माजी ने कहा, ''कोई बात नहीं, कुछ दिन मेरे यहाँ रह लीजिए। आपका नाम क्या है?''

''कोकिला, कोकिला नाम है मेरा। मुझे अब इसी नाम से पुकारिएगा।''

कोकिला वर्माजी के यहाँ रहने लगी। लँगड़ाकर चलती थी। दिखा रही थी कि अभी ठीक नहीं हुई; और सब तो ठीक, किंतु अब वह श्रीमती वर्मा पर हुकुम चलाने लगी—'चाय लाओ, यह लाओ, वह लाओ।' लड़की पति की कार से घायल हुई है, यह जानकर श्रीमती वर्मा उसकी आज्ञा का पालन कर देती थीं।

कोकिला एक ओर श्रीमती वर्मा से यह व्यवहार कर रही थी, दूसरी ओर वर्माजी पर डोरे डाल रही थी। अजीब अदा से मुसकराकर वर्माजी से बातें करती थी।

एक दिन श्रीमती वर्मा ने अकेले में उसे सहज भाव से चलते देख लिया। वे समझ गईं कि यह लड़की लँगड़ाकर चलने का नाटक करती है। उन्होंने वर्माजी को बताया। वर्माजी समझ गए कि मेरे घर में रहने का इसका यह बहाना है।

उस दिन सवेरे-सवेरे वर्माजी ने कहा, ''कोकिला, तुमने बहुत नाटक कर लिया, अब अपने छात्रावास चली जाओ।''

कोकिला बोली, ''अब मैं यहीं रहूँगी। सबसे कह दूँगी कि आप मुझे भगाकर लाए हैं और मेरे साथ पति जैसा व्यवहार करते रहे हैं।''

''ठीक है, कोकिला मैडम, मैं पुलिस बुलाता हूँ, उसके सामने जो कहना है, कह दीजिएगा। आप जानती नहीं, मैं बैंक मैनेजर हूँ।''

वर्माजी ने पुलिस बुलाने के लिए ज्यों ही फोन पर हाथ रखा, कोकिला ने उनका हाथ पकड़ लिया। उसे मालूम था कि पुलिस उसे पहचानती है। उसे देखते ही कहेगी, 'अच्छा, तू यहाँ भी डोरे डालने पहुँच गई। चल, थाने में ही डोरे डालना।'

वह बोली, ''ठीक है, मैं हॉस्टल जा रही हूँ।''

वह चली गई। वर्माजी ने जोर का ठहाका लगाया और बुदबुदाए, 'ठगी के कितने-कितने तरीके ईजाद कर लिए गए हैं।'

श्रीमती वर्मा खड़ी-खड़ी मुसकरा रही थीं।

आर-३८, वाणी विहार
उत्तम नगर, नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ०९२११३८७२१०

हिंदी के मूर्धन्य कवि-साहित्यकार, जिन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं को अपने रचनात्मक अवदान से समृद्ध किया। 'जल टूटता हुआ' और 'पानी के प्राचीर' उपन्यासों की धूम रही। अभी हाल में कविता-संग्रह 'आम के पत्ते' व्यास सम्मान से अलंकृत। इसके अतिरिक्त अनेक विशिष्ट सम्मानों से सम्मानित।

भूल-सुधार

'साहित्य-अमृत' के जनवरी-२०१७ लघुकथा विशेषांक में पृष्ठ उनतीस पर प्रकाशित लघुकथाएँ 'फकीरा' व 'राजनीति की संवेदना' श्री नंदल हितैषी की हैं। भूलवश वहाँ वरिष्ठ लेखक श्री रामदरश मिश्र का नाम तथा परिचय प्रकाशित हो गया है। हमें इसका खेद है।

—संपादक

लंदन में भारत की खुशबू

● मृदुला सिन्हा

यों तो एयर इंडिया के फ्लाइट से अमेरिका जाते हुए लंदन के हिथ्रो एयरपोर्ट पर दो-दो घंटे ठहरने का अवसर दो बार मिला था। १९९९ में विश्व हिंदी सम्मेलन लंदन में ही आयोजित हुआ। उस सम्मेलन की सलाहकार समिति की सदस्य होने के नाते मेरी भी भागीदारी हुई। तीन दिनों तक लंदन में प्रवास रहा। अधिकतर समय भारतीयों से ही घिरी रही। लंदन घूमने का भी अवसर नहीं मिला। इस बार जब छह महीने पूर्व विदेश मंत्रालय की ओर से पत्रिका 'प्रवासी संसार' के द्वारा आयोजित कार्यक्रम में लंदन जाने का निमंत्रण आया, मैंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। लंदन और उसके आसपास के शहरों को देखने की भी उत्सुकता जगी। किसी कार्यक्रम में पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री केशरी नाथ त्रिपाठीजी से भेंट हुई। मैंने उन्हें अपने लंदन के कार्यक्रम की सूचना दी। वे पिछले पंद्रह वर्षों से यू.के. के अनेक शहरों में भारतवंशियों द्वारा आयोजित कवि-गोष्ठियों में भाग लेते रहे हैं। कई शहरों के लोगों से उनका आत्मीय संबंध बन चुका है। उन्होंने तुरंत कहा, ''मैं कुछ लोगों को फोन कर देता हूँ। आपके लिए कार्यक्रम का आयोजन कर देंगे। आपका घूमना भी हो जाएगा।''

उसी दिन शाम को कोलकाता पहुँचकर उन्होंने दूरभाष पर सूचना दी। उनकी बात लिवरपुल (बड़ा शहर) निवासी श्रीमती वीणा सिंह से हुई। वीणा सिंह ने तत्काल मेरा सम्मान करने का सुझाव स्वीकार कर लिया। त्रिपाठीजी ने अति प्रसन्न होकर मुझे सूचना दी, ''वीणा सिंह आपको जानती हैं। वे भी बिहार की हैं। वे बहुत खुश हैं। आपके आगमन की सूचना उन्होंने कई भारतवंशियों, विशेषकर बिहार से गए लोगों को दी है। वे सब आपके स्वागत के लिए तैयार हैं। एक कार्यक्रम का भी आयोजन करेंगे। वीणा सिंह को आपका नंबर दे दिया है, वे आपसे बात करेंगी।'' इधर मेरी भतीजी अनुपमा कुमार ज्योति को भी मेरे लंदन प्रवास की सूचना मिल गई थी। वह लंदन में ही रहती है। कविता करती है। यू.के. पत्रिका के संपादकीय समूह से भी जुड़ी है। कंजरवेटिव पार्टी की सक्रिय सदस्य है। वह अकसर कहा करती है, ''फुआ, मैं ही आपकी असल भतीजी हूँ। आपके द्वारा अपने वंश का अंश मेरे अंदर भी आया है।'' उसकी खुशी का पारावार नहीं था।

लंदन जाने का समय नजदीक आता गया और पता नहीं क्यों, मेरा मन वहाँ जाने से उचटने लगा था। जाऊँ या न जाऊँ, इस दुविधा में आ गई थी। वीणा सिंह और अनुपमा के उत्साह के मुरझाने की चिंता हो आई। जाना तय किया। वीणा सिंह ने दूरभाष पर सूचना दी, ''मैं तो भारत जा रही हूँ, लेकिन आप चिंता न करें। यहाँ आपके स्वागत और मिलन की व्यवस्था मेरी अनुपस्थिति में भी बहुत आत्मीयतापूर्ण होगी। आपके शहर

सुप्रसिद्ध कथाकार। कहानी और उपन्यासों के अलावा मृदुलाजी बदलते भारतीय परिवेश में महिलाओं के समक्ष उपस्थित सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक समस्याओं पर निरंतर लिखती रही हैं। अनेक रचनाएँ मराठी और अंग्रेजी में भी अनूदित। 'पाँचवाँ स्तंभ' मासिक का संपादन। संप्रति गोवा की राज्यपाल।

(मुजफ्फरपुर, बिहार) के भी कई डॉक्टर्स यहाँ हैं। वे सब आपसे मिलने के लिए बहुत उत्सुक हैं।'' मेरे ए.डी.सी. श्री समीर ने उन लोगों से दूरभाष पर संपर्क साधना शुरू किया। लिवरपुल में डॉ. एम.ए. सिद्धिकी और डॉ. मे. अजय शर्मा से बात होती रही। अंतत: मैं १४ नवंबर की सुबह एयर इंडिया के विमान से हिथ्रो एयरपोर्ट पर पहुँची। हमारे स्वागत में वहाँ हाई कमीशन के प्रोटोकॉल ऑफिसर एम.एस. मेघनाथन एवं फर्स्ट सेक्रेटरी (एंबेसी) सरदार एम.पी. सिंह उपस्थित थे। साहित्यकार सुश्री जाकिया जुवेरी भी वहाँ उपस्थित थीं। हम लोग एयरपोर्ट से बाहर निकले। हमें सूचना थी कि किसी खाली घर में हमें ठहराया जाएगा तथा एक भारतीय रसोइया भी साथ में रहेगा। लेकिन जब हम निश्चित घर पर पहुँचे तो उस घर के मालिक श्री ऋषिपाल सिंह और उनके बेटे ने हमारा स्वागत किया। अपने ड्राइंग-रूम में हमें बैठाया। मैं सोचने लगी, ''कहा तो यह गया था कि खाली घर होगा। थोड़ी देर में वे हमें ऊपर (प्रथम तल) लेकर गए। मैंने उनसे पूछा, ''कुक कहाँ है?'' उन्होंने बहुत विनम्रता से कहा, ''आप जो कहेंगी, जब कहेंगी, भोजन मिल जाएगा।'' मैं समझी नहीं। पूछताछ से पता चला कि भोजन भी वही सज्जन और पड़ोस की उनकी आंटी बनानेवाली थीं। मुझे अच्छा नहीं लगा। ऋषिपाल सिंह, उनका बेटा और पड़ोस की आंटी बहुत ही आत्मीयतापूर्वक हमसे मिल रहे थे। लेकिन मैं उन्हें भोजन बनाने और अन्य चीजों के लिए बार-बार कष्ट देना नहीं चाहती थी। हम लोग ताज होटल आ गए। जहाँ उनके मैनेजर मोहित वर्मा ने हमारा स्वागत किया। श्री पंकजजी, जो गुजरात के हैं, लेकिन तीन पीढ़ियों से वहीं हैं, स्वयं ड्राइव कर रहे थे। अगले चार दिन हमारे साथ रहनेवाले थे।

दूसरे ही दिन १५ तारीख को लिवरपुल जाना था। हमारे लिए रेल टिकट पहले से तैयार थे। विदेश के कई देशों में कई बार जाना हुआ है। लेकिन ट्रेन से यात्रा करने की मेरी इच्छा पूरी नहीं हुई थी। हम ट्रेन में सवार हुए। बहुत ही साफ-सुथरा, मनमोहक, सुविधा-संपन्न कोच था। मेज और कुरसी की व्यवस्था थी। हम चार लोग एक मेज पर बैठे। गाड़ी

चलने लगी। थोड़ी ही देर पर ग्रामीण क्षेत्र दिखने लगा। मुझे बहुत सुखद लग रहा था। बीच में ही एक स्टेशन जो शेक्सपियर का गाँव है, एस्ट्रैटफोर्ड मिला। रेलगाड़ी में बैठे-बैठे ही मैंने उस भूमि को नमन किया। गाड़ी आगे बढ़ती गई। खेत-खलिहान, घोड़े, भेंड़, गायें और भी जानवर दिखने लगे। अधिकांश घर फार्म हाउस की तरह ही थे। अच्छा लग रहा था लंदन के गाँव देखना।

हमारे साथ बैठा राहुल (हमारा सेवक) बिहार के अपने गाँव से उन गाँवों की तुलना कर रहा था। बीच में ट्रेन बदलनी पड़ी। दो घंटे और कुछ मिनटों में हम लिवरपुल स्टेशन पर पहुँच गए। वहाँ स्टेशन पर डॉ. मेजर अजय शर्मा हमें लेने आए थे। हमारे गाड़ी में बैठते ही उन्होंने लिवरपुल के बारे में बताना प्रारंभ कर दिया। बातों-बातों में वे यह भी कह गए कि उनकी पत्नी डॉ. बॉबी ने उन्हें हमें सबकुछ दिखाने के लिए कहा था। अजय शर्माजी मुझे एक-एक भवन के बारे में बताते नहीं थक रहे थे। उनकी बातों से जाहिर था कि वे पत्नीभक्त हैं। मेरे लिए यह प्रसन्नता की बात थी। सबसे पहले उन्होंने लिवरपुल हार्बर (बंदरगाह) दिखाया, जिसे अल्बर्ट डॉक कहा जाने लगा था। वह १६वीं शताब्दी में मर्सी नदी की खुदाई करके बनाया गया था, ताकि पानी का जहाज आ सके। पोर्ट ऑफ लिवरपुल १२ किलोमीटर लंबा बनाया गया। १७१५ में बना लिवरपुल डॉक, फिर लिवरपुल बना। बहुत दूर में फैला है उसका दायरा। ढेर सारे भवन हैं। एक-एक भवन की विशेषताएँ बता रहे थे मेजर अजय शर्मा। हमें जल्दी थी अपने गंतव्य स्थान पर पहुँचने की, उन्हें नहीं।

लंदन में मृदुला सिन्हाजी

गाड़ी आगे बढ़ाते हुए उन्होंने कहा, ''आपको वीणा सिंह के घर पर ही ठहरना है। वहीं पर केशरीनाथ त्रिपाठीजी भी ठहरते हैं।'' शहर के प्रमुख स्थानों को देखते हुए हम वीणा सिंह के घर पहुँचे। एक बड़े हाते में बड़ा सा मकान। वहाँ डॉ. एम.ए. सिद्धिकी, उनकी श्रीमती डॉ. साइदा (एक सहृदय लद्दाखी महिला), डॉ. कमलकांत झा और उनकी पत्नी रीता झा उपस्थित थीं। मानो वे सब उसी घर के बाशिंदे हों। वीणा सिंह ने दूरभाष पर कहा था, 'मेरी अनुपस्थिति में भी आपको मेरी कमी नहीं खलेगी।' वैसा ही हुआ। हमने चाय ली और मेरे ही सम्मान के लिए आयोजित रात्रिभोज के कार्यक्रम के लिए हम चल दिए। पता चला कि वह डॉ. सिद्धिकी का ही रेस्टोरेंट 'मयूर' था। वहाँ पर करीब डेड़ सौ लोग उपस्थित थे। अधिकांश लोग एक-एक कर या जोड़ियों में मुझसे मिलने आते गए। सबके सब बिहार या भारत में छोड़ आए अपने गाँव का पता बताना नहीं भूलते थे। महिलाओं का लिवास ऐसा, मानो उसी दिन बिहार के किसी गाँव-शहर या भारत से आई हों। कुछ लोग मुझसे अपनी पहचान बनाकर बहुत हर्षित हो रहे थे। श्री वी.के. सिंह और रेणू सिंह की जोड़ी से मेरी जाति का भी संबंध निकल आया। फिर क्या था, सोने में सुहागा। उनकी खुशी का ठिकाना नहीं था।

कुछ सांस्कृतिक कार्यक्रम महिलाओं और पुरुषों ने भी साथ-साथ रखा था। भारतीय कलाओं और यहीं के सिनेमा गीतों पर आधारित। फिर सहभोज प्रारंभ। बुफे था। लेकिन हम दोनों के लिए थाली में खाना लगाकर हमारे टेबल पर ला दिया गया। मेरा संक्षिप्त भाषण था। लेकिन लोगों ने बहुत पसंद किया। दूसरे दिन सुबह डॉ. सिद्दिकी के घर हमारा नाश्ता था। श्री अजय शर्मा और उनकी पत्नी डॉ. बॉबी उपस्थित थीं। नाश्ते की मेज पर सभी लोग अपने हृदय के भाव प्रगट कर रहे थे। नाश्ते के पदार्थों से भी अधिक स्वाद और मिठास थी उन बातों में। मानो किसी स्त्री के मायके से कोई आया हो। अपरिचित परिचित ही नहीं घनिष्ठ हो गया हो।

विदा की घड़ी आ गई। स्टेशन के लिए रवाना होना था। आँखें भरी न भरी, मन भर आया था सबका। मिसेज रीता झा ने छोटी सी पोटली में सिंदूर और बिंदी रखकर मेरे अचल सौभाग्य की कामना के साथ भेंट किया। मानो दरभंगा जिले के किसी गाँव में अपने दरवाजे से मुझे विदा कर रही हों। पुन: हम उसी ट्रेन से लंदन पहुँच गए। लंदन स्टेशन पर मेघनाथन हमारे स्वागत में उपस्थित थे। बाहर निकलने पर चालक पंकज।

शाम का कार्यक्रम अनुपमा ने आयोजित किया था। कार्यक्रम स्थल पर पहुँचने में एक घंटे की यात्रा दो घंटे में पूरी की। अनुपमा ने मेरी साहित्यिक यात्रा का वर्णन सुनने के लिए पच्चीस नव लेखक-लेखिकाओं को बुलाया था। हम वहाँ पहुँचे जहाँ साहित्यकार तेजेंद्र शर्मा उपस्थित थे। बीस-पच्चीस महिला-पुरुष भी उपस्थित थे। विषय था, 'साहित्य सृजन कैसे और क्यो?' मैंने अपना अनुभव सुनाया। अनुपमा ने अपने घर पर भोजन रखा था। हमें देर हो रही थी, इसलिए जितना समय और सान्निध्य उसे देना था, उतना नहीं दे पाई। उसकी बिटिया तो थी, पर उसके पति दफ्तर से नहीं आ पाए और हम लोग वहाँ से विदा हो गए। अनुपमा का मन नहीं भरा। मेरा भी नहीं।

१७ तारीख को सायंकाल हाउस ऑफ कॉमन्स में एक साहित्यिक कार्यक्रम आयोजित था, जिसके लिए मैं आमंत्रित थी। लंदन के भव्य पार्लियामेंट के 'हाउस ऑफ कॉमन्स' में हमें जाना था। उस कार्यक्रम में हिंदुस्तान के ही प्रवासी स्त्री-पुरुष, जो हिंदी में लिखते हैं, हिंदी पढ़ते हैं, भारत से नजदीक का संबंध बनाए हुए हैं, उन्हें सम्मानित किया गया। पत्रिका 'प्रवासी संसार' के दस वर्ष पूर्ण होने पर वह कार्यक्रम आयोजित था। श्री तेजेंद्र शर्मा उसका संचालन कर रहे थे। हाउस ऑफ कॉमन्स के एक सदस्य, मेंबर ऑफ पार्लियामेंट श्री वीरेंद्र शर्मा भी वहाँ उपस्थित थे। उनका परिचय देते हुए डॉ. तेजेंद्र शर्मा ने कहा कि लंदन में हिंदी प्रेमियों

एवं साहित्य साधकों को प्रोत्साहन देने एवं सहायता करने में शर्माजी की बड़ी भूमिका रहती है। 'प्रवासी संसार' के संपादक श्री राकेश पांडे ने पत्रिका की दस वर्षीय यात्रा का वर्णन किया। अनुपमा भी सम्मानित हुई।

भारत में पिछले दो वर्षों से कहीं भी जाऊँ, विशेष सुरक्षा-व्यवस्था रहती है। मेरी नहीं, राज्यपाल की। लेकिन लंदन जाकर स्वच्छंद हो गई थी। इसलिए तो अनुपमा के साथ मॉल में जाकर कुछ खरीदारी की। 'लंदन आई' को दूर से देखकर अपने बचपन की स्मृति जाग्रत् हो गई। मेला या प्रदर्शनी देखने जाने पर इस तरह के घुमावदार झूले पर चढ़ने की जिद्द किया करती थी। वहाँ भी मैं नहीं, मेरी भतीजी अनुपमा मचल उठी, ''फुआ! छह वर्षों से लंदन में हूँ। आज तक 'लंदन आई' पर नहीं चढ़ी। इस पर चढ़ाने के लिए कोई फुआ, चाची, बाबा तो होने चाहिए।''

फिर क्या था, फुआ को मेला घूमने का एहसास हुआ और भतीजी को लंदन आई पर चढ़ाना ही था। टेम्स नदी के किनारे ही है वह लंदन आई। ऊँचाई पर जाकर लंदन देखा। रानी एलिजाबेथ द्वितीय की सुरक्षा में लगे सुरक्षा कर्मियों की परेड भी देखी। मैडम तुसाद म्यूजियम में मोम की बनी एक-एक आकृतियों की मनमोहक सजीवता ने अपने पास विलमाया। अमिताभ बच्चन, रानी एलिजाबेथ द्वितीय, इंदिरा गांधी और अपने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की आकृतियों के साथ तस्वीरें खिंचवाई।

पार्लियामेंट हाऊस की छत पर बहुत ऊँचाई पर स्थित घड़ी 'विग बेन' की शोभा निराली है। लंदनवासियों को जिन वस्तुओं पर नाज है, उनमें एक है यह। शेक्सपीयर के गाँव न जाने का अवश्य मलाल रह गया।

इंडिया हाऊस (दूतावास) में जाना भी सुखद लगा। वहाँ के डिप्टी हाई कमिश्नर श्री दीनेश के. पटनायक ने बताया कि लंदन में भारतीयों के आठ सौ से अधिक सामाजिक और सांस्कृतिक रजिस्टर्ड संगठन हैं। वे अपने कार्य करते रहते हैं। अधिकतर संस्थाओं के सदस्य हिंदी में ही बातचीत करते हैं।

१९ नवंबर को वापसी थी। लंदन में पाँच दिन रहकर छठे दिन लौट रही थी। एक-एक दिन बहुत ही व्यस्त रहा। लंदन शहर के मकानों का भव्य और सिलसिलेवार विशेष शिल्प मन को भा गया था। साफ-सफाई भी उत्तम। उन भव्य इमारतों और विशेष बनावटों में मन नहीं उलझा। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि लंदन में बसे भारत घूमकर आ रही हूँ। भारतीयों के संग उठ-बैठ और गपियाकर। खान-पान, रहन-सहन, बात-विचार ही हिंदुस्तानी नहीं, भाषा भी हिंदी। व्यवहार ऐसा मानो अपनेपन के पाग में डुबोया हुआ पकवान का रसास्वादन कर रहे हों।

सबसे बड़ी विशेषता कि भारत सरकार की उपलब्धियों और समाज की एक-एक गतिविधियों की चर्चा। प्रधानमंत्री द्वारा लिये जा रहे निर्णयों की तहेदिल से प्रशंसा। भारत बदल रहा है, इसकी प्रसन्नता। मानो वे लंदन में नहीं, भारत में रह रहे हों। या लंदन के उन हिस्सों को भारत ही बना रखा है, जहाँ वे रहते हैं। उन्होंने न अपना गाँव भुलाया है, न देश। न बचपन के वे दिन, न खेत-खलिहान। लंदन में रहकर भी अपनी मिट्टी से जुड़े रहने का सारा सरजाम कर रखा है। आपस में भाषा हिंदी ही बोलते हैं।

अब लंदन दूर नहीं, सुनती आ रही हूँ। देखकर आई। सात समंदर पार जाकर भी अपनी मिट्टी की सुगंध सँजोए रखना आसान नहीं। सुखद यात्रा स्मरणीय रहेगी।

राजभवन, गोवा

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

पुण्यतिथि (11 फरवरी) पर विशेष

पं. दीनदयाल उपाध्याय

काया दुर्बल, सबल आत्मबल

● राजेंद्र अरुण

मेरा संघ कार्य से संपर्क १९६२ में आया। उसी वर्ष के संघ शिक्षा वर्ग में प्रथम वर्ष के प्रशिक्षण के लिए प्रयाग गया था। अपने प्रखर चिंतन के लिए बहुचर्चित पंडित दीनदयालजी से मिलने की अभिलाषा ही स्वयंसेवक की थी। वे संघ कार्य के आदर्श पुरुष थे। उनके व्यक्तित्व में शंकराचार्य की मेधा, बुद्ध की करुणा और विवेकानंद की तार्किकता का अनुपम समन्वय था।

(२५-९-१९१६—११-२-१९६८)

उन दिनों संघ सर्किल में दीनदयालजी को लेकर एक मृदु-मधुर चुटकुला प्रचलित था। संघ की अखिल भारतीय बैठकों में संघ के प्रचार प्रमुख मान. बाबा साहेब आप्टे दीनदयालजी से कहा करते थे पंडितजी। अमुक विषय पर पक्ष में यदि विचार देना हो तो क्या तर्क दिए जाने चाहिए। दीनदयालजी समस्या का गहन विवेचन करके पक्ष में अनेक तर्क देते।

अपने मृदु-मधुर हास से सभागार को आलोकित करते हुए बाबा साहेब फिर पूछते—पंडितजी, यदि हमें इस समस्या के विरुद्ध जाना हो तो क्या तर्क होना चाहिए। दीनदयालजी अनेक तर्कों से विषय का विश्लेषण करते हुए उसके विरुद्ध अनेक तर्क प्रस्तुत करते। वातावरण आनंद-हास से भास्वर हो उठता।

□

१९६४ में कानपुर के संघ शिक्षा वर्ग में मैं द्वितीय वर्ष का प्रशिक्षण लेने आया था। दीनदयालजी अपने सामाजिक, राजनीतिक चिंतन के प्रारूप को समझा रहे थे, जिसे उन्होंने 'एकात्म मानववाद' नाम दिया था। बैठक में एक स्वयंसेवक ने कहा—एकात्म मानववाद को आसानी से कैसे समझाया जा सकता है? दीनदयालजी ने कहा—मैं संघ की भाषा में समझाता हूँ। जीवन के चार मोहरे हैं—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, हमें चारों का खयाल रखना चाहिए, जो मोहरा कमजोर हो। उस पर टूट पड़ना चाहिए।

परमपूज्य गुरुजी दीनदयालजी को बहुत प्यार करते थे। जब भी एकात्म मानववाद को दीनदयालजी समझाते, गुरुजी ध्यान से सुनते। १९६५ में मैं संघ का तृतीय वर्ष का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए नागपुर में था। बंगाल के एक स्वयंसेवक से गुरुजी ने पूछा—किसका बौद्धिक अच्छा लगा। स्वयंसेवक ने कहा, दीनदयालजी का। गुरुजी स्नेहसिक्त वाणी में बोले—उनकी बात मत करो। हमारे बीच वे ही तो प्रचारक और विचारक दोनों हैं।

□

१९६६ में वाराणसी में आयोजित संघ शिविर में श्रीगुरुजी ने दीनदयालजी के समर्थन में परम आत्मीय व्याख्यान दिया, उन्होंने कहा लोग कहते हैं कि जनसंघ मेरी कृपा कटाक्ष पर जीता है। मैं कहता हूँ, हाँ। जनसंघ का कार्य मैंने एक ऐसे व्यक्ति को दिया, जिसे मैं लौट आने को कहूँ तो वह गंगा नहाएगा और सत्यनारायण की कथा सुनेगा, और फिर कहेगा कि आपने मुझे नर्क जाने से बचा लिया।

दीनदयालजी और अटलबिहारी वाजपेयी के जीवन को संघ समर्पित करने में भाऊराव देवरस का बड़ा हाथ है। एक बार लखनऊ से प्रकाशित 'राष्ट्र धर्म प्रकाशन' को घाटे पर चलने के कारण व्यवस्थापकों को बंद करने की सलाह बाबूराव को दी गई। उन्होंने दीनदयालजी से प्रकाशन की स्थिति देखने के लिए कहा।

दीनदयालजी ने बैठक ली। सभी ने बंद करने की सलाह दी। दीनदयालजी ने कहा—बंद करने में समर्थ है। किंतु उन्होंने देखने को कहा, इसका मतलब है कि भाऊराव चाहते हैं कि प्रकाशन चले। दीनदयालजी भारतीय संस्कृति कोष की स्थापना की। धन-संग्रह करके प्रकाशन को चलाया गया।

□

दीनदयालजी अपने ममेरे भाई से मिलने के लिए आगरा जानेवाले थे। उन्होंने फोन से आने की सूचना दे दी। संयोगवश उन्होंने एक दिन जाने का कार्यक्रम बना लिया। वे अचानक आगरा पहुँच गए। उन्हें देखकर परिवार के लोग रोने लगे। दीनदयालजी चकित थे। उन्होंने पूछा, क्यों रो रहे हो? परिवारजनों ने बताया—आप तो कल आनेवाले थे। जनसंघ के कार्यकर्ताओं ने रेलवे स्टेशन पर आपके भव्य स्वागत की तैयारी की है।

दीनदयालजी ने कहा—चिंता मत करो। मैं अटलबिहारी वाजपेयी नहीं हूँ। मुझे कोई जानता नहीं। मैं कल दस मिनट पहले स्टेशन पहुँच जाऊँगा। आप मेरा स्वागत वहाँ कर दीजिएगा।

□

दीनदयालजी के जीवन का एक प्यारा चुटकुला है। मैं स्टेशन पर ट्रेन का इंतजार कर रहा था। एक सज्जन ने आकर नमस्कार किया। मैंने भी सप्रेम नमस्कार किया। वे सज्जन कुछ देर मेरे पास खड़े रहे। फिर बोले—आपने मुझे पहचाना? पिछले महीने आप मेरे घर आए थे। मैंने न पहचानने के लिए क्षमा माँगी। इतने में उन सज्जन का कोई नेता आया, उन्होंने जोर से उसे पुकारा—अरे भाई, आओ, मिलो, ये संघ के बड़े नेता श्री अटलबिहारी वाजपेयी हैं।

□

दिल्ली स्टेशन पर कहीं जाने के लिए दीनदयालजी ट्रेन का इंतजार कर रहे थे। उसी ट्रेन से संघ के कुछ कार्यकर्ता भी जा रहे थे। दीनदयालजी प्रथम श्रेणी में और कार्यकर्ता तृतीय श्रेणी के थे। कार्यकर्ताओं के साथ यात्रा का मोह-संवरण न कर पाने के कारण उन्होंने कहा, मैं भी आप सबके साथ यात्रा करूँगा।

कार्यकर्ताओं ने कहा, तृतीय श्रेणी में भीड़ होती है, घुसना कठिन होता है।

दीनदयालजी ने कहा—आप मुझे खिड़की से खींच लेना। आपने मुझे राजनीति में भेजा है। राजनीति में राजद्वार नहीं मिलता है। वहाँ खिड़की से घुसकर राजद्वार खोलना पड़ता है। सभी कार्यकर्ता हँस पड़े।

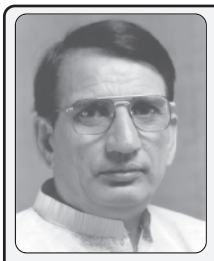

सुप्रसिद्ध रामकथा मर्मज्ञ एवं 'रामायण सेंटर' के संस्थापक। सन् १९७३ में मॉरीशस गए और वहाँ के तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. सर शिवसागर रामगुलाम के हिंदी पत्र 'जनता' के संपादक बने। वहाँ रहते हुए 'समाचार' यू.एन.आई. और 'हिंदुस्तान समाचार' जैसी न्यूज एजेंसियों के संवाददाता के रूप में काम तथा रामकथा से संबंधित दर्जनभर पुस्तकों का प्रणयन।

सन् १९८३ से रेडियो, टेलीविजन, प्रवचन और लेखन के माध्यम से रामायण के प्रचार-प्रसार में संलग्न। रामायण सेंटर, मॉरीशस के अध्यक्ष।

साअ

अध्यक्ष, रामायण सेंटर
यूनियन पार्क, रॉयल रोड
मॉरीशस
इ-मेल : ramayanacentre@yahoo.com

पं. दीनदयाल उपाध्याय के प्रेरक विचार

माता-पुत्र जैसा हो जन और राष्ट्र का संबंध

''इस 'भूमि' और 'जन' का माता और पुत्र जैसा संबंध होना राष्ट्र के लिए अनिवार्य है। उसी भूभाग में दूसरे ऐसे लोग रह सकते हैं जो उस भूमि को अपनी मातृभूमि न मानकर और कुछ मानें। जैसे अंग्रेज जब भारत में राज करते थे तब उनकी मातृभूमि इंग्लैंड थी, भारत को केवल भोगभूमि समझते थे, ऐसे सब लोग उस भूमि पर आक्रमणकारी ही माने जाएँगे। जो स्वयं को पुत्र रूप अनुभव नहीं करते, जो रहते तो इस भूमि पर हैं, किंतु जिन्हें सपने अन्य किसी भूमि के आते हैं; जिनके श्रद्धा-केंद्र इस भूमि के बाहर हैं या जो इस भूमि के बाहर से प्रेरणा ग्रहण करते है। ऐसे सब लोग इसी भूमि की जलवायु में जन्मे, पले और बढ़े हुए होने पर भी 'एक-जन' से कटे हुए हैं। उन्हें भी जब तक भूमि की ममता से एकरस नहीं किया जाता, तब तक वे विघातक तत्त्व ही कहलाएँगे।''

❧❖❧

'मैं' नहीं 'हम' है मजबूत राष्ट्र का मंत्र

''प्रत्येक व्यक्ति 'मैं' और 'मेरा' विचार त्यागकर 'हम' और 'हमारा' विचार करे। अन्यथा कई बार देखा जाता है कि व्यक्ति कहता है कि राष्ट्र के लिए जान हाजिर है और जीवन में सब कार्य व्यक्ति का विचार कर ही करता रहता है। इसमें न व्यक्ति का भला है और न ही समष्टि का। वास्तव में समष्टि के लिए कार्य करना यानी धर्माचरण करने की शिक्षा होती है। उसमें भी संस्कार डालने होते हैं। इन संस्कारों को प्रदान करना ही राष्ट्र का संगठन करना है।''

❧❖❧

राष्ट्र का वास्तविक स्वरूप 'चिति'

''राष्ट्र का वास्तविक स्वरूप समझने के लिए उस मूल तत्त्व की ठीक-ठीक पहचान करनी होगी, जिसके आविर्भाव से राष्ट्र का उदय होता है, जिसके कारण राष्ट्र की धारणा होती है और जिसके क्षीण पड़ने से राष्ट्र विनाश की ओर अग्रसर हो जाता है। यह मूल तत्त्व है—राष्ट्र की प्रकृति जिसे शास्त्रीय ढंग से 'चिति' नाम से संबोधित किया गया है। चिति वह मानदंड है जिससे हर वस्तु को मान्य अथवा अमान्य किया जाता है।''

❧❖❧

(मैं दीनदयाल उपाध्याय बोल रहा हूँ से साभार)

कहानी

काल-दंश

● ऋता शुक्ल

कथा उपनिषद् की है। ऋषि उद्दालक के पुत्र नचिकेता ने यमराज से कई प्रश्न पूछे। उनमें से एक प्रश्न था—'मृत्यु के बाद जीवात्मा कहाँ जाती है? उसका वास कहाँ होता है? उसका साक्षात्कार किस प्रकार हो सकता है?'

यही प्रश्न-विकलता वासु के मन में जगी थी। वह नचिकेता की तरह प्रवर बुद्धिवाला नहीं था। उसे केवल एक निष्ठुर दृश्य क्रूर मनोयंत्रणा दे रहा था।

'नानी माँ, नानू को जमीन पर क्यों सुलाया गया है? वे आँखें नहीं खोलते, कुछ भी बोलते नहीं, क्यों?'

निखिला को सांत्वना देनेवाले लोगों का ताँता लगा हुआ, 'आप शोक नहीं करें, सभी दैहिक पीड़ाओं से मुक्त हो चुके हैं आपके पति!'

'काल के कठोर दंश से कभी कोई बच पाया है?'

'यह नश्वर संसार है। हर किसी को सर्वस्व त्यागकर यहाँ से जाना होता है।'

तत्त्वज्ञानी गुरु अपूर्वानंदजी नेत्र बंद किए बैठे हुए—काया क्षरित हुई है। आत्मा निर्लेप है। पद्म परिमल बनी वह चेतना पराचेतना की ओर उन्मुख है।

'नहीं, कोई परिताप नहीं। उठो, निखिला बिटिया, राजीव के महाप्रयाण की तैयारी करो।'

श्रीमद्भगवद्गीता का उच्चार—नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि···

शास्त्रों के द्वारा काया का वेध हो सकता है, जीवात्मा का नहीं।

शब्दास्त्रों से छलनी किया गया राजीव का सुकुमार शरीर! सुवर्ण-सी दमकती काया हिमशीतल, पीत कमल-सा मुख चिर म्लान···!

राजीव ने बाहरी चमक-दमक और क्षणिक सौंदर्य से कोसों दूर ज्ञान-विज्ञान की दुनिया में परितोष पानेवाले सत्य का समाहार अपने जीवन में किया था—

न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः।

धन से आज तक किसी मनुष्य की तृप्ति हुई है भला?

वैभव का अतिरेक मन-प्राणों में मिथ्याभिमान की सड़ाँध उत्पन्न करता है। अयाचित धन मदांध बना देता है। रिश्तों का अनल दाह तो उसी दिन हो गया था, जिस दिन राजीव को उस दुर्वह सत्य का ज्ञान हुआ था।

उपनिषदकार एक बार फिर समक्ष है—सूर्य, चंद्रमा, नक्षत्र, अग्नि सबके अस्त होने के पश्चात् आत्मा की ज्योति ही शेष रहती है। उस ज्योति को प्रखर से प्रखरतम बनाना ही जीवन की सिद्धि है।

चरम वैदुष्य से भरा राजीव का परिवार आत्मिक ऊर्जा से संपन्न

सुप्रसिद्ध कथाकार। 'अरुंधती', 'दंश', 'अग्निपर्व', 'समाधान', 'बाँधो न नाव इस ठाँव', 'शेषगाथा', 'कनिष्ठा उँगली का पाप', 'कितने जनम वैदेही', 'कासों कहों मैं दरदिया' तथा 'मानुस तन' कृतियाँ चर्चित। 'क्रौंचवध तथा अन्य कहानियाँ' कृति भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुरस्कृत। इसके अलावा लोकभूषण सम्मान आदि विशिष्ट पुरस्कारों से सम्मानित।

अध्यवसायी पिता, अहर्निश परिवार की सेवा में जुटी अन्नपूर्णा माई!

ज्ञान-विभव से संपन्न उनके सपनों का नीड़—श्री निकेतन। चेतना को निरंतर विद्या की ऊर्जा से संवलित करनेवाली वह पैतृक आश्रय-स्थली। ग्राम-तिवारीपुर, डाकखाना-दहिवर। रत्नदेव तिवारी की गौरवशाली वंश-परंपरा के प्रकाश-स्तंभ लोकनाथ तिवारी। गुरुपद की गरिमा को द्विगुणित करनेवाले ऋषितुल्य राजीव के पिता।

राजीव का पालन-पोषण गोस्वामी तुलसीदास के स्वर्णिम शब्द-भंडार के बीच हुआ था—

आवत ही हरषे नहीं, नैनन नाहिं स्नेह।
तुलसी तहाँ न जाइए, जहँ कंचन बरसे मेघ॥

विद्याव्यसनी, निरभिमानी प्रकृति के पिता की सौम्य संतान राजीव। शीतल टोले का किराएवाला मकान। छोटकी आजी के कंठ से फूटते सोहर का उछाह बनकर प्रतिध्वनित था—

चइत के रामनवमी
श्रीराम जनम लिहले हो,
ललना, बाजे लागल अवध बधाव,
महल उठे सोहर हो!

खूब गोरा, बड़ी-बड़ी आँखों से पहली बार दुनिया को देखने-परखने की कोशिश करता राजीव।

यह नाम योगेश्वरी आजी ने दिया था, कमल पुष्प की तरह सुकुमार, सलोना है मेरा यह पौत्र! इसे राजीव लोचन कहकर बुलाया जाए।

छोटकी फुआ लहकती-चहकती भावज से इसरार कर बैठी थी—

'ए भउजी, चान-सुरुज अइसन चमकत-दमकत पूत पवले बाड़ू। हम चाँदी के पाजेब, सोना के करनफूल लेब···।' सात वर्षीया बड़ी बहन कल्याणी की जिद होती, 'माई, हम भाई को गोदी में लेंगे, किसी को छूने नहीं देंगे। छोटकी फुआ उसके गाल छूती है। हमें बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। इसके गाल मैले हो जाएँगे न।'

माई हँस देती।

'देखिह बबुनी, सँभार के।'

कल्याणी बड़ी-बूढ़ियों सी आश्वस्त करती, 'हमारे भाई को कुछ नहीं होगा।'

'हम उसे जमीन पर उतरने देंगे तब न!'

तीनों भाई-बहनों के बीच कहा-सुनी होती, तकरार बढ़ जाती, तब भी राजीव स्थिर बैठे मंद-मंद मुसकराते रहते।

'छोड़ो न दीदी, सबको अपनी गलती का पछतावा होगा।'

माई की खीझ तत्क्षण तत्क्षण मिसरी घुली हँसी में बदल जाती—

'बबुनी, किसी जनम का जोगी-जती है तुम्हारा यह मँझला भाई। चलो, इसकी रोटी का इंतजाम करना है।'

राजीव विद्यालय का पाठ पूरा करने में लगे रहते। माई दरवाजे पर खड़ी आवाज लगाती—'ए बबुआ, कब से हँकार लग रही है। भूख-प्यास नहीं लगी? सब आकर थाली-कटोरा पीटते हैं। एक तुम हो कि कितबियन संग मगजमारी करते रहते हो। कभी किसी चीज की फरमाइश नहीं। कवन माटी के बने हो बचवा?'

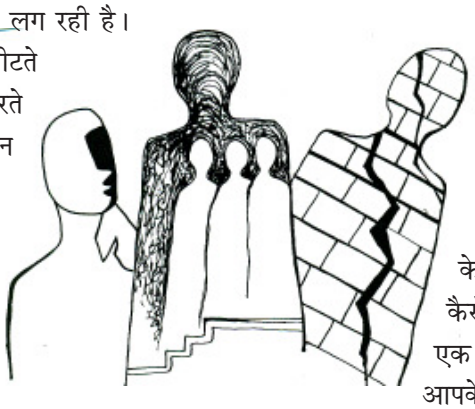

नवरात्र-पूजन के लिए गाँव से विजयानंदजी बुलाए जाते।

भाई-बहनों का जन्मांगचक्र उनके सामने रखा जाता। योगेश्वरी आजी की तत्परता देखने योग्य होती। राजीव की शनि दशा चल रही है, कम-से-कम सतहत्तर हजार वैदिक मंत्र से जप अभीष्ट है। शेष कार्य हम निपटा लेंगी।

महाराजजी का प्रथम आदेश कल्याणी के लिए होता—'बचिया, भाई को नहला-धुलाकर साथ ले चलना होगा। हम पूजन सामग्री लिए आते हैं। शिवालय में संकल्प होगा।'

माई आश्वस्त हो जाती, 'अब सब संकट शिवजी हर ली हैं, हमार राजीव बबुआ अजर-अमर होइहें।'

राजीव हँसते थे, 'दीदी, वह दोहा तुमने पढ़ा है न, आए हैं सो जाएँगे। मेरी हिंदी पाठ्य-पुस्तक में पूरा दोहा लिखा है। माई को पढ़कर सुना दो।'

□

गुरु अपूर्वानंद के निर्देशानुसार महाप्रयाण की तैयारी पूरी हो चुकी है। रचना सुमन का आर्तनाद—

'पापा, आप कहाँ चले गए? यह क्या हो गया?'

प्रसिद्ध जीवविज्ञानी राजीव, चरक, सुश्रुत संहिताओं का ज्ञान रखनेवाले राजीव! देह-विवर में प्रविष्ट काल-व्याधि का पूर्वानुमान लगाते राजीव!

'निखिला, मेरी माई इसी सांघातिक रोग से जूझती असमय चली गई थी। तुम घबराना मत, मैं भी अंतिम साँस तक पराभव स्वीकार नहीं करूँगा।'

मुंबई का सुप्रसिद्ध कैंसर चिकित्सालय। पाँच वर्ष से लेकर पचासी वर्ष तक की रुग्ण कायावाली मानवता का आर्तनाद।

यंत्रणादायी चिकित्सा प्रविधि! पहियोंवाली कुरसी पर जाँचघर की ओर जाते राजीव ने निखिला से परिहास करना चाहा था—

'घबराओ नहीं, हम अकेले नहीं हैं। इस लंबी कतार को देखो, नानक दुनिया सब संसार।'

किस प्रकार आत्मस्थ होते चले गए थे राजीव!

'रक्त कैंसर। धन लेवा, जान लेवा यह रोग···। कहाँ से जुटा पाएँगे इतनी धनराशि?'

मुंबई एयरपोर्ट से खुराना अतिथिशाला और अस्पताल तक का व्ययकारी सफर। निखिला का रोम-रोम प्रार्थनामय था—'हे सिद्धिविनायक, मंगल करें। मुंबामाई, मेरे सुहाग की रक्षा करना, माँ।'

निखिला के छोटे भाई ने स्मरण दिलाया था—'आपकी छोटी ननद यहीं घाटकोपर में रहती है, न दीदी?'

सप्ताह भर बाद रागिनी भाई-भावज से मिलने अतिथिशाला में आई थी। सरकारी तेल कंपनी में उच्च पदस्थ अधिकारी नीलेश राज ने छूटते ही व्यंग्य किया था—

'क्या राजीवजी, रह गए आप भी दो कौड़ी के प्राध्यापक ही। इस छोटी सी चाल में आप लोग कैसे रह रहे हैं? हमें बताया होता, हमारे बँगले में एक कमरा आप दोनों के लिए रिजर्व था। रही बात आपके दामाद और साले साहब की, तो ये दोनों प्राणी हमारे आउट हाउस में एडजस्ट हो जाते।'

बचपन वाली निर्लेप मुसकान राजीव का रक्षाकवच बनी हुई थी।

'निखिला, इस समय हम आपदाग्रस्त हैं। कोई आक्रोश नहीं, किसी से कोई उपालंभ भी नहीं। बाबूजी कहा करते थे—धीरज, धरम, मित्र अरु नारी, आपातकाल परखिए चारी। यों कातर मत हो। तुम मेरी शक्ति हो। हमें दृढतापूर्वक इस व्याधि से लड़ना होगा।'

चिकित्सालय के कैंसर विशेषज्ञ डॉ. नवीन ने परामर्श दिया—'डॉ. राजीव, आप विज्ञान के विद्यार्थी हैं। आशा है, मेरी किसी भी बात को अन्यथा नहीं लेंगे। कीमो चिकित्सा झेल सको, ऐसी आपकी शरीर दशा नहीं है। आप घर जाएँ और···'

मरण-पीड़ा की गहनता के भीतर से उपजा असीम धैर्य भाव—'धन्यवाद, डॉक्टर साहब। मेरे पिता असाध्य रोगों का उपचार होम्योपैथी चिकित्सा पद्धति से किया करते थे। अंततः यही एक निदान दिखाई पड़ रहा है। चलो निखिला, घर चलें।'

निखिला रो पड़ी थी—'यहाँ के लोग डॉ. भदानी का नाम ले रहे हैं। एक दिन रुक जाते तो उनसे भी···'

'कोई लाभ नहीं है।'

'एक बार···'

'तुम्हारी जिद है तो ठीक है।'

डॉ. भदानी के आलीशान नर्सिंग होम में बैठे राजीव का मन वृंदावन

में बना हुआ था—'हे नाथ, करुणासिंधो दीन बंधु कृपां कुरु··· श्री कृष्ण एव शरणं मम।'

धन-क्रीड़ा की महानगरी में कुशल कारोबारी की तरह डॉ. भदानी उनके समक्ष थे।

'किसने कह दिया कि कीमोथेरैपी आपके लिए अनुकूल नहीं होगी। फीस जमा करें और भरती होने की प्रक्रिया पूरी कर लें।'

राजीव ने नरमी से प्रश्न पूछा था, 'सर, कृपया यह बताएँ कि इस प्रयोग के बाद मेरे जीवित रहने का संयोग कितना होगा?'

डॉक्टर की उपेक्षा भरी दृष्टि दुस्सह थी—'यह कैसे बताया जा सकता है?'

निखिला पति का इंगित समझ गई थी—'चलो।'

उसने अंतिम प्रयास किया था—'डॉक्टर साहब, कोई दवा··· ?'

डॉ. भदानी उदासीन भाव से आगे गढ़ गए थे।

मेटेरिया मेडिका के पृष्ठों से अपना नाता जोड़ लिया था राजीव ने। महर्षि हैनिमन की मधुर चिकित्सा प्रणाली का आश्रय लेकर ही उनके पिता ने अपनी संतानों को स्वस्थ व सबल बनाया था।

निखिला को अच्छी तरह स्मरण था। सासु माई अपने खीझ भरे गरवीले स्वर में कहा करती—'तुम्हारे ये जो ससुर हैं न, सिर से पैर तक पक्के औढरदानी। होमियोपैथी की शीशियाँ ऐसे बाँटते हैं कि पूछो मत। कहते हैं कि नौकरी से छुटकारा पाने के बाद अपनी डिस्पेंसरी खोलेंगे, गरीब-गुरबा का मुफ्त इलाज करेंगे।'

निखिला अपनी सासु माई की लाड़ली बहुरिया थी।

राजीव हँसकर चुटकी लिया करते—'तुमने मेरी माई का मन चुरा लिया है। तुम्हारी अम्माँ ने सबका मन लुभाने की विद्या बचपन में ही सिखा दी थी?'

निखिला की माँ ऐसे देवोपम दामाद को पाकर निहाल थीं—'कजरौटा ले आव लोगनि, बबुआ के कवनो कुदीठ ना लागे।'

निखिला इकलौती बिटिया थी। अगुवाई करने आए अर्जुनदेव शास्त्री के समक्ष राजीव के पिता ने संशय व्यक्त किया था।

'हमारा अध्ययन, अध्यापन का अध्यवसाय है। हम सरस्वती के उपासक हैं। पुलिसिया महकमे में पली बालिका हमारे घर में अपने आप को व्यवस्थित कर पाएगी?'

करबद्ध प्रार्थनारत निखिला के पुलिस अधिकारी पिता समक्ष थे—'मेरी बेटी आपके परिवार की कसौटी पर अक्षरश: खरी उतरेगी। इसकी महतारी ने इसे सर्वगुण संपन्न बनाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है।'

विजयानंद पुरोहितजी गाँव से बुलाए गए थे। उनकी पोथी खुली रह गई थी—'ए बच्चा बाबू, छत्तीस गुणों की मैत्री देख रहा हूँ। अद्‌भुत मिलान है, जातक-जातिका की जन्म कुंडलियों का। अब विलंब केहि कारन··· ?'

राजीव का कक्ष भीतर से बंद था।

दूधिया दाँत, मद्धिम प्रकाश में अपनी चमक दिखलाते कौतुकी हो उठे थे—'सुनिए जी, हमने सब समझ-बूझ लिया। जो कुछ अभी आपने सुनाया न, वह सब हमारी अम्माँ ने पहले ही बता दिया है। अब आप अपने खरगोशों को बिछावन से नीचे उतारेंगे। हमें नींद आ रही है, सुबह जल्दी उठना भी है।'

माई ने धीरे से साँकल बजाई थी—'ए बबुआ, बरतुहार लोग आए हैं, तुम्हें नीचे···'

वह एकबारगी असहज हो उठे थे। यह मेरा संघर्षकाल है, अभी लंबी पढ़ाई बाकी है। रासबिहारी उनके निकट आकर बैठ गए थे। 'आपको कोई बाधा नहीं होगी बबुआजी, आपका एक संकेत हमारी बच्ची के लिए आदेश होगा।'

आनन-फानन में सभी औपचारिकताएँ पूरी कर ली गई थीं। गोपाली चौक से पान, सुपारी, नारियल, आरण्य देवी की लाल चुनरी और वर रक्षा की रस्म पूरी। दूसरे दिन माई-बाबूजी होनेवाली पुतोहू की मुँह दिखाई कर आए थे।

माई की पुलक मिसराइन काकी के आगे उजागर थी और अपनी शशक टोली को गाजर-मूली खिलाते राजीव का रोम-रोम श्रवणमय था।

'काकीजी, अपने राजीव के लिए ऐसी ही कनिया की खोज थी, जैसे सुन्न, सुभेरव हमारे बबुआ, वैसी ही सोन-पुतरी सी कनिया, सुकुमार, सुलच्छनी।'

निखिला के साथ राजीव का पहला संवाद था, 'अत्यंत स्वाभिमानी शिक्षक पिता की संतान हैं, हम सब भाई-बहन। आपको भी इस घर की मर्यादा का निर्वाह करना होगा।

'.... ... ...'

'मेरी माई ने बहुत कष्ट सहे हैं, उनकी छाया बनकर रहना होगा।'

'.... ... ...'

मेरे बाबूजी का अध्यवसाय देखा न, उनकी शिष्य मंडली, उनके बंधु-बांधवों, समस्त गुरुजनों की आश्रय-स्थली है हमारा यह श्री निकेतन। माई की तरह ही अतिथि-सत्कार में पारंगत होना होगा।

'.... ... ...'

'हमारी छोटी बहन रेवा अपरिपक्व मस्तिष्क वाली बालिका है। नन्हे शिशु की तरह उसका पालन-पोषण करना होगा।'

'.... ... ...'

निखिला का दत्तचित्त मौन और राजीव की झुँझलाहट, 'मैं बकवास कर रहा हूँ क्या? तुमने कुछ सुना भी?'

दूधिया दाँत, मद्धिम प्रकाश में अपनी चमक दिखलाते कौतुकी हो उठे थे—'सुनिए जी, हमने सब समझ-बूझ लिया। जो कुछ अभी आपने सुनाया न, वह सब हमारी अम्माँ ने पहले ही बता दिया है। अब आप अपने खरगोशों को बिछावन से नीचे उतारेंगे। हमें नींद आ रही है, सुबह जल्दी उठना भी है।'

माई प्रफुल्लित थी।

'अभी तो भोर के चार बजे हैं। अभी उठ गई कनिया?'

'माई, आप हटिए न। तरकारी हमें काटने दीजिए।'

घर-गृहस्थी के छोटे-बड़े कामों के साथ निखिला ने श्री निकेतन के विशाल ग्रंथागार को सहेजने का दायित्व उठा लिया था।

सास के सामने उसकी वह मनुहार, 'माई, हम अपनी पढ़ाई पूरी करेंगी।' बाबूजी की ओर से सहर्ष अनुमति थी।

'अवश्य! तुम अपनी परीक्षा की तैयारी करो बहू, राजीव का साहित्य पक्ष भी सशक्त है, वह तुम्हारी मदद करेंगे।'

यदा-कदा राजीव चुहल की भंगिमा में होते—'थाना, पुलिस, कैदी, हाजत, चोर, डकैत, गिरहकट; इस शब्दावली को सुनकर बड़ी हुई हो। सूर, तुलसी, कबीर को पढ़ा-गुना है? निराला, महादेवी को निकट से जाना है कभी?

'.... ... ...'

'नहीं न? तो एक बात अचछी तरह जान लो, हमारा यह घर साहित्य-तीर्थ है। माई का मौन समर्पण और बाबूजी की अनहद शब्द-साधना। इन दोनों को आत्मसात् कर सको तो जीवन धन्य हो जाएगा।'

राजीव के मुँह से निकला हर शब्द निखिला के लिए पावन मंत्र था।

विजयानंदजी नवरात्र संपन्न कराने के लिए आते और सबके सामने निखिला की प्रशंसा के पुल बाँध देते—'साबुदाने की ऐसी खीर मैंने कहीं नहीं खाई। बच्चा बाबू, आपकी यह पुतोहू साक्षात् अन्नपूर्णा है।' बाबूजी का आह्लाद अपनी चरमसीमा पर होता।

'अपनी बहू को विद्या-निपुण बनाना है भाई, साहित्य में इसकी विशेष अभिरुचि है, इसे एम.ए., पी-एच.डी. करानी है।'

माई का आदेश था, 'रसोई-पानी से तुम्हारी छुट्टी, दिन-रात पढ़ाई में जुट जाओ। फर्स्ट क्लास लाओगी, तभी हमको संतोष होगा।'

निखिला सास की प्राण-पुतली बन चुकी थी।

अकसर अपनी अम्माँ से कहा करती, 'ऐसी गौरी सास भगवान् सबको दें।'

पंद्रह वर्षीया रेवा का अबोध बालपन—'भाभी, तुम हमको छोड़कर कहीं नहीं जाओगी न?'

राजीव की पहली नियुक्ति राँची के एक महाविद्यालय में हुई थी।

निखिला जार-बेजार रो पड़ी थी, 'हमें श्री निकेतन से दूर कहीं नहीं जाना। माई-बाबूजी को छोड़कर कतई नहीं।'

माई ने असीम धैर्य का परिचय दिया था, 'सुनो बहू, राजीव बाहरी भोजन नहीं खा सकते। तुम हमारी चिंता छोड़ो। चुपचाप राँची जाने की तैयारी करो।'

मोराबादी के छोटे से किराएवाले मकान में शुक-सारिका का नीड़ सजा था। पुराना वेस्पा स्कूटर, विज्ञान की पोथियों से भरा थैला और नए शिक्षक के स्वागत में चहकते विद्यार्थीगण।

पारिजात सी सुगंध भरी निखिला की गृहस्थी, रचना-सुमन, राजीव की दो नन्हीं प्रतिकृतियाँ, जीवन एक सुंदर विभव सा।

तभी वह दुस्सह संवाद मिला था—माई नहीं रहीं।

सुंदरकांड के विरहविकल राम की चेतना बाबूजी के भीतर समा गई।

कुवलय, बिपिन कुंत बन सरिसा।
बारिद तपत तेल जनु बरिसा॥
जे हित रहे, करइ तेइ पीरा।

ऐसा भयावह विछोह! प्रबुद्धता के अनंत विस्तार का यंत्रणा-विवर में सिमटकर रह जाना।

राजीव निखिला की प्रार्थना अश्रु-ज्वार में विलीन हो गई थी।

'तुम्हारी माई चली गई, रेवा का दाय मुझ पर छोड़ गईं, इस अबोध जीवात्मा के माता-पिता की भूमिका मुझे निभानी है।'

राजीव अनुमान की आँखों से सबकुछ देख रहे थे।

बाबूजी के पत्रों से श्री निकेतन के बदलते हुए परिवेश का अनुभव होने लगा था।

'इस घर का सारा पुण्य अपने साथ समेटकर तुम्हारी माई चली गई। मेरी सेवा-निवृत्ति और उनकी चिर विदाई, दोनों एक साथ। अब जीवन पराश्रित हो चुका है। मैं स्वयंपाकी नहीं बन सका, तुम्हारी माई के हाथ की बनी स्वादिष्ट रसोई ने मुझे यह अवसर कहाँ दिया। निखिला बहू यहाँ होती तो···'

विजयानंद पुरोहित के बेटे नंदलाल राँची आए थे। अपने स्वाभिमानी पिता के घोर एकाकीपन और घर-आँगन की उच्छेद कथा सुनकर राजीव-निखिला ने श्री निकेतन जाने का निश्चय किया था।

वह घर श्री विहीन हो चुका था। बाबूजी का दीर्घ सधित मौन आँसुओं में मुखर था, 'मैं पराश्रित हो चुका हूँ। अब जीने का कोई अर्थ नहीं रह गया, राजीव बेटे। तुम्हारी माई समय रहते चली गई, यह अच्छा हुआ। कैसे सहन कर पाती वह?'

राजीव ने कुछ पूछना चाहा था, ऐन वक्त पर नव्य गृहस्वामिनी ने ससुर के कक्ष में पदार्पण किया था।

'कब से भोजन तैयार है। कितनी बार आवाज लगाई, तब आना पड़ा। फिर मत कहिएगा कि रोटी ठंडी हो गई।'

निखिला ने टोकना चाहा था, 'रेवा बिना खाए सो गई है। दोपहर में भी उसने खाना नहीं खाया था।'

रसोईघर में बरतनों की खट-पट के बीच रवीना बहू की झल्लाहट स्पष्ट सुनी जा सकती थी—

'दो दिनों के लिए क्या आए, इन दोनों ने नाक में दम कर दिया। ऐसा ही मोह-छोह है तो ले क्यों नहीं जाते इन दोनों को अपने साथ।'

राजीव हतप्रभ थे। पाँच वर्षों के भीतर घर का ऐसा निर्मम परिवेश। रिक्त हस्त बाबूजी और दुरभिसंधि रचते हुए रक्त-संबंधों का नाग-दंश।

मस्तिष्क-स्राव की दाहक दशा, रक्तचाप का भारी तनाव, आकाशगंगा की दूधिया तरंग सी बाबूजी की हँसी न जाने किस शून्य में सिमट गई थी।

वाणी रहित, किंतु मौन इंगित से वह दुस्सह कथा कहते हुए—

'रेवा की सुरक्षा के एवज में श्री निकेतन दे दिया। तुम दोनों का अपराधी हूँ। हो सके तो क्षमा कर देना।' कुछ भी समझना शेष नहीं रह गया था। विघटनवादी प्रपंच के शिकार, मस्तिष्क-शिराओं की दर्द भरी ऐंठन का सारा खिंचाव आँखों में समेटकर बाबूजी शांत हो गए थे।

बाबूजी के श्राद्ध का दिन, श्री निकेतन से राजीव-निखिला की अंतिम विदाई का दिन।

'माई-बाबूजी चले गए। घर की सुख-शांति भी चली गई। इस पैतृक घर से हमारा दाना-पानी हमेशा के लिए उठ गया।'

□

बाबूजी की चिता का अनलदाह राजीव की चेतना का अंतर्दाह बनकर रह गया था।

होमियोपैथी के जाने-माने चिकित्सक डॉ. त्रिखा ने दो टूक शब्दों में प्रश्न किया था—'ऐसी सांघातिक बीमारियों का सीधा संबंध शारीरिक व मानसिक तनाव से भी हुआ करता है। राजीव, आप निहायत भाव-प्रवण इनसान हैं। आपको किसी भी प्रकार के अवसाद से बचना होगा। जीवनीशक्ति बनाए रखें, मैं आपके लिए प्रार्थना करूँगा।'

अभिशप्त पितृत्व का दुस्सह भार अपनी चेतना में धारते बाबूजी की वेदना, विकल आँखों का पथरायापन राजीव के भीतर अमिट हो चुका था। संसार की समस्त कटुता को अपनी हासोज्ज्वल छवि से क्षणमात्र में विस्मृत करनेवाले उस महामानव ने अपने ही घर में पराजय पाई थी।

राजीव का जीवन ओषधियों का अनुगत बनकर रह गया था। सिनॉथस क्यू, आर्सेनिक एल्ब, माइरिका, लेसिथिन, आर्स आयड, मिलफोलियम क्यू···

निखिला अनार का रस बनातीं, राजीव ठठाकर हँस पड़ते, 'कभी नियमित रूप से फल, दूध का सेवन किया नहीं, इस रोग ने मुझे शुद्ध फलाहारी बना दिया। देवघर के प्रमुख पंडाजी ने गणना की थी, शनि का मार्केश है। विशेष शिवाराधना का अनुकूल परिणाम होगा।'

राजीव का वह हृदय विदारक हास, 'मेरी माई ने मेरे लिए अखंड व्रत-उपवास किया था पंडितजी। अब कोई जप-तप नहीं। डॉ. त्रिखा ने ठीक पहचाना है। रक्त-संबंध की प्रवंचना ही मेरे इस रोग का प्रयोजन है। मैं निर्लिप्त भाव से गोविंद की शरण में जाना चाहता हूँ।'

चिकित्सक हैरान थे, किसी भी दवा का कोई असर नहीं। नित्य नए उपसर्गों का उभार···।

निखिला ने विनती की थी, 'चलिए, हम लोग कहीं और चलते हैं।'

राजीव अनायास गंभीर हो गए थे, 'अब कहीं नहीं जाना। तुम अपनी देवी माँ से इतना निवेदन कर सकती हो, मुझे वेदना रहित सहज मृत्यु का वरदान चाहिए।'

निखिला की वह आर्त पुकार, 'आप ऐसा क्यों कर रहे हैं? मेरे लिए क्यों नहीं सोचते? आपको ठीक होना होगा।'

राजीव के नीलोत्पल नयन प्राणप्रिया भार्या के आँसुओं की तरलता में डूब गए थे—'तुम्हारे लिए यह छोटा सा घरौंदा है न पारिजात। तुम यहीं रहोगी और मैं? मैं भी तुम्हारे आस-पास ही रहूँगा न।'

एक अघोषित अनुभूति और राजीव का चिर मौन, 'मैं कहीं जाऊँगा नहीं, इसी पारिजात में मेरा अधिवास होगा।'

□

उपनिषदों के अध्येता, विज्ञानवेत्ता डॉ. राजीव की आत्मा को मुक्ति पथ की ओर ले जाने के निमित्त अनुष्ठान प्रारंभ किया जा चुका है।

तिलोदक लिये नन्हा दौहित्र वासु सम्मुख है—

ॐ नमो वः पितरो रसाय...

बालक की मनोदशा चक्रवात में फँसे नरम-नाजुक पंखों वाले पाखी सी है।

उसका रुदन एक बार फिर प्रश्न बनकर फूटता है, 'नानी माँ, नानू को किसने मारा? मुझे बताओ, मैं उसे छोड़ूँगा नहीं।'

अशरीरी चेतना का निस्सीम राग पारिजात के कण-कण में स्पंदित है।

यह रक्त कैंसर नहीं, मेरे रक्त-संबंधों का काल-दंश है। स्वार्थ के विषदाह से मुक्ति पाने के लिए यह अनलदाह ही वरेण्य था। समस्त बंधुवादी संज्ञाओं का विस्मरण मेरी देह-व्याधि का एकमात्र निदान।

अंततः यही उपचार मेरी नियति थी।

ॐ शांति, शांति, शांतिः॥

मोराबादी-८४३००८,
राँची

कविता

यादों के दर्पण में मेरे

● त्रिभुवन माहेश्वरी

मुश्किल से दुनिया में मिलते
मन को मीत बनानेवाले।
बड़े जतन से पाल रखे हैं
दिल का दर्द पाँव के छाले।

टूट गईं फौलादी कसमें,
सपनों को वनवास मिल गया।
तम ने नहीं मुखौटे बदले,
छल-बल साथ उजास मिल गया।

प्यार नहीं प्रतिदान माँगता,
उपालंभ चुपचाप सह लेता।
प्रतिवादी बनने से पहले,
मन की बातें मन कह लेता।

यादों के दर्पण में मेरे,
रूप किसी का अब भी हँसता।
मन-मंदिर की मूर्ति न टूटी,
मंत्र अर्चना के मैं जपता।

राजमार्ग ठुकरा पग मेरे,
पगडंडी की ओर मुड़े हैं।
मीत-मीत के शब्द-शब्द से,
जीवन के संदर्भ जुड़े हैं।

अनजानी आँखों में सहसा,
कभी किरकिरी पड़ जाती है।
सीधी-सच्ची बात शूल सी,
कभी हृदय में गड़ जाती है।

पीठ फेर ली है बहार ने,
साँसें अब तक सुरभीनी हैं।
ऐसा कुछ घट गया कि जिससे,
मन उदास आँखें गीली हैं।

क्लाउड-९, अपार्टमेंट्स
फ्लैट नं. ८०६
शास्त्री नगर, मेरठ-२४०००१

सांप्रदायिक सौहार्द के प्रतीक पुरुष

बाबू वृंदावनलाल वर्मा

● जगदीश खरे 'जीवमित्र'

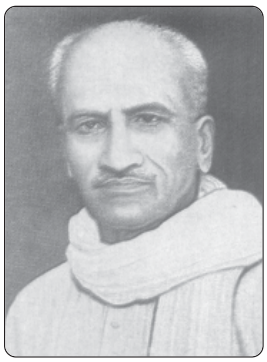

एक सफल उपन्यासकार, एक कुशल कथा-शिल्पी वही बन सकता है, जो अपने सृजन के द्वारा युग की समस्याओं का समाधान करे। १८वीं शताब्दी का अंत हो चुका था। पश्चिम से एक आँधी ईस्ट इंडिया कंपनी की सत्ता के रूप में बुंदेलखंड के ऊपर काबिज होती जा रही थी। मुसलिम सत्ता भले ही प्रभाव शून्य हो चुकी थी, लेकिन मुसलमानों की एक बहुत बड़ी आबादी हिंदुओं के बीच रह रही थी। अंग्रेज इन दोनों के बीच फूट डालकर अपने पाँव जमा लेना चाहते थे, जिसमें वे पूरी तरह सफल भी हुए। ऐसे ही संक्रांति काल में कराहती भारत माता को वृंदावनलाल के रूप में एक ऐसे महान् साहित्यकार का उपहार मिला, जिसकी स्फीत शिराओं में विरासत से मिला वीरत्व भाव कूट-कूटकर भरा था। उन्होंने अच्छी तरह से समझ लिया था कि हिंदू मुसलिम एकता से ही भारत की खोई हुई स्वतंत्रता पुनः प्राप्त की जा सकती है। उनका सोचा हुआ सार्थक भी हुआ। एक सफल समाजवेत्ता के रूप में वे सदैव इस बात के हिमायती थे कि स्वतंत्र भारत को अलगाववाद से नुकसान ही नुकसान है, इसलिए उन्होंने हिंदू-मुसलिम एकता को दृढ करने के लिए अपने उपन्यासों में, अपनी कहानियों में, ऐसे नायाब चित्र खींचे, जिन्हें परखकर कोई भी मुसलिम हिंदुओं से प्रेम किए बिना नहीं रह सकता।

उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' में हिंदू-मुसलिम एका का ऐसा हृदयहारी वर्णन है। हिंदी के प्रसिद्ध आलोचक समीक्षक, रामविलास शर्मा का कथन है, ''वर्माजी का संपूर्ण साहित्य, सांप्रदायिक सौहार्द को उत्पन्न करने का श्रेष्ठ औजार है।''

निश्चय ही डॉ. वृंदावनलाल वर्मा ने सांप्रदायिकता के मनोविज्ञान को बड़ी ही चाक्षुषदृष्टि से छुआ था। उनकी चिंतन-परिधि में यह बात बहुत साफ उभरती है कि हिंदू-मुसलिम अलगाव से देश को कितना नफा-नुकसान हो सकता है। वे इससे भली-भाँति परिचित थे। तभी उन्होंने अपनी रचनाधार्मिता को एक मोड़ दिया। इतिहास के ऐसे प्रसंग उठाए, कहानी सृजन में ऐसे संदर्भ दिए, जिन्हें पढ़कर विघटनकारी, हिंसक वृत्ति भूलकर हिंदुओं में मुसलिम घुलने-मिलने लगे।

'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' उपन्यास में, पृष्ठ सं. २०७ पर एक दृश्य का अंकन वर्माजी की लेखनी से उभरा है, ''मोतीबाई और जुही जैसे दीवाली मनाती थीं, वैसे ही ताजियादारी भी करती थीं। उसी उत्साह से वे लक्ष्मीपूजन करके मुरली मनोहर मंदिर में नृत्यगान भी करती थीं, और सहिष्णुता ऐसी कि कभी किसी मुसलमान ने इसमें हस्तक्षेप नहीं किया।'' इसी उपन्यास में आगे वर्माजी लिखते हैं, ''मुन्नीबाई और दुर्गाबाई सुन्नी मुसलमान होकर भी हिंदू रीति-रिवाज, भजन कीर्तन भी करती थी।''

डॉ. वृंदावनलाल वर्मा राष्ट्रभक्त, जनसेवी संवेदना के ऐसे कथापुरुष थे, जिन्होंने रानी लक्ष्मीबाई के व्यक्तित्व को अपने उपन्यास में नूतन धार दी है। उपन्यास में रानी लक्ष्मीबाई की गहरी आत्मीयता, अपनी मुसलिम प्रजा के प्रति कितनी अधिक है, इसका उदाहरण उनका यह कथन दृष्टव्य है, ''मेरी झाँसी के गौरव हैं वजीर खाँ, जो अश्वारोहण और असिविद्या में निपुण हैं। उसी तरह अमीर खाँ का जबाव नहीं। गोलंदाजी में गौस खाँ और सैन्य संचालन में जवाहिर सिंह तथा रघुनाथ सिंह। शस्त्र बनाने में भाऊ बख्शी और गायन में मुगल खाँ, नृत्य में जुही और दुर्गाबाई, कपड़ा सिलने में बलदेव दरजी। ये सब मेरी झाँसी के गौरव हैं।'' रानी की यह निष्पक्ष दृष्टि वंदनीय तो है ही, प्रजा पर गहरा असर भी छोड़ती है। तभी तो दीपावली में हिंदू-मुसलिम साथ-साथ दीये जलाते, साथ-साथ खील-बताशे खाते। हिंदू-मुसलिम समन्वय का यह कितना उच्चादर्श है कि १८५७ ई. के युद्ध में रानी झाँसी की रक्षार्थ देशमुख अपना लहू बहा देता है, वहीं पर रानी के लिए गुलाम गौस खाँ भी अपने प्राण न्योछावर कर देता है।

'कुँअर गुलमुहम्मद' नामक कहानी में १४९ पृष्ठ पर जुही के अंत होने का बेहद मार्मिक दृश्य का अंकन हुआ है, दृष्टव्य है, ''हुजर सवार जुही के आग उगलते तोपखाने पर जा टूटे, जुही तलवार लेकर भिड़ गई, घिर गई और मारी गई। मरते समय उसने आह तक नहीं की। वरदी के कट जाने पर हुजरों ने देखा, तोपखाने का अफसर गोरे रंग की सुंदर युवती थी और उसके होंठो पर मुसकराहट थी।''

एक मुसलिम स्त्री का रानी हेतु यह विलक्षण प्रेम, त्याग क्या अकारथ जा सकता है? इस स्त्री की रक्षार्थ क्या हजारों हिंदू अपनी जानें नहीं गँवा सकेंगे? इस एक ही उदाहरण से दो वर्ग किस कदर अपनत्व से भर उठेंगे। यह कल्पना विलक्षण कृतिकार वृंदावनलाल वर्मा ही कर सकते थे।

'कुँअर गुलमुहम्मद' नामक कहानी का एक उदाहरण गौरतलब है। पृष्ठ सं. १५२ पर यह अंकित है—

''जब गुलमुहम्मद मुड़ा तो देखा, रामचंद्र घोड़े से गिरती हुई रानी को साधे है। दिनभर के थके-माँदे, भूखे प्यासे, धूल और खून में सने हुए, गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुँह फेरकर कहा, खुदा पाक परवर दिगार। रहम, रहम। उस कट्टर सिपाही की आँखें, आँसू बहाने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक-हिलककर रोने लगा।''

रघुनाथ और देशमुख ने रानी को घोड़े से सँभालकर उतारा। आवेश में आकर उस अड़ियल घोड़े को लात मारी, वह अस्तबल की दिशा में भाग गया। रामचंद्र ने गुलमुहम्मद से कहा, ''कुँअर साहब इस कमजोरी से काम और बिगड़ेगा। याद करिए अपने मालिक ने क्या कहा था? अंग्रेज अब भी मारते-काटते घूम रहे हैं, यदि आ गए तो रानी साहिबा की देह का क्या होगा?''

गुलमुहम्मद चौंक पड़ा, साफे के छोर से आँसू पोंछे।

देशमुख ने दामोदर राव को पीठ पर बाँधा घोड़े पर सवार होकर चल देने को हुआ तो गुलमुहम्मद से कहा, कुँअर साहब आप भी जाइए।

''दीवान साहिब अम कहाँ जाएगा? अम जब राहतगढ़ से चला तो पाँच सौ पठान था, अब एक रह गया, अब हम भी रानी के संग मरेगा, बाई अमको हटाओ मत।''

आँसुओं की इस बरसात में क्या किसी पाठक का मन बिना रोए रह सकता है? मानना ही पड़ेगा कि वृंदावनलाल वर्मा विलक्षण कथा पुरुष हैं। विलक्षण समाज चेता। जिन्होंने सांप्रदायिक सद्भाव के उस शिखर का निर्माण कर डाला, जिसका प्रभाव पूरे देश पर है। झाँसी दो शताब्दियाँ देख चुकी है, आज तक इस झाँसी में हिंदू-मुसलिम दंगे नहीं हुए। दोनों संप्रदाय बड़े ही स्नेहपूर्वक साथ-साथ रह रहे हैं।

पद्मभूषण डॉ. वृंदावनलाल वर्मा ने सौ से अधिक कहानियों का सृजन किया है। दबे पाँव तथा अन्य कहानियाँ संग्रह में एक कहानी है 'शेरशाह का न्याय'। इसमें प्रजा और राजा के आध्यात्मिक संबंधों की सुंदर लक्ष्मणरेखा खींची गई है। हाथी पर बैठे, शहजादे ने एक सुंदर नहाती हलवाइन पर पान के बीड़े फेंक दिए थे, हलवाइन चिता बनाकर आत्माहुति देने के लिए तत्पर हो गई। लोगों ने शेरशाह से शिकायत की। बादशाह ने न्याय किया। शाहजादे की औरत नहाएगी और हलवाई हाथी पर बैठकर बीड़े फेंकेगा। शाहजादा कसमसाकर रह गया और इतना ही नहीं, फिर शाहजादे को मृत्युदंड भी मिलेगा। लोग त्राहि-त्राहि करने लगे। अंत में हलवाइन ने खुद ही शाहजादे को माफ कर दिया, तब शेरशाह शांत हुआ। उसका यह कथन इनसानियत का मील का पत्थर बना गया। कहानी की पृष्ठ सं. १४१ में शोरशाह का वाक्य गौरतलब है, ''हिंदुस्तान में वही राज्य कायम रह सकता है, जो लोगों के साथ न्याय करने में कसर न लगावे।'' इस भारत वाक्य को, कमोबेश सभी दिल्ली के बादशाहों ने अपनी स्मृति में बनाए रखा। एक और कहानी है रक्षा; जिसके पृष्ठ १२६ पर अंकित है, दृश्य यों है—

''देवकी की आँखें छलछला आईं, कृतज्ञता के दो आँसू उसके गाल पर छलक आए। केवल मुँह से निकला, 'प्राणों की बाजी लगाकर आप हम लोगों की रक्षा कर रही हैं। उसने शबनम से कहा, बहन आपका

मूलतः शिक्षक। रीडर और फिर प्रोफेसर। अंत में प्राचार्य पद से सेवानिवृत्ति। बाबू वृंदावनलाल वर्मा के तेरह रूपकों का निर्माण, आकाशवाणी से प्रसारित। राज्यसभा टी.वी. चैनल से राजेश बादल ने वृंदावन विषयक वार्त्ताएँ लगभग एक महीने तक प्रसारित कीं।

जस कभी नहीं भूलूँगी', शबनम बोली, 'दीदी, इसमें जस किस बात का? आप मेरी बड़ी बहिन हैं हम लोगों ने थोड़ा सा फर्ज अदा किया, तो कौन सा बड़ा काम किया?'

''हम लोगों के लिए नवाब साहब ने अपने आपको संकट में डाल दिया है।''

''वाह-वाह यह सबकुछ नहीं हम लोग आपस में एक-दूसरे की मदद नहीं करेंगे तो क्या बाहर वाले मदद करने आएँगे? यह सब ऊधम बाहर वालों का किया हुआ है।''

''अगर मैं किसी तरह अपने अब्बाजान के पास पहुँच पाती तो हाथ जोड़ उन्हें समझाती कि विलायतियों का साथ छोड़िए और हिंदुस्तानियों को अपना समझिए।''

''प्यारी बहिन, आप किसी और आफत में न पड़ जाना। नवाब साहब तो हम थोड़े से हिंदुओं के लिए पूरी जोखिम अपने सिर ले चुके हैं।''

''आप बार-बार यह क्यों कहती हैं? थोड़ी देर के लिए मान लीजिए कि हम लोग किसी ऐसी जगह होते जहाँ हिंदुओं की बहुतायत होती और हिंदुओं ने शरारत की होती, हम लोग उनके बीच फँस जाते, तो क्या आप हाथ पर हाथ धरे बैठी रहती, राजा साहब क्या किनारा खींच लेते?''

देवकी की आँखों में आँसू सूख गए, लाल हो गई तमककर। बोली, ''बहिन, मैं उन हिंदुओं की मिट्टी खराब कर देती, जो आपको छूने के लिए आगे बढ़ते।''

शबनम देवकी से लिपट गई। बोली, ''दीदी, हम भी तो इनसान हैं। आपके लिए यही खयाल हमारे जी में भी घर किए हुए हैं। हम आपकी मदद नहीं कर रहे हैं बल्कि हिंदुस्थानी होने के नाते सिर्फ अपना फर्ज अदा कर रहे हैं।'' अनूठे कथा शिल्पी वृंदावनलाल वर्मा की इस कहानी ने क्या हिंदू-मुसलिम के बीच बनी खाई को पाटा नहीं होगा? अवश्य पाटा होगा।

इसी क्रम में एक 'नैतिक स्तर' नामक कहानी भी बेहद प्रेरणास्पद है। पानीपत के मैदान में तृतीय मराठा युद्ध चल रहा है। अब्दाली के पास रसद मार्ग खुलकर रसद भेज रहा है और मराठा सेना में रसद की कमी है, कपड़ों के अभाव में सैनिक बीमार हो रहे हैं, लेकिन मराठा गोलंदाज इब्राहीम गार्दी की अचूक गोलाबारी से अब्दाली घबराया हुआ है, उसने गोपनीय पत्र इब्राहीम को भेजा। इब्राहीम ने भेद खोलते हुए माधवजी सिंधिया से कहा, ''मैं तो अब्दाली को मूर्ख समझता हूँ। उसने इतना नहीं

सोचा कि मैं हिंदुस्तानी मुसलमान हूँ, कोई सरहदी लुटेरा नहीं।''

माधवजी ने कहा, ''वाह गार्दी!'' उसने लोभ तो बहुत दिए। गार्दी बोला, ''मेरा दीन, मेरी आत्मा को जो दे रखा है, उससे बढ़कर तो अब्दाली मुझे कुछ दे नहीं सकता। फिर सरदार साबह, मेरा मुल्क तो सभी चीज से बड़ा है। मैं अपने निमक, ईमान और मुल्क के खिलाफ नहीं लड़ सकता। आप निशा खातिर रहें।'' (पृष्ठ सं. १३२ 'दबे पाँव एवं अन्य कहानियाँ' संग्रह से)

डॉ. वर्माजी ने 'अपनी कहानी' नाम्नी आत्मकथा में स्वयं कहा है कि मैंने इतिहास को कला के चौखटे में बिठाया है और गौतम के दुखवाद से प्रभावित होकर मैंने अनुदात्त से कभी समझौता नहीं किया।

'पूर्व की ओर' नामक नाटक में वर्माजी ने भारतीय संस्कृति की उदात्तता का जो चित्र खींचा है, क्या वह कहीं मिलेगा? पश्चिमी संस्कृति ने जहाँ पर उपनिवेश बनाए, वहाँ के निवासियों को गुलाम बनाकर अत्याचार किए, दूसरी ओर भारतीय संस्कृति ने जावा, सुमात्रा, बोर्नियों के निवासियों को सुख-शांति का पाठ पढ़ाया। प्रेम और सौहार्द विकसित किया। जहाँ भी भारतीय गए, सुख, शांति, धर्म साथ रहा।

इतिहासकार भगवादास माहौर ने तो 'झाँसी की रानी' उपन्यास को 'जनक्रांति की गीता' कहा, और रूसी हिंदी लेखिका दीमा गोल्दमान ने लिखा कि अंग्रेजों की बदनीयती का भंडाफोड़ करनेवाली इस किताब ने पूरे विश्व के बुद्धिजीवियों को अंग्रेजों के विरुद्ध कर दिया था।

डॉ. वर्माजी की रचनात्मक दृष्टि मुखर और प्रखर रही। राष्ट्रीय उन्नयन की बलवती स्पृहा से वे हर क्षण उद्वेलित रहते थे। 'युद्ध के मोरचे', 'कश्मीर का काँटा' इसके स्पष्ट निदर्शन हैं।

'गढ़कुंडार' उपन्यास में सामाजिक जीवन की पीड़ाओं को, विवाह की रूढ़ समस्याओं के समाधान के तौर पर तारा और दिवाकर, मानवती और अग्निदंत इन दो प्रेमी युगलों के द्वारा इन पर प्रहार किया है। वर्माजी ने इसमें जात्याभिमान के साथ असवर्ण विवाह की समस्या उठाई है। अग्निदंत ब्राह्मण है और मानवती खंगार। तारा और दिवाकर दैहिक मिलन से दूर हुए। समाज ने आध्यात्मिक मिलन की अनुमति भले ही दी हो।

'झाँसी की रानी' में ऊँच-नीच की समस्या का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित किया है। नारायण शास्त्री छोटी भंगिन के प्रेम में, उसके रूप लावण्य में ऐसी सुधबुध खो बैठता है कि उसके लिए समाज त्यागकर दर-दर की ठोकरें खाने को भी तैयार होता है।

इसी तरह शौर्य और सौंदर्य की अद्‌भुत औपन्यासिका 'मृगनयनी' में भी अटल गूजर जाति और लाखी अहीर जाति की होने से उनमें विवाह संबंध को समाज स्वीकार नहीं करता। लेकिन वे विवाह कर लेते हैं। समाज उन्हें बहिष्कृत कर देता है।

प्रसिद्ध समीक्षक शिवकुमार मिश्र ने ठीक लिखा कि ''डॉ. वृंदावन लाल वर्मा मानवीय संबंधों के सबसे बड़े सिरजनहार हैं और समय की धड़कनों के कालजयी चितेरे। राग और संघर्ष को रोमांस के साथ व्यक्त करने की कला में हिंदी संसार का कोई कहानीकार उनसे आगे नहीं है।''

बुंदेलखंड के जननायक वर्माजी की राष्ट्रभक्ति जितनी महनीय थी, उतनी ही गरीबों की चिंतना, जिसमें वे डूबे रहते, जहाँ भी मौका मिलता, वे जनकल्याण में जुट जाते।

टीकमगढ़ रियासत के राजा वीरसिंह ने इनके सृजन से प्रभावित होकर गढकुंडार के पास पूरा जंगल, सैकड़ों एकड़ की भूमि इन्हें प्रदान की। श्यामसी गाँव में निवास करते हुए सृजन में डूबे रहते। लेकिन गरीबों की वेदना से व्यथित रहनेवाले इस महान् रचनाकार ने वह समूची सैकड़ों एकड़ भूमि मुफ्त में किसानों को बाँट दी। उनका स्पष्ट मत था कि ''हर गरीब को भरपेट भोजन, उचित आवास और वस्त्रों की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए।'' शायद इसी वैचारिक भव्यता ने उन्हें विवश किया होगा कि वे अपने नाटक 'ललित विक्रम' के द्वारा आदमी आदमी के बीच अमीरी और गरीबी की फैली गहरी खाई को पाटें। कुछ लोग ऐशोआराम में गले तक डूबे हैं, कुछ भूखों मरते हैं। इस नाटक के द्वारा स्पष्ट संदेश दिया जाता है कि पूँजीवाद से कल्याण नहीं हो सकता। गरीबी से आदमी तभी उबर पाएगा, जब देश में उद्योग-धंधे, कुटीर उद्योग विकसित हों, कल-कारखाने लगें, तभी गरीबी से निजात मिलेगी। सामाजिक समरसता की रक्षा भी तभी हो सकेगी जब नारी को समान अधिकार मिलें। श्रमजीवियों को उचित वेतन और मजदूरी के घंटे भी उचित हों और मुनाफे में मजदूरों का हिस्सा भी हो, इस तरह इस नाटक में वृहद मानवतावाद की घोषणा की गई।

समाज के रुग्ण पक्षों को स्वस्थ करने के लिए ही डॉ. वर्माजी ने टूटे काँटे, प्रत्यागत, लगन, प्रेम की भेंट, कुंडली चक्र, आहत और उदय किरन जैसे नाटकों की, सामाजिक उपन्यासों की एक बड़ी शृंखला जैसे समाज को उपहारित कर दी। माननीय लाल बहादुर शास्त्री भूतपूर्व प्रधानमंत्री ने डॉ. वर्मा के आचार-विचार और अंतर्वृत्तियों पर मोहित होते हुए कहा था कि विपर्यय में संतुलन के सच्चे साधक वर्माजी ही हैं और डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल ने इतिहास की सच्ची झाँकी रचनेवाले सजीव कल्पना और उदात्त प्रेम के एकत्र समन्वय के सूत्रधार हैं महान् लेखक हमारे वर्माजी।

राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने पद्म भूषण पुरस्कार भेंट करते समय डॉ. वर्माजी से धीरे से कहा था, ''मैने आपका गढ़कुंडार पढ़ा है। उसमें प्रकृति जितनी सजीव ढंग से व्यक्त हुई है, मैंने और कहीं नहीं देखी।''

और अंत में हिंदू-मुसलिम सौहार्द के महान् मनोवेत्ता डॉ. वृंदावन लाल वर्मा को हम हिंदी के तुच्छ सेवक कितना धन्यवाद दें कि उन्होंने 'हमीदा' और 'तोषी' कहानियों का सृजन करके हमें एक नया आलोक प्रदान किया। यह कहना कितना सच है कि कहानी के नाजुक रेशों को जिंदा पकड़ने की जितनी जुगत वर्माजी को आती है, उतनी किसी को नहीं।

अंत में निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि डॉ. वृंदावनलाल वर्मा सांप्रदायिक सौहार्द के प्रतीक पुरुष हैं। सा.अ

३७२, सिविल लाइंस
ग्वालियर रोड, झाँसी (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४५०२१७००८

कहानी

एक सच्ची-मुच्ची की प्रेम कहानी

● सुभाष चंदर

कहानी कुछ ऐसे शुरू करता हूँ।

एक शहर में एक अदद लड़का था और एक नग लड़की थी। लड़का और लड़की दोनों ही इश्किया फिल्मों के शौकीन थे। इश्किया फिल्म देखकर आहें भरते थे—हे भगवान् काश हमें भी यह निगोड़ा इश्क हो जाए। लड़के ने तो बाकायदा मन्नत माँग रखी थी कि जिस दिन वो इश्क के इम्तिहान में पास हो जाएगा, ठाकुरजी के मंदिर में देसी घी के सवा किलो लड्डू चढ़ाएगा। इसके लिए वह काफी यतन भी करता था। मसलन, वह प्रचलित फैशन के हिसाब से बालों का फुग्गा बनाता था, रंगीन छींटदार शर्ट पहनता था, उसके नीचे घिसी हुई जींस धारण करता था। दिन हो या रात, आँखों पर काला चश्मा चढ़ाए रखता था। दिन में कई घंटे आईने को भेंट करता था। उसे कई फिल्मों के डायलॉग याद थे, जिन्हें वह अपनी भावी प्रेमिका को सुनाने के लिए बेताब था। पर उसकी यह मनोकामना सिद्ध नहीं हुई। हारकर उसने एक प्रेम-विशेषज्ञ से संपर्क किया। ये लवगुरु महाराज वाकई गुरु थे, एक अदद बीबी और नौ प्रेमिकाओं को एक साथ अफोर्ड करते थे। कहीं कोई लफड़ा नहीं होने देते थे। ऐसे महानुभावों के तो दर्शन करने से भी पुण्य मिलता है। सो हमारा हीरो, उस लवगुरु की शरण में पहुँचा। जाकर सीधे उसके चरणों में गिर गया।

लवगुरु ने पहले लड़का देखा, उसका जुगराफिया जाँचा, उसकी जेब का हाल मालूम किया। इश्क पर उसके इन्वेस्टमेंट की संभावनाएँ तलाशीं। तब जाकर उवाचे, ''बालक, तेरा भविष्य उज्ज्वल है। इश्क की बिसात पर तेरी गोटी जरूर फिट बैठेगी। मैं तुझे एक लव लैटर डिक्टेट करा देता हूँ। तू कंप्यूटर पर इसकी सात-आठ कॉपी तैयार कर लियो और जहाँ-जहाँ तुझे थोड़ी सी भी संभावना लगे, इन्हें बाँट दियो। कामदेव ने चाहा तो तू जल्दी ही इश्क के मैदान में कबड्डी खेलने लगेगा।'' हीरो ने डिक्टेशन ली। पत्र पढ़कर उसकी बाँछें खिल गईं। उसके मुँह से बेसाख्ता निकल पड़ा—'ये मारा पापड़वाले को।' उसने लवगुरु के दुबारा पैर पकड़ लिये। लवगुरु प्रसिद्ध भए। उसे विजयी भव का आशीर्वाद दिया। लड़का जब जाने लगा तो उसे पीछे से टोककर बोले, ''बालक, इश्क के मैदान में एक बार घुस जाने के बाद कदम पीछे मत हटाइयो। हो सकता है कि लड़कियों के भाई-बाप, नाते-रिश्तेदार तेरे दो-चार दाँत तोड़ दें। तेरी एकाध हड्डी चटका दें। पर उनसे डरने का नहीं है। दाँत नकली लग सकते हैं, हड्डी दुबारा जुड़ सकती है, पर इश्क का चांस एक बार निकल गया तो आसानी से हाथ नहीं आएगा।'' कहकर लवगुरु ने पान का बीड़ा मुँह के हवाले कर लिया। लड़के ने बड़े श्रद्धाभाव से गुरु की बातें गाँठ में बाँध लीं और अपने कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़ गया।

प्रसिद्ध व्यंग्यकार एवं आलोचक। अब तक व्यंग्य पर सात पुस्तकें प्रकाशित। कुल ४१ पुस्तकों का लेखन। इंदिरा गांधी राष्ट्रीय पुरस्कार, डॉ. मेघनाथ साहा पुरस्कार। अट्टहास सम्मान, हरिशंकर परसाई सम्मान से सम्मानित।

पहले राउंड में उसने प्रेम-पत्र की सात कॉपियाँ कंप्यूटर पर तैयार कराईं। तीन प्रतियाँ उसने कॉलेज में, दो पड़ोस में और दो उस टाइप सेंटर में इन्वेस्ट कर दीं, जहाँ वह टाइप सीखने जाता था। सात कन्याओं को प्रेमपत्र वितरित करने के बाद वह उनके जवाब के इंतजार के काम में लग गया। छह पत्रों का जवाब जल्दी आ गया। कॉलेज वाली दो कन्याओं ने तो उसे लगे हाथ थप्पड़ों का भुगतान कर दिया तो तीसरी कन्या के भाई और उसके दोस्तों ने यह काम संपन्न किया। हीरो का मन कॉलेज से तो खट्टा हो गया, पर मीठे की आशा अब भी थी, क्योंकि पड़ोस और टाइप सेंटर के विकल्प अब भी खुले थे। अगले दिन तक पड़ोस का भी जवाब आ गया। एक कन्या ने बताया कि वह पहले से ही इंगेज्ड है, इसलिए सॉरी। दूसरी की अम्मा हीरो की अम्मा से मिलने आ पहुँची। कहना न होगा कि प्रेमपत्र उसके हाथ में था, फिर क्या था, अम्मा ने पहले अपना माथा ठोका, फिर लड़के को। मामला फिर भी काफी सस्ते में निपट गया, क्योंकि अम्मा ने सिर्फ चार-पाँच चप्पलें मारीं और गालियाँ भी एक दर्जन के करीब ही दीं। अब उसकी आशा टाइप सेंटर पर केंद्रित हो गई। वहाँ दो पत्रों का इंवेस्टवेस्ट था। एक लड़की ने तो उसे अपनी शादी का कार्ड थमा दिया। मतलब, यहाँ भी भैंस पानी में थी। पर सातवाँ पत्र जिस पर कन्या रत्न के पास था, उसी पर सारी उम्मीदें टिकी थीं।

अब कहानी को थोड़ा लड़की, यानी कहानी की हीरोइन की तरफ मोड़ देता हूँ। पहले ही बता चुका हूँ कि लड़की फिल्मों की शौकीन थी और उसका पसंदीदा गाना भी था—ऐ काश किसी दीवाने को हमसे भी मोहब्बत हो जाए। वह दिन में तीन बार कपड़े बदलती थी और तीस बार आईना देखती थी। मतलब हर तरह से हीरोइन बनने की पात्रता रखती थी। वैसे उसके मन-मंदिर में तो सलमान खान बसा था, पर अपनी व्यस्तताओं के कारण न तो वह उसका मोबाइल चार्ज करा सकता था, न अपनी मोटर साईकिल पर मॉल ले जा सकता था, और तो और वह उसे पिक्चर भी नहीं दिखा सकता था। सो इन हालातों में उसे एक फुलटाइम आशिक की जरूरत थी, जो ये सब पात्रताएँ पूरी कर देता। वह हमेशा सपनों में देखती कि उसका आशिक उसे कनॉट प्लेस में चाट-पकौड़ी

खिला रहा है, महँगे-महँगे गिफ्ट दिला रहा है, बॉक्स में फिल्में दिखा रहा है और इनसे समय बचने के बाद प्यार की गाड़ी भी हाँक रहा है। सो वह एक अदद इश्क के लिए बेचैन थी और खासी बेचैन थी। इसी बेचैनी के हालातों में उसे हमारे हीरो का लवलैटर मिल गया। बस फिर क्या था, उसका दिल मीटरों उछल गया। पर उसने दिल के भावों को चेहरे पर आने नहीं दिया। रातभर में उसने प्रेमपत्र को बीस-पच्चीस बार पढ़ा। चालीस-पचास बार चूमा और फिर पिया मिलन की आस वाला गान गाकर सो गई। कहना न होगा कि आज उसके सपने में सलमान खान की जगह अपना हीरो गाना गा रहा था।

अगले दिन लड़का और लड़की, नहीं अब उन्हें हीरो और हीरोइन कहेंगे, तो अगले दिन हीरो-हीरोइन पत्र में लिखी जगह पर मिले। हीरो सच्चे भारतीय आशिक की तरह समय से आधा घंटे पहले पहुँच गया। अलबत्ता हीरोइन ने प्रेमिका के किरदार की लाज रखी। वह सिर्फ एक घंटे लेट पहुँची। हीरो ने धड़कते दिल से हीरोइन को गुलाब भेंट किया। लड़की ने थोड़ी ना-नुकुर के बाद स्वीकार कर लिया। उसके बाद बातों का सिलसिला चल पड़ा। कुछ संवाद यहाँ प्रस्तुत हैं, कृपया ध्यान दें कि कोष्ठक के संवाद पात्रों के मन से फूट रहे हैं—

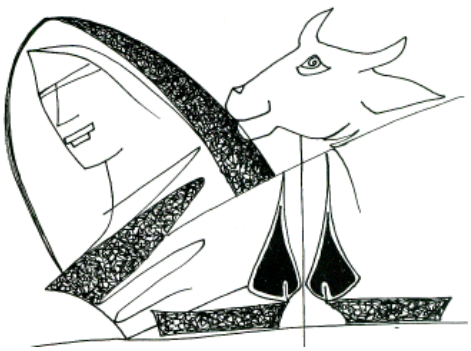

क्यों जी, इतनी चुप क्यों हो, कुछ बोलो ना?

(चुप्पी) क्या बोलूँ, आपने तो मुझे फँसा दिया है। आप जानते हैं, मैंने तो इस बारे में कभी सोचा भी नहीं था। सच्ची, मैं ऐसी लड़की नहीं हूँ (मन में सोचती तो हर वक्त रहती थी, पर किसी कमबख्त ने घास ही नहीं डाली।

सच कहूँ जी, मैं भी ऐसा लड़का नही हूँ, मेरा भी यह पहला प्यार है। मैंने भी आज तक किसी लड़की की तरफ आँख उठाकर नहीं देखा (जब भी देखा, टकटकी लगाकर देखा।)

फिर मुझमें ऐसा क्या था, खिस्सी···हँसने की आवाज!

आप में तो वो बात है, जो दुनिया की किसी लड़की में नहीं। आपकी आँखे प्रियंका चोपड़ा जैसी हैं, नाक कैटरीना जैसी और होंठ तो बिल्कुल करीना जैसे हैं (बोलना तो आगे भी और कुछ चाहता हूँ··· पर पहली मुलाकात में···नो···नो···पाँच सात मुलाकात के बाद ही कुछ बोलूँगा···हो सका तो···)

हुम्मे (शरमाकर) मैं कहाँ ऐसी हूँ, मैं तो बिल्कुल सिंपल सी हूँ, पता नहीं, आपने मुझमें क्या देख लिया (कमबख्त मेरी तुलना इन फटीचर हीरोइनों से कर रहा है, ये तो मेरे आगे पानी भरती हैं, दो-चार मुलाकातें और हो जाने दे···फिर देखूँगी, तू कैसे हीरोइनों का नाम लेता है।)

ये आप क्या कह रही हैं। मैं तो पहली नजर में ही आपका दीवाना हो गया था। सोचता था कि प्यार करूँगा तो सिर्फ आपसे ही, वरना जीवन भर कुँवारा रहूँगा (कब से सोच रहा था, ये डायलॉग मारूँगा, पर ससुरा मौका ही नहीं मिला। अब तुम्हें क्या बताऊँ कि सात को लव लैटर दिए थे, पसंद तो मुझे अपनी क्लास फैलो तृष्णा थी, पर ठीक है, जो मिल गया।)

क्या हुआ···जी, किस सोच में पड़ गए। अच्छा, अभी आपने कहा था कि मैं अगर आपको नहीं मिलती तो आप जीवन भर कुँवारे रहते। क्या इतनी दूर की सोच रहे हैं, बोलिए न, चुप क्यों हैं?

ऐं···(अब क्या बोलूँ, घबराहट में ऐसी बेवकूफियाँ तो हो ही जाती हैं, गजब कर दिया, अपने पैरों पर पहली मुलाकात में ही कुल्हाड़ी मार ली। लड़की सैंटी हो गई तो आफत आ जाएगी।)

सुनो जी, क्या सोच रहे हैं?

कुछ नहीं, अब बताइए, आपको देखने के बाद सोचने को रह ही क्या जाता है। वो क्या···कहा है शायर ने, तुमको देखें कि तुमसे बात करें। (बात तो थोड़ी बनी प्यारे)

खिस्स···आप भी ना (शरमाना), अच्छा सुनिए जी, मुझे शिप्रा मॉल जाना है। एक-दो ड्रेस खरीदनी हैं, आप मुझे वहाँ छोड़ देंगे (पट्ठे पता चल जाएगा मॉल में कि तू कितने पानी में है।)

(ड्रेस खरीदवाएगा तो मामला फाइनल, वरना जय रामजी की, सोच लूँगी, कोई बहाना) हाँ जी, बोलिए छोड़ देंगे, मोटर साइकिल से।

अरे क्यों नहीं, क्यों नहीं···, मोटर साइकिल आपकी···हम आपके, चलिए ना, इसी बहाने आपके साथ कुछ वक्त और गुजर जाएगा (वक्त तो गुजरेगा बेटे, पर सारा जेबखर्च स्वाह हो जाएगा, लड़की को ड्रेस तो दिलवानी ही पड़ेगी, आखिर फर्स्ट इंप्रेशन का मामला है)

चलिए जी, क्या सोचने लगे···(ये तो सोचने लगा, कमबख्त कहीं बाहर छोड़कर ही न चला जाए)

आइए जी, बैठिए, मोटर साइकिल की घर्र-घर्र···

सुनिए, थोड़ा आगे सरककर बैठिए, पिछले पहिये में हवा कम है।

जी, ठीक है··· (ये तो काफी शरारती लगता है, चलो अपना क्या जाता है।) मोटर साइकिल की घर्र-घर्र···

आगे की कहानी में जुड़ता है। हीरो हीरोइन के साथ मॉल जाता है। ड्रेस की दुकान के पास हीरो के कदम ठिठकते हैं, लड़की तड़ाक से हीरो का हाथ अपने हाथ में ले लेती है। नतीजा अच्छा निकलता है। हीरो तीन ड्रेस खरीद देता है। हीरोइन खुश हो जाती है और मोटर साइकिल पर हीरो से चिपककर बैठती है। हीरो का इन्वेटमेंट सार्थक हो जाता है।

तीन-चार मुलाकातों में इश्क काफी आगे बढ़ता है। हीरो हीरोइन का मोबाइल चार्ज कराता है। चाय-पकौड़ी का रसास्वादन कराता है। सिनेमा दिखाता है। गाहे-बगाहे गिफ्ट देता है। बदले में किसी पार्क के कोने में या सिनेमा हॉल के अँधेरे में छुआ-छुई, पुच-पुच का सुख पाता है। हीरोइन खुश है। हीरो इश्क की परीक्षा में पास हो गया। हीरो अपने खर्चे का हिसाब लगाता है, इश्क का सुख उसे खर्चे से बड़ा लगता है और लगभग साल भर तक लगता रहता है। लड़की सुरक्षित दूरी की सीमा को पीछे छोड़कर

आधुनिक सीमाओं में प्रवेश करती है। यानी इश्क की गाड़ी अपनी मंजिल तलाशने लगती है।

कहानी कुछ ज्यादा ही फुटेज ले रही है, सो अब थोड़ा दी एंड की ओर बढ़ा जाए।

एक दिन लड़की के रिश्तेवाले घर आते हैं। उन्हें लड़की पसंद है। लड़का अपने बाप की इकलौती संतान है। बैंक में प्रोबेशनरी ऑफिसर है। घर का मकान है। देखने-सुनने में अच्छा है। हीरो से अच्छा। रिश्ता पक्का हो जाता है। हीरोइन और हीरो फिर मिलते हैं। उनके डायलॉग (मनवाले कोष्ठक के डायलॉगों के साथ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत हैं)

सुनो जी, आज मेरा मन बहुत खराब है।

क्या हुआ जानू?

पता है, आज सुबह मेरा रिश्ता पक्का हो गया (ऊँ···ऊँ···ऊँ···)

हे भगवान्! ये किस को हमारे प्यार की नजर लग गई। (गहरी साँस), रोओ मत, भगवान् ठीक करेगा। भगवान् तो जो करता है, ठीक ही करता है। मैं तो सोच रहा था कि मेरे गले न पड़ जाए, वरना बापू बहुत मारता, लाखों का दहेज मारा जाता।)

तुम बताओ जी, अब मैं क्या)···मन तो करता है कि जहर खाकर जान दे दूँ (सिसकियाँ) (जान दें मेरे दुश्मन)

अरे···अरे···रोओ मत, तुम रोती हो तो दर्द मेरे दिल में होता है (वाह क्या फंडू डायलॉग मारा है प्यारे)

सच्ची कहती हूँ, मैं तुम्हारे बिना एक पल भी नहीं रह पाऊँगी। तुम कहो तो मैं शादी के लिए इनकार कर दूँ, तुम्हारी नौकरी लगने तक मैं इंतजार कर लूँगी (निठल्ले तू बस इश्क के मतलब का ही है, वरना क्या अब तक नौकरी न पा जाता, तेरा इंतजार करे मेरी जूती। मैं तो बैंक अफसर की बीबी बनूँगी) बोलो ना जी, क्या कहते हो?

(गहरी साँस) मैं क्या कहूँ जानू, मैं तो किसी लायक हूँ ही नहीं, माँ-बाप के टुकड़ों पर पल रहा हूँ···और पता नहीं, नौकरी कब तक मिलेगी···(मिल भी जाए तो क्या तुझसे शादी करूँगा, तेरा कंजूस बाप कुछ देगा भी।)

(सिसकियाँ) तो तुम क्या कहते हो, मैं जीते जी उस नर्क में गिर जाऊँ। सच कहती हूँ जी, तुम्हारे बिना तो मैं एक पल भी नहीं जी पाऊँगी!

(गहरी साँस) क्या कहा जानू, मजबूरी है। तुम मेरा इंतजार भला कब तक करोगी। तुम्हारी दो बहनें और भी तो हैं, मेरी मानो तो··· (गहरी साँस)···तुम शादी कर ही लो (सिसकियाँ)

सुनो जी, अब तुम रोने लगे, प्लीज मत रोओ, देखो, हम दोनों एक-दूसरे से हमेशा प्यार करते रहेंगे, शादी के बाद भी।

सच कहती हो ना, मुझसे शादी के बाद भी प्यार करोगी?

हाँ-हाँ··· हमेशा करूँगी, मेरे देवता, (सिसकियाँ) तो जानू अब पक्का रहा न कि मुझे अपने घरवालों की मरजी से शादी करनी पड़ेगी। रिश्ते को हाँ कर दूँ ना···(रिश्ता तो पहले ही पक्का हो गया है, लल्लू, मैं तो तुझे सिर्फ खबर कर रही हूँ।)

हाँ···हाँ···हाँ···कर दो, सच कहूँ, मेरा दिल फटा जा रहा है (अच्छा हुआ, बला टली)

तो जानू, अब में चलूँ, लड़केवाले अब भी घर पर हैं।

ठीक है जानू, तुम जाओ···

अच्छा चलती हूँ, सुनो, मैंने सुना है, लड़केवाले शादी के लिए जल्दी कर रहे हैं, अगले महीने ही शादी हो जाएगी। सुनो, अब हम आगे नहीं मिल पाएँगे, मेरी मजबूरी समझ रहे हो ना, प्लीज···समझ लेना··· (लल्लू, ये सब मैं इसलिए कह रही हूँ कि तू शादी में कोई बवाल न कर दे)

हाँ···हाँ, जानू, मैं नहीं चाहता कि बदनामी से तुम्हारी शादी टूट जाए। ठीक है, तुम्हारी खातिर मैं अपने दिल पर पत्थर रख लूँगा, पर तुमसे कभी नहीं मिलूँगा···बाय···जानू!

···बाय मेरे राजा, मेरे हीरो, अच्छा हाँ, सुनो···मेरा मोबाइल रिचार्ज करा देना, चलती हूँ···

हीरोइन चली जाती है। हीरो कुछ देर वहीं खड़े होकर मुक्ति का आनंद लेने के लिए एक सिगरेट फूँकता है। अपने मोबाइल से संभावित गलफ्रेंड का नंबर मिलाता है। कुछ पुराने डायलॉग दोहराता है। भावी गलफ्रेंड से मिलने का टाइम फिक्स हो जाता है। अब वह निर्णय लेता है कि वह लड़की का मोबाइल रिचार्ज नहीं कराएगा। इस प्रोजेक्ट पर और इन्वेस्टमेंट करना बेकार है।

इस घटना के कुछ दिन बाद हीरोइन की सहेली मिलती है।

क्यों री, मैंने सुना है, तू शादी कर रही है?

हाँ···री, अगले हफ्ते ही तो शादी है। मेरे होनेवाले वो ना बैंक में अफसर हैं। देखने में बिल्कुल हीरो जैसे हैं, हमारी जोड़ी खूब जमेगी।

अरी वो तो ठीक है, पर वो लड़का, जिससे तेरा अफेयर चल रहा था···उसका क्या होगा?

मैंने क्या उसका ठेका ले रखा है, वो भी कर लेगा कहीं शादी···हुम्म···

पर तुम लोग तो एक-दूसरे के पीछे दीवाने थे, एक साथ जीने-मरने की कसमें खाते थे।

तो क्या हुआ?

फिर भी बता न, तूने उससे शादी क्यों नहीं की?

अरी, तू पागल है क्या, उस निठल्ले से शादी करके क्या करती। क्या कमाता, क्या खिलाता, खाली इश्क से पेट भरता क्या···और सुन, एक बात और कहूँ, अपने कान जरा पास ला।

हाँ···बोल!

(फुसफुसाकर) शादी तो मैं किसी अच्छे करेक्टेर के लड़के से ही करूँगी, वो तो कमीना···

सहेली का मुँह खुला रह जाता है, इतना खुला कि एक मक्खी उसमें घुस जाती है और कुछ देर घुम-घामकर साबुत बाहर निकल आती है।

आधुनिक युग की एक सच्ची प्रेम-कथा का अंत यों भी होता है।

जी-१८६-ए, एच.आई.जी. फ्लैट्स
प्रताप विहार, गाजियाबाद-२०१००९ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९३११६६००५७

जग वसंत की अगवानी में बाहर निकला

● अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी

इधर कई वर्षों से देख रहा हूँ, निर्वेद वसंत के अवसर पर प्रकाशित होनेवाले निबंधों का स्थायी भाव होता जा रहा है और उससे शांत रस झरने लगा है। वसंत की मादकता में अलस हो जाना तो समझ में आता है, पर निर्वेदी हो उठने का कोई कारण नहीं सूझता। वसंत अपने प्रभाव से आपको पागल न बना सका, यह आपकी बलिहारी, पर इस मौसम में आप पर सुस्ती क्यों छाती जा रही है, यह समझ में नहीं आ रहा है। सनक का समय तो फगुआ का है, होली का है। कहते हैं, फागुन में बुढ़वा देवर लागे। पर ठहरिए, यह वसंत है, वसंत। संवत्सर का सर्वस्व। यह परमपुरुष के यज्ञ का आज्य है—'वसन्तोऽदीजाज्यं ग्रीष्म इध्म शरध्दवि:' ऋग्वेद में आया है। यह सरस्वती के समारोहपूर्वक पूजन का अवसर है और अपनी जवानी को महान् लक्ष्यों के लिए उत्सर्ग करने के लिए तैयार रहने का समय है। निर्वेद को यहाँ न जगह है, न जगह होनी चाहिए। स्वयं श्रीकृष्ण ने जिस ऋतु को अपना स्वरूप माना है—ऋतूनां कुसुमाकर: ऐसा कहकर, उस ऋतु में कर्म, ज्ञान और भक्ति का ज्वार नहीं महाज्वार उमड़ना चाहिए। उस ऋतु में बचपन, तरुणाई, जवानी ही नहीं, वार्धक्य से भी आगे जाकर लोकसंग्रह की बात करनी चाहिए। एक गीत की कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं—

अपने हँसते शैशव से अपनी खिलते यौवन से
प्रौढ़तापूर्ण जीवन से हम करें राष्ट्र आराधन,
हम करें राष्ट्र का अर्चन, हम करें राष्ट्र का अर्चन
हम करें राष्ट्र आराधन— आराधन।

पर नहीं, वसंत आ गया है और हम अपना रोना लेकर बैठे हैं कि आधुनिकता की हवा में अब बगिया को कोई नहीं पूछता है, पनघट सूख रहे हैं आदि-आदि। हम अपना मन इस बात को लेकर खराब किए जा रहे हैं कि अब तिललियाँ नहीं बचीं और आमों पर मंजरियाँ नहीं दीख रहीं। बहुत संभव है, आप व्यस्त और शायद उनसे भी ज्यादा अस्त-व्यस्त जीवन में वसंत की पदचाप सुन नहीं पा रहे हों। पर बात ऐसी है नहीं, वसंत के आगमन की मुनादी हो चुकी है। वसंत आ गया है। वसंत विलस रहा है, यहाँ-वहाँ और न जाने कहाँ-कहाँ! आप जरा खिड़कियाँ तो खोलिए अपने मकान की। आपको दीख जाएगी सामने की लगभग सूख चली वल्लरी पर आ रही कोंपलों की लाली। सप्ताह भर रुक जाइए, यही लाली तरुण हरियाली में बदल जाएगी। फूल-पत्तों से लदी पूरी वल्लरी आप तक यह संदेश पहुँचा देगी कि वसंत आ गया है। वसंत वत्सर का आह्वान है उठने और जाग जाने का। आप देखें, हमारा कलेंडर कैसे आरंभ होता है। जनवरी का महीना शीत में ठिठुरता है और उसकी जगह पर मुसकराता वसंत फरवरी महीने में आ धमकता है। थका-थका सा शीत जब अपनी निशानी छोड़कर जा रहा होता है तो वहीं से वसंत अपना वैभव गढ़ना शुरू करता है। वसंत नवनिर्माण है, वह अवशेष की उपेक्षा नहीं, नवरचना की तपस्साधना है।

हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति मुख्य प्रबंधक (राजभाषा), यूको बैंक।

प्राकृतिक रंग हमारे मनोभावों को शायद सबसे स्वाभाविक और सटीक रूप से अभिव्यक्त करते हैं। रंग हमारे ही नहीं हमारी ऋतुओं के मूड को भी अच्छी तरह से व्यक्त करते हैं। वसंत अपने को पीले रंग में अभिव्यक्त करता है। यही कारण है कि इस ऋतु में पीत वस्त्र धारण करने की परंपरा रही है। इसका कारण स्पष्ट है। सारा उत्तर भारत इस मौसम में सरसों के फूलों से जगमगाते विशाल मैदानों से पट जाता है। सरसों के फूलों का पीलापन ही शायद हमें पीले वस्त्र पहनने को उकसाता है। आदमी है तो आखिर अनुकरणशील ही न। पर महज अनुकरणशील अंधानुकरणशील नहीं। पीले रंग में प्रफुल्ल तत्परता झलकती है। यह रंग आपसे एक सीधा संवाद कर रहा हो, ऐसा लगता है। यह जागृति का रंग भी है, तत्परता का भी। यह रंग सूर्य की भास्वर किरणों का प्रतीक है। वे किरणें, जो जीवन की पोषक हैं और जिनके कारण सूर्य का एक नाम 'पूशन' भी है। इसमें मुखरता है, आशावाद है तथा गर्मजोशी भी। पीला गुलाब मित्रता, हर्ष तथा अच्छे स्वास्थ्य का प्रतीक है।

जिस रंग का संबंध जीवन की गतिशीलता से है, उत्सर्ग की भावना से है, वह रंग है पीला। वैष्णव परंपरा में इस रंग को बहुत महत्त्व दिया गया है। श्रीहरि विष्णु और उनके अवतार श्रीकृष्ण पीतांबर (पीला वस्त्र) धारण करते हैं। हल्दी पीले रंग का सुलभ प्राकृतिक स्रोत है। यह प्रमाणित हो चुका है कि हल्दी में त्वचा को पुष्ट करनेवाले तत्त्व पाए जाते हैं। अनुमान है कि आरंभ में जब चिकित्साशात्र इतना विकसित नहीं था, संक्रमण से त्वचा की रक्षा के लिए कपड़े को हल्दी में रँगकर पहना जाता होगा। शुभ अवसरों पर किसी प्रकार के संक्रमण से बचने के लिए हल्दी में रंजित वस्त्र ही पहनाए जाते होंगे। इस प्रकार पीत रंजित वस्त्र शुभ अवसर के प्रतीक भी हो गए। भोजपुरी अंचल में आज भी मांगलिक

अवसरों पर पीले रंग में रँगी धोती तथा साड़ी पहनी जाती है। विवाह मंडप में वधू को हल्दी से रँगी साड़ी पहनाकर ही बिठाया जाता है। ऐसी साड़ी को 'पियरी' कहते हैं। आसन्न ग्रीष्म में जो सूर्य प्रचंड होकर चमकनेवाला है, वह अपना पूर्वाभास भी वसंत के पीताभ रंग में दे देता है। इसपर विचार करने की आवश्यकता है कि वसंत का पीले वस्त्रों से जो सायुज्य है, उसके और कौन से कारण हो सकते हैं।

वसंत के साथ जुड़े होने के कारण पीले रंग को हम वासंती भी कहते हैं। वासंती हमारी अशेष उत्सर्गशीलता का प्रतीक है। उत्सर्ग प्रकृति का भी प्राथमिक गुण है। वृक्षों की महत्ता फलोत्सर्जन के उनके स्वभाव के कारण ही तो है। नदियाँ भी इसीलिए पूजी जाती हैं कि वे अपना पानी स्वयं नहीं पीतीं, अपनी प्रजा के लिए बहती जाती हैं। इसी प्रकार बादल हैं, सूर्य है और चंद्रमा भी। अपना सर्वस्व उत्सर्ग करके अपने जीवन को सार्थक करनेवाले हमारे प्रणम्य वीरों ने कभी गाया भी था—मेरा रंग दे वसंती चोला। सुभद्रा कुमारी चौहान ने प्राकृतिक परिवेश के परिप्रेक्ष्य में वसंत के निरुस्वार्थ उत्सर्ग भाव को अविस्मरणीय अभिव्यक्ति दी है—

फूली सरसों ने दिया रंग
मधु लेकर आ पहुँचा अनंग।
वधु वसुधा पुलकित अंग-अंग
है वीर वेश में किंतु कंत।
वीरों का कैसा हो वसंत?

अस्तु, मैं इस निबंध के शीर्षक के लिए बाबा नागार्जुन का आभार व्यक्त करते हुए आगे बढ़ना चाहता हूँ। प्रकृति ने हमें जिन विभिन्न ऋतुओं का उपहार दिया है, उनमें वसंत का महत्त्व इस बात के लिए भी है कि वह नवनिर्माण और उत्सर्ग का संदेश एक साथ लेकर आता है, सारा परिवेश बदलते हुए। वसंत अंतर्मन में व्याप्त जड़ता को दूर करने तथा जहाँ हैं वहाँ से आगे बढ़कर सूर्य के महातप का स्वागत करने की प्रेरणा देता है। वसंत तभी हम सबका आराध्य हो जाता है। वसंत हमें प्रमाद से बचने तथा जीवन को सुशोभन बनाने की आकांक्षा का ही दूसरा नाम है। यह हमारे सामाजिक जीवन का शक्तिस्रोत है। वसंत मकर संक्रांति का फलागम है। यह धरती पर औषधियों का कारण है तथा मानवों में काम बनकर उनकी सक्रियता का साक्षी है। श्रीमंत वसंत की आहट नि:शेष हो चुके प्राणों में पुलक भर देती है। दिशाओं को स्वच्छ करके दृष्टि का विस्तार करती है तथा मन में उमंग भरकर मित्र-अमित्र का भेद मिटा देती है। वसंत के स्वागत में ठूँठ पलाश भी अपने सिर पर कलगी सजाकर शामिल हो जाते हैं। अज्ञेय 'ऋतुराज' नामक अपनी कविता में कहते हैं—पीत वसन दमक उठे तिरस्कृत बबूल अरे ऋतुराज आ गया।' ऋतुराज अर्थात् वसंत की आहट पाकर सबमें होड़ लग जाती है सज-धज के साथ वसंत की अगवानी करने की। बाबा नागार्जुन के शब्दों में सुनें—

दूर कहीं पर अमराई में कोयल बोली
परत लगी चढ़ने झींगुर की शहनाई पर।
वृद्ध वनस्पतियों की ठूँठी शाखाओं में
पोर-पोर टहनी-टहनी का लगा दहकने
टेसू निकले मुकुलों के गुच्छे गदराए
अलसी के नीले पुष्पों पर नभ मुसकाया
शीत समीर गुलाबी जाड़ा धूप सुनहली
जग वसंत की अगवानी में बाहर निकला।

वसंत की यही अमोघता है कि वह सबको मथकर रख देता है। वह सबको मथकर सबका सर्वोत्कृष्ट भाव बाहर लाता है। बच्चे का बचपन कैसा खिलता है वसंत में देखिए, तरुणाई किस प्रकार उमगती है वसंत में निरखिए, जवानी कैसे हुंकारती है वसंत में लखिए, और बुढ़ापा किस प्रकार मुसकाता है वसंत में जानिए, अगर जानना चाहते हैं तो। रही बात प्रकृति की तो बाबा नागार्जुन की उक्त पंक्तियाँ सामने हैं ही। दिगंत को गुंजरित करती कोयल की काकली कानों में रस घोल रही है। पोर-पोर से पल्लवित पलास आँखों को विश्राम लेने का कोई मौका नहीं देना चाहता। शीतल तथा मंद समीर त्रिविध तापों को हरने को जैसे तैयार ही बैठा है। प्रकृति तथा परिवेश की ये सारी चेष्टाएँ कहती हैं कि सबकी आँखों का तारा हमारा वसंत आ रहा और संसार उसके स्वागत में पलक पाँवड़े बिछाए बैठा है।

जरा यह विचार करें कि संवत्सर में यदि वसंत न होता तो क्या होता। एक वैज्ञानिक इस प्रश्न पर अलग ढंग से विचार करेगा। वह शायद कहे कि तब शीत ऋतु लंबी होगी ऊँचे आक्षांशों पर और ग्रीष्म ऋतु लंबी होगी निचले अक्षांशों पर। पर हम इस दृष्टि से विचार नहीं करेंगे। हम तो कहेंगे कि सारा संवत्सर चक्र ही फिर गड़बड़ा जाएगा। जीवन में जड़ता का लंबा सिलसिला चलेगा या सुस्ती का अछोर विस्तार सबको अपने पाश में लेकर बैठ जाएगा। वसंत जाड़े का प्रगंभ भाव है, उसका परिपक्व फल। यह ग्रीष्म की प्रस्तावना भी है, उसकी तैयारी भी। यह वर्ष भर की निरामयता के लिए जड़ी-बूटी का पौष्टिक अवलेह हो जैसे। आयुर्वेद भी कहता है कि हमें शरीर को वर्षभर दुरुस्त रखने की आवश्यक तैयारी इसी ऋतु में कर ली जानी चाहिए। वसंत पुरातन पर नूतन की विजय का अहिंसक अभियान है। तभी तो सारा जग इस अभियान का साक्षी बनने के लिए

वसंत जाड़े का प्रगंभ भाव है, उसका परिपक्व फल। यह ग्रीष्म की प्रस्तावना भी है, उसकी तैयारी भी। यह वर्ष भर की निरामयता के लिए जड़ी-बूटी का पौष्टिक अवलेह हो जैसे। आयुर्वेद भी कहता है कि में शरीर को वर्षभर दुरुस्त रखने की आवश्यक तैयारी इसी ऋतु में कर ली जानी चाहिए। वसंत पुरातन पर नूतन की विजय का अहिंसक अभियान है। तभी तो सारा जग इस अभियान का साक्षी बनने के लिए बाहर निकल आया है। पक्षियों के रुद्ध कंठ खुले हैं, पल्लवों के पुट विकसित हुए हैं, हवाओं में सनसनी घुली है, सूर्य प्रखर होने लगा है तथा रातें ज्यादा मुखर हो रही हैं।

बाहर निकल आया है। पक्षियों के रुद्ध कंठ खुले हैं, पल्लवों के पुट विकसित हुए हैं, हवाओं में सनसनी घुली है, सूर्य प्रखर होने लगा है तथा रातें ज्यादा मुखर हो रही हैं। किसी असमिया कवि ने कहा है—

पलाश रंगाली होल
मनो रंगाली होल।
पखिला उरिबर होल
फागुनो आहिबर होल॥

फागुन (वसंत) एक बार फिर से अपने अनूठेपन के साथ, प्रकृति मंच पर आ डटा है। पर उसके सहचर हम क्यों ठिठके खड़े हैं, वह क्या है, जो हमारी जड़ता को जड़े जा रहा है; वह क्या है, जिससे जगाने में कोयल की काकली भी विफल हो रही है। आखिर वह क्या है, जिसके कारण हवा की अनछुई छुअन भी असमर्थ हुई जा रही है हमें पुलकित करने में और तितलियों का लघु ,पर उन्मुक्त जीवन भी खींच नहीं पा रहा है जिसे अपनी ओर? यह है आत्म का अनात्म हो उठना। आत्म-विस्मृति में चले जाना। अपने आप से अनजान हो उठना। गालिब ने फरमाया है—

हम वहाँ हैं, जहाँ से हमको भी
कुछ हमारी खबर नहीं आती।

निर्वेद सच पूछिए तो वसंत ही है, जो हमको हमारी ही खबर लाकर देता है। वसंत का संदेश यह है कि हम अपने आप के प्रति, अपने परिवेश के प्रति और अपने दायित्व के प्रति जाग्रत् रहें। स्वयं के प्रति हमारी जागृति हमें सौंदर्य की साधना की ओर ले जाती है, परिवेश के प्रति हमारी जागृति हमें वृक्षों, जलाशयों, पशु-पक्षियों से जोड़ती है और अपने दायित्वों के प्रति जागृति हमें अपना सर्वस्व निछावर करने को प्रेरित करती है। विराट् की इसी प्रेरणा से संवत्सर के यज्ञ में वसंत आज्य बना है। हमारे पूर्वजों ने हर युग में वसंत का यह संदेश ग्रहण किया है। इस संदेश से नई पीढ़ी को अवगत कराने का ही एक उपक्रम है वसंतोत्सव का आयोजन। हमारे देश के विभिन्न भागों में ही नहीं, दुनिया के अनेक देशों में भी वसंत अपनी इसी प्रासंगिकता के लिए पूजा जाता है। यह हमारे लिए खेद का विषय होगा कि हम वसंत के आगमन पर निर्वेद के शिकार हो जाएँ। ऐसा यदि होता है तो हमारी एक सामाजिक क्षति होगी।

मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) यूको बैंक,
मानव संसाधन प्रबंध विभाग प्रधान कार्यालय
१० बी.टी.एम. सरणी, कोलकाता-७००००१

ऐ मेरे वतन···

कविता

● तन्वी सिंह

ऐ वतन मेरे वतन, मेरे वतन!
है मुझे भारत माँ की कसम,
पीछे न कभी हटाएँगे कदम
ऐ वतन मेरे वतन!
न जान की फिकर, न मौत का भय है,
हारेंगे न हम कभी, जीत हमारी तय है,
ऐ वतन, मेरे वतन!
दुश्मनों की छाती को छलनी हम कर जाएँगे
हँसते-हँसते माँ की गोद में सो जाएँगे,
देश हमारा अमर रहे, अमर रहे, अमर रहे···
हर बार ये कहते जाएँगे,
ऐ वतन, मेरे वतन!

हार कभी न मानी है, जीत के दिखाएँगे,
हममें है हिम्मत कितनी, दुनिया को बताएँगे,
ऐ वतन मेरे वतन!
न सोचा हमने कभी,
अपनी उस प्यारी माँ को,
गोद में जिसके महफूज हम रहते थे,

न सोचा हमने कभी,
उस परायी लड़की को,
माँग में भरके जिसके सिंदूर,
हम अपना बनाकर लाए थे,

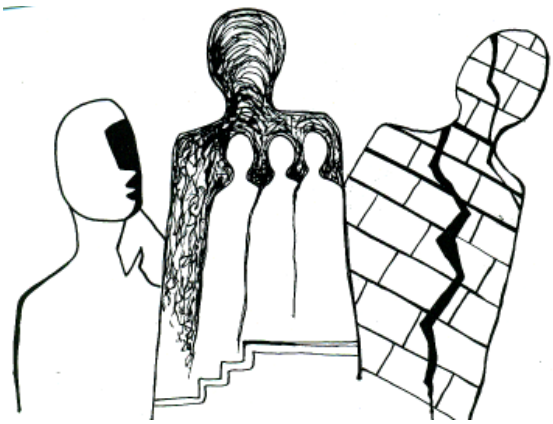

न सोचा हमने कभी,
अपने प्यारे बाबा को,
जिनके हाथों ने हमें,
मुश्किलों से लड़ना सिखाया,
न सोचा हमने कभी,
उस मासूम गुड्डे-गुड़िया को,
पूरी को जिसने पापा कहके मुझे दिखाया,
सोचा है हमने सिर्फ
अपने प्यारे तिरंगे को,
लहरें इसकी हम कभी, कम न होने देंगे,
अपनी भारत माँ की आँखें,
नम कभी न होने देंगे,
गर सोचा किसी ने,
करने को तबाह तिरंगे को,
बताएँगे फिर औकात हम उन फिरंगियों को,
मिटा देंगे उनकी आन-बान और शान को,
लगा के अपनी जान की बाजी,
बचाएँगे 'तन्वी' अपने हिंदुस्तान को,
ऐ वतन, मेरे वतन!

मान्लय हाउस, महावीर कॉलोनी
अनपरा मोड, सोनभद्र-२३१२२४
दूरभाष : ०९६७०३०१७०९

फ़िजी में रामायण मेला

● सीतेश आलोक

भारत से लगभग बारह हजार किलोमीटर सुदूर पूर्व दिशा में बसे छोटे से फिजी द्वीप में, अक्तूबर २०१६ में, पहला अंतरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन हुआ। यह सर्व विदित है कि हमारे देश से १८७९-१९१६ के बीच लगभग ६०९६५ नागरिक अंग्रेज सरकार ने पानी के जहाज द्वारा फिजी में गन्ने की खेती के लिए भेजे थे। रोजगार के लोभ में वे सभी लगभग छह माह की कठिन यात्रा करते हुए वहाँ पहुँचे। मार्ग का उबाऊ एवं दुखदायी समय काटने के लिए उनके पास रामचरित मानस की गुटका थी, जो वे अपनी पोटली में बँधे अपने फटे-पुराने कपड़ों के साथ ले जाना नहीं भूले थे। फिजी में चार-पाँच पीढ़ियाँ बीत जाने के बाद भी, उनके वंशज रामचरित मानस से अपना नाता नहीं भूले हैं। उनके निर्वासन के जीवन-काल में रामचरित मानस, जिसे वे अब 'तुलसी रामायण' कहते हैं, निरंतर उनके साथ आशा की किरण बनकर संबल प्रदान करती रही है।

उनके फिजी के प्रारंभिक जीवन काल की एक घटना आज रामकथा के प्रति उनकी आस्था का प्रमाण बनकर चिर-स्मरणीय बन चुकी है। अंग्रेजी शासन काल में जब स्थानीय अधिकारी-गण जनता के बीच 'एलिजाबेथ महरानी की जय' का नारा लेकर पहुँचे तो जनता ने 'रामायण महारानी की जय' का नारा लगाया। मानस आज भी 'तुलसी रामयण' बनकर उनकी जीवनशैली का अभिन्न अंग बनी हुई है। अधिकांश भारत-वंशियों के घर पूजागृहों में रामचरित मानस की प्रति पाई जाती है और उनके पारस्परिक वार्त्तालाप में उसकी चौपाइयाँ उद्धृत होती रहती हैं। यद्यपि उनकी भाषा मूल फिजीवासियों की भाषा के प्रभाव में बदलते हुए कुछ नया रूप ले चुकी है, फिर भी उनकी भाषा में अवधी-भोजपुरी आदि के अनेकानेक शब्द स्पष्ट रूप से सुनाई देते हैं।

उनके विद्यालयों में बच्चों को मानस पढ़ाई जाती है और आए दिन उनके बीच मानस अथवा रामकथा पर आधारित भाषण, अभिनय आदि की प्रतियोगिताएँ होती रहती हैं। अनेक विद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है और अब यह प्रयास चल रहा है कि आठवीं जैसी प्रारंभिक कक्षाओं तक हिंदी अनिवार्य कर दी जाए। देश में अनेकानेक रामलीला मंडलियाँ हैं, जो अपने-अपने ढंग से राम-कथा का प्रचार-प्रसार करती हैं।

ऐसे वातावरण में आश्चर्य है तो बस यह कि अब तक रामायण को आधार बनाकर कोई बड़ा, अंतरराष्ट्रीय स्तर का कार्यक्रम क्यों नहीं हुआ! यह भी सर्व विदित है कि फिजी की भाँति ही मॉरिशस, त्रिनिडाड, सूरीनाम आदि कुछ अन्य देशों में भी भारतीय मजदूर भेजे गए थे और वहाँ भी वे सब भारतीय संस्कृति को कुछ अंशों में अपनी जीवन-शैली में बनाए रखे हुए हैं।

सुपरिचित लेखक। कहानी, कविता, लेख, व्यंग्य, गजल आदि देश की सभी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों आदि में और तमिल, असमिया, पंजाबी, गुजराती, उड़िया, मराठी, भोजपुरी, अंग्रेजी आदि में अनूदित होकर प्रकाशित। अनेक रचनाएँ आकाशवाणी पर प्रसारित एवं प्रतिनिधि संकलनों में सम्मिलित। दर्जन भर पुरस्कारों से सम्मानित।

ऐसे रामकथा-प्रेमियों के मन में रामायण पर सत्संग का विचार उत्पन्न हो तो क्या आश्चर्य! इसी के फलस्वरूप एक 'फिजी सेवा संघ' नामक स्थानीय संस्था ने रामायण पर महा-सम्मेलन करने का बीड़ा उठाया और उन्हें सहयोग दिया फिजी में भारत के उच्चायोग ने। अनेक भारतीय मूल के व्यवसायी संगठनों ने भी आर्थिक सहयोग का आश्वासन दिया और परिणामस्वरूप एक तीन-दिवसीय अंतरराष्ट्रीय रामायण सम्मेलन की योजना बनी।

इस सम्मेलन में रामकथा संबंधी सभी विषयों पर चर्चा का प्रयास किया गया, जिसमें काव्य, चरित्र-चित्रण, जन्म का समय, राम-जन्म की प्रामाणिकता, तत्कालीन शासन-व्यवस्था, वन-यात्रा का मार्ग रामलीला, का मंचन आदि अनेकानेक विषय सम्मिलित किए गए। इसमें भारत, मॉरीशस, त्रिनिडाड, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेसिया, गायना आदि के अनेकानेक विद्वानों ने भाग लिया, साथ में कुछ स्थानीय विद्वान् तो थे ही।

व्यवस्था यह थी कि प्रात: साढ़े आठ से रात को साढ़े आठ तक, बीच में भोजन तथा चाय-पान के लिए लगभग दो घंटे निकालकर, निरंतर विद्वानों द्वारा रामकथा संबंधी प्रसंगों पर चर्चा होती थी। दिन में चार-पाँच सत्र होते थे, जिनमें पाँच-छह वक्ता होते थे। व्यवस्था यह थी कि प्रत्येक को बोलने के लिए लगभग २०-२५ मिनट का समय ही मिल पाता था।

जहाँ वक्ताओं को समय की कमी का दु:ख था, वहीं आयोजकों को चिंता यह थी कि कोई वक्ता समयाभाव के कारण छूट न जाए,

क्योंकि वक्ताओं के अतिरिक्त उनके कार्यक्रम में अयोध्या से बुलाई गई एक रामलीला मंडली द्वारा प्रसंग-विशेष का मंचन भी समायोजित होना था और स्थानीय कलाकारों, विद्यालयों द्वारा कुछेक रामकथा संबंधी प्रस्तुतियाँ भी होनी थीं। साथ ही योजना यह भी थी कि विदेश से आए हुए वक्ताओं का समुचित सम्मान हो, और किसी स्मारिका के लिए उन सबके चित्र भी लेकर सहेजे जाएँ।

इन सबके साथ अच्छा यह होता कि कुछ समय प्रश्नोत्तर आदि के लिए भी निकाला जाता। हाँ, यह भी सच है कि प्रश्नोत्तरों में अनेक व्यर्थ के प्रश्न पूछे जाते हैं और बहस बढ़ती ही जाती है, भटकन की सीमा तक। कार्यक्रम की योजना देखते हुए आयोजक उतना ही कर पाए, जितना उनसे हो पाया।

ऐसे आयोजनों में अपेक्षा यह रहती है अधिक श्रोता उपस्थित रहें। इस दृष्टि से किसी को निराशा नहीं हुई। थोड़ी-बहुत देर से ही सही, संभवत: दस बजते-बजते आयोजन का दीर्घाकार प्रेक्षागृह लगभग भर जाता था। चाय एवं भोजन के अवकाश में कुछ श्रोताओं और वक्ताओं के बीच संवाद भी होते रहते थे।

देश-विदेश से आए वक्ताओं में सर्वाधिक भारत से ही थे—स्वाभाविक भी था, क्योंकि राम-कथा की आधारभूमि होने के साथ ही, भूगोल तथा जनसंख्या की दृष्टि से भारत सबसे बड़ा देश है। भारत से डॉ. नरेंद्र कोहली, डॉ. सीतेश आलोक, डॉ. मल्लिकार्जुन राव, डॉ. चंद्रकांता कीनरा, डॉ. नारायण प्रसाद कुमार, डॉ. सरोज बाला, डॉ. राम अवतार, श्री राकेश पांडेय, श्री नवेंदु कुमार वाजपेयी, डॉ. जवाहर करनावत, डॉ. योगेंद्र प्रताप सिंह शामिल हुए। अन्य देशों से आए विद्वानों में प्रमुख थे डॉ. राजेंद्र अरुण (मॉरिशस), डॉ. राम प्रसाद परसराय (त्रिनिडाड), डॉ. बालकृष्ण मुनिअप्पन (सिंगापुर), पं. जगमोहन परसाद (गायना), डॉ. विनोद बाला (मॉरिशस), डॉ. पूजा कुमार तथा डॉ. शैलेश द्विवेदी (ऑस्ट्रेलिया)। फिजी तथा निकटवर्ती द्वीपों से आए विद्वानों में प्रमुख थे पं. मकरंद भट्ट, डॉ. इंदु चंद्रा, डॉ. राम राजेंद्र प्रसाद और श्रीमती मनीषा प्रकाश।

इस बृहद आयोजन में प्रमुख सहयोग रहा फिजी में भारत के उच्चायुक्त श्री विश्वास सपकाल और उनके द्वितीय संस्कृति अधिकारी श्री अनिल जोशी का। वैचारिक प्रस्तुतियों से इतर योगदान था डॉ. मुनिअप्पन, का जिन्होंने रामायण कालीन शासन व्यवस्था का विशेष विवरण दिया। इसी प्रकार डॉ. राम अवतार की प्रस्तुति में उन १९८ स्थानों का खोजपूर्ण वर्णन था, जहाँ होते हुए श्रीराम अयोध्या पहुँचे थे और डॉ. सरोज बाला का जिन्होंने (स्व.) डॉ. अब्दुल कलाम के सहयोग से, रामायण में वर्णित नक्षत्रीय स्थितियों के आधार पर रामजन्म का समय (अब से सात हजार वर्ष पूर्व) निर्धारित किया था।

इन तीन दिनों के बाद भी कुछ दिन सूवा और नंदी में बिताने का अवसर मिला। दिन में पिकनिक तो कभी म्यूजियम-अर्काइव जैसे स्थानों पर फिजी को जानने-समझने के अवसर। सूवा और नंदी के विश्वविद्यालयों में भी वैचारिक आदान-प्रदान का अवसर प्राप्त हुआ। कभी दिन के समय भोजन का आयोजन और कभी रात्रि-भोज के बहाने परिचय और स्वागत के आयोजन भी हुए।

फिजी एक बहुत ही खुला हुआ और साफ-सुथरा छोटा सा देश है। कहीं भी थोड़ी ही दूर पर सागर-तट आ जाता है। हवा शुद्ध और प्रदूषण रहित है। पानी अत्यंत साफ और शुद्ध इतना कि 'फिजी वाटर' नाम से अनेकानेक देशों को बोतलों में बंद करके निर्यात किया जाता है। कुछ दूरी पर एक झरना है, जहाँ का पानी अनेकानेक रोगों से मुक्त करने का गुण रखता है, ऐसी मान्यता है। वहाँ पहुँचने के लिए विदेशों से रोगी भी आते रहते हैं। हाँ, सुना है वहाँ रोगियों की लंबी पंक्ति रहती है, जहाँ प्रतीक्षा में कभी-कभी एक सप्ताह तक का समय लग जाता है। इस पानी का उल्लेख गूगल पर 'फिजी मिरेकॅल वाटर' नाम से उपलब्ध है।

वहाँ ताजमहल या अक्षरधाम जैसे दर्शनीय स्थल तो नहीं हैं किंतु प्रकृति की गोद में, भीड़-भाड़ से दूर साँस लेने का सुख भरपूर है। हाँ, भारतवंशियों के लिए एक चिंता का विषय यह है कि वहाँ की जनसंख्या में उनकी भागीदारी पचास प्रतिशत से घटकर अब चालीस प्रतिशत से भी कम रह गई है। कारण बस यह कि उनकी नई पीढ़ी पढ़-लिखकर व्यवसाय के लिए ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अमेरिका जैसे समृद्ध देशों की ओर पलायन करती रहती है। परिणामस्वरूप, राजनीतिक भागीदारी एवं प्रभाव में भी उनकी कमी आई है।

साअ

बी-१२० (प्रथम तल)
सेक्टर-२६, नोएडा-२०१३०१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९८९१३५७६६३

इस अंक के चित्रकार

मृत्युंजय मिश्रा

जन्म : ११ जुलाई, १९७३।

शिक्षा : बी.कॉम., एम.ए. (हिंदी एवं अंग्रेजी)।

कृतित्व : राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर के अनेक समाचार-पत्रों में रेखाचित्र प्रकाशित तथा आर्ट वेबसाइट पर आर्ट वर्क संग्रह।

संपर्क : *रामसागर पारा, धमतरी (छत्तीसगढ़)-८९३७७३*

कहानी

गॉड ब्लैस यू...

● वंदना मुकेश

क्या वह बीमार था? कैसे हुई होगी उसकी मौत? क्या वह उस समय अकेला होगा? क्या उसने मुझे भी याद किया होगा? ऐरन, उसके कुत्ते का क्या हुआ होगा?

उससे मेरी मुलाकात सेंट्रल लाइब्रेरी में अचानक ही हो गई। मैं इंग्लैंड में तब नई-नई आई थी। बच्चों के स्कूल और पति के नौकरी पर जाने के बाद मेरे पास समय ही समय था। सो मैं बरमिंघम शहर से पहचान करने के खयाल से अकसर निकल पड़ती थी। यहाँ आने पर ही पता चला कि जैसे भारत में आम आदमी सूर तुलसी, निराला, दिनकर को नहीं जानता, वैसे ही यहाँ भी आम आदमी शेक्सपियर, वड्र्सवर्थ टी.एस. इलियट, जी.बी. शॉ को नहीं जानता। वैसे मैं तो चाहती थी कि किसी से पढ़ी-लिखी अंग्रेज महिला से दोस्ती हो जाए तो कम-से-कम यहाँ की भाषा को बेहतर समझने के साथ-साथ यहाँ की संस्कृति की प्रामाणिक जानकारी जुटा सकती हूँ। लेकिन अचानक तो दोस्ती नहीं होती। वैसे अंग्रेजी बिना बोले भी अकसर मुसकराकर काम चल जाता था। बड़े-बड़े सुपर-स्टोरों में बिना बोले ही लाखों की खरीदी की जा सकती थी। पैसे देते वक्त भी एक मुसकराहट और कार्ड का पिन नंबर याद रखने भर से काम चल जाता था। सुधीर ने तो मेरे साथ अंग्रेजी न बोलने की कसम खा रखी थी। बच्चे दोनों भाषाओं का प्रयोग कर रहे थे। मुझे लगा, मेरी भाषा खत्म—हिंदी भी और अंग्रेजी भी।

हाँ, तो उस दिन मैं लाइब्रेरी में बड़े ध्यान से अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि पी.बी., शैली की पुस्तक ढूँढ़ रही थी। पुस्तक नहीं मिली तो वहीं बैठकर कुछ और पढ़ने बैठ गई। देखा, सामने टेबल पर 'पोएम्स बाय पी.बी. शैली' उल्टी रखी थी। शायद कोई पढ़ रहा था, लेकिन आस-पास कोई दिखा नहीं। मैं अभी सोच ही रही थी कि सिगरेट का एक तेज भभका नाक में ऐसा घुसा कि आँखों से पानी आ गया। फौरन रूमाल से आँखें पोंछी, खोलीं तो देखा, एक दरमियाने कद का मोटा सा अंग्रेज एक हाथ में कॉफी का बड़ा सा गिलास लिये आया, उसने कॉफी टेबल पर रख दी और किताब खोल ली। अब मैंने उसे और ध्यान से देखा। वह गंजा था लेकिन कानों के ऊपर घुँघराले, गहरे भूरे बाल कंधों तक लंबे लटक रहे थे। आँखों पर सुनहरे रंग का मोटा-सा चौकोर फ्रेम का चश्मा चढ़ा था। एक हाथ में सोने का एक मोटी जंजीर जैसा ब्रेसलेट और दूसरे हाथ में राडो की काले रंग की घड़ी। उसने झकझकी सफेद कमीज पहन रखी थी, लाल-सफेद धारियोंवाली नीले रंग की चौड़ी-सी टाई। काले-नीले रंग का चौखाने की डिजाइन का ब्लेजर। निश्चित ही किसी संभ्रांत परिवार का होगा। न जाने क्यों, उसे देखकर मुझे लगा कि महाकवि वड्र्सवर्थ ऐसे ही दिखते होंगे। वह बड़ी गंभीरता से कुछ पढ़ता और साथ में कुछ लिखता भी जाता। मुझे लगा, जरूर यह कोई अंग्रेजी का प्राध्यापक है। उससे बात करने का मन तो हुआ लेकिन वह इस कदर गंभीरता से पढ़ रहा था कि व्यवधान डालना उचित न लगा। मैंने सोचा, 'शैली' की कविताएँ फिर कभी ले जाऊँगी। लाइब्रेरी तो अकसर आना-जाना लगा रहता है।

सुपरिचित लेखिका। 'नौवें दशक का हिंदी निबंध साहित्य एक विवेचन' (शोध प्रबंध), पत्र-पत्रिकाओं और साहित्यिक पुस्तकों, वेब पत्र-पत्रिकाओं में विविध विषयों पर कविताएँ, संस्मरण, समीक्षाएँ, लेख एवं शोध-पत्र प्रकाशित।

यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन भारत सरकार द्वारा विशिष्ट सम्मान, 'महिला राष्ट्रीय ज्योति पुरस्कार'। संप्रति इंग्लैंड में अध्यापन एवं स्वतंत्र लेखन।

एक दिन सुधीर के एक दोस्त आनंद ने साहित्य में मेरी रुचि जानकर मुझसे पूछा, 'सुमि, मैं और शोभना एक काव्य-गोष्ठी में जा रहे हैं, चलोगी?'

मैंने पूछा, 'अंग्रेजी में?'

वह बोला, 'नहीं संस्कृत में। हम हँस पड़े।'

'कहाँ?'

यहाँ फाइव वेज के पास ही एक चर्च में।'

'हाँ, जरूर, कब है?'

'शनिवार, दोपहर तीन बजे।'

'बच गए, यार हम तो, हमारा तो मैच है।' सुधीर मुझे चिढ़ाने के लिए एकदम उछलते हुए बोले।

शनिवार-शाम को किसी के घर पर निमंत्रण था। सो यह तय हुआ कि सुधीर और बच्चे गोष्ठी खत्म होने पर मुझे लेने चर्च आ जाएँगे। उस दिन मौसम बहुत ही खूबसूरत था। धूप खिली थी। ठंड का नाम नहीं। सोचा, साड़ी पहनी जाए। एक पल भी सोचा नहीं, साड़ियों का सूटकेस खोला, तो सबसे ऊपर ही गुलाबी रंग की, चिकन की कढ़ाईवाली लखनवी साड़ी रखी थी। वही निकाली, पहनने सँभालने में भी सरल। साड़ी पहनकर मन को भी बड़ा अच्छा लगा।

फाइव-वे के पास टैस्को के पीछे यूनीटैरियन चर्च के एक हॉल में साड़ी पहनकर अकेले जाते हुए मुझे बड़ा अटपटा-सा लग रहा था। हॉल के बाहर काव्य-गोष्ठी का सूचना पट्ट रखा था। भवन में घुसते ही एक पल के लिए मैं बौखला गई। वहाँ करीब बीस-पच्चीस, गोलाकर सजी कुरसियों पर लोग बैठे थे, मैं किसी को भी नहीं जानती थी। मैं भी चुपचाप जाकर एक खाली कुरसी पर बैठ गई। दोबारा एक नजर दौड़ाने पर एक चेहरे पर मेरी नजर टिक गई। दिमाग पर जोर डाला, अरे यह तो वही था, जो पिछले महीने सेंट्रल लाइब्रेरी में मिला था। तभी उस आदमी ने बिल्ली पर एक रचना पढ़ी, उसे मैंने अतिरिक्त ध्यान से सुना। लेकिन कुछ विशेष समझ में नहीं आया। आनंद, जिसने मुझे बुलाया था, वह नहीं दिखा, मुझे गुस्सा आया। थोड़ी देर में आनंद और शोभना आते दिखाई दिये। वे मुझसे काफी दूर, सामने की तरफ बैठ गए। अन्य सभी लोगों ने भी अपनी-अपनी कविताएँ पढ़ीं। कुछ समझ में आईं, कुछ नहीं। गोष्ठी की समाप्ति पर अगली गोष्ठी की सूचना देते हुए उस आदमी ने परचे बाँटे। उसका नाम शायद हंफ्री था। परचे पर छपा था— एपल एंड मिरर पोइट्री ग्रुप, नीचे अन्य जानकारी के साथ पता भी था। उसे बिना पढ़े ही मैंने अपने बैग में रख लिया। गोष्ठी खत्म होने पर आनंद और शोभना सहित बाकी लोग भी सबसे हैलो-हाय करते हुए गले मिले। चाय के दौरान हंफ्री खुद मेरे पास आया और बोला, 'हैलो, मेरा नाम हंफ्री डिक्सन है।'

'मैं सुमि, सुमि मेहरा।'

'क्या गुलाबी तुम्हारा पसंदीदा रंग है?' उसने मेरी साड़ी को देखते हुए पूछा।

'हाँ, लेकिन···तुम्हें कैसे···'

मेरी बात को लगभग बीच में ही काटते हुआ हंफ्री बोला, 'तुम लाइब्रेरी में भी गुलाबी कमीज पहने थीं।'

मैं एकदम अचकचा गई। मुझे आश्चर्य हुआ कि उसे भी न सिर्फ यह याद था कि उसने मुझे लाइब्रेरी में देखा था बल्कि यह भी कि मैंने किस रंग के कपड़े पहने थे। इसका मतलब यह पढ़ने का बहाना कर रहा था।

मैंने तुरंत विषय बदलते हुए उसे काव्य-पाठ करने के लिए बधाई दी। उसने तुरत ही मुझे फोटोकॉपी पकड़ा दी। मैंने एक नजर डालकर रचना में आए बिंबों के प्रयोग और अन्य विशेषताओं की तथा इंगित किया। उसे अच्छा लगा। मेरा विश्लेषण सुनकर एक-दो अंग्रेज महिलाएँ और पुरुष, जो निकट ही खड़े थे, आश्चर्य और प्रसन्नता मिश्रित भाव लिए मेरे निकट आकर मुझसे बातें करने लगे। कोई अंग्रेजी का शिक्षक था, कोई कवि। मुझे वहाँ अच्छा लगा। मैंने मन में सोचा कि इन लोगों से मिलते-जुलते रहने से मेरी बौद्धिक आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है। इनसे दोस्ती करना मेरे लिए बहुत अच्छा रहेगा, मैं इन लोगों से मिलती रहूँगी।

आनंद हंफ्री को जानता था, हंफ्री ने मुझे आनंद और शोभना को अगली काव्य-गोष्ठी में आने के लिए निमंत्रण दिया। अगली गोष्ठी उसके घर पर थी। मैंने उसे कहा, 'आनंद और शोभना ले आएँगे तो आऊँगी।'

हम तीनों साथ-साथ बाहर निकले। हंफ्री हाथ मिलाते हुए बोला, 'मुझे भी निकलना होगा। ऐरन को अकेले तीन घंटे से ज्यादा हो गए हैं।' वह अपनी छतरी हिलाता हुआ तेज कदमों से निकल गया।

उसके जाते ही आनंद बोला, 'बड़ा पैसेवाला है। इसने जिंदगी में कभी काम नहीं किया। कवि है। बड़ा चेंटू है। जब-तब फोन करता है। मैं तो इसका फोन ही नहीं उठाता अब! तुम भी बचकर रहना। यह तो अकेला है यार, अपन तो बाल-बच्चेदार हैं। और हाँ, पता है, ऐरन कौन है? मेरे बगैर पूछे ही वह बोलता रहा, 'इसका कुत्ता! कम-से-कम साढ़े तीन फुट ऊँचाई है। वह भी बड़ी किस्मतवाला है।···'

'तुम लोग जाओगे इसके यहाँ?' मैंने आनंद और शोभना से पूछा।

आनंद अपने मस्तमौला अंदाज में हँसते हुए बोला, 'एक दर्जन कविताओं का डोज सात-आठ महीने के लिए काफी है। मैं तो उसके घर हो आया, अब तुम भी तो जाओ।'

सुधीर की गाड़ी आती दिखी, मैं भी बाय करके निकल ली।

लगभग एक माह बाद हंफ्री का फोन काव्य-गोष्ठी में बुलाने के लिए आया।

'तुम बहुत खूबसूरत हो।'

एकबारगी समझ में नहीं आया कि क्या जवाब दूँ, लेकिन फिर अपने परिचितों से सुना था कि अंग्रेज लोग अकसर बातचीत का सिलसिला इसी तरह शुरू करते हैं तो मैंने सकुचाते हुए 'धन्यवाद' कहकर बात खत्म करना चाही।

'उस दिन तुम गुलाबी साड़ी में परी की तरह लग रही थीं।'

मैं कुछ असहज हो गई, लेकिन शिष्टतावश कह दिया, 'सुंदरता देखनेवाले की आँखों में होती है।'

'तुम आओगी न?'

कुछ सोच पाती, उसके पहले ही मुँह से 'हाँ' निकल चुका था।

मैं गोष्ठी में जाना चाहती थी, लेकिन अकेले नहीं। सो मान-मनौवल कर सुधीर को तैयार किया। न जाने क्या सोचकर मैंने शिफॉन की सुनहरी जरीवाली गुलाबी साड़ी पहनी। नियत समय पर हम उसके घर पँहुचे। उसने दरवाजा खोला तो सिगरेट का एक तेज भभका हमारी नाकों में घुसा। ऐसा लगा कि यहीं से वापस हो जाएँ। लेकिन शिष्टाचार कुछ और कहता है, सो हम भीतर घुस गए। ऐसा लगा मानो, विक्टोरियन युग में पहुँच गए। बत्ती जलने के बाद भी अंधकार-सा था। अँधेरा-ही-अँधेरा। आँखें अभ्यस्त होते ही मैंने नारी स्वभाव के अनुरूप एक जायजा लिया। कमरे के बीचोबीच छत से लटके एक गंदे भूरे रंग के लैंपशेड में एक बल्ब टिमटिमा रहा था और उस पर रोशनी से स्पष्ट दिखता, मकड़ी का एक जाला। छोटा सा, चौरस कमरा। सामने की ओर कमरे के अनुपात में कुछ बड़े, दो बेडौल, बदरंगे सोफे आमने-सामने पड़े थे। जिनसे कमरा लगभग तीन-चौथाई घिरा हुआ था। उन सोफों पर चढ़ा कपड़ा अँधेरे में भी एकदम गंदा दिख रहा था। हमारी तरफ पीठवाला

सोफा खाली था, जिसमें एक तरफ बैठने के कारण गड्ढा पड़ गया था। सामनेवाले सोफे पर दो आदमी पैर सिकोड़े बैठे थे, उन्हें मैंने पिछली गोष्ठी में देखा था। बीच में एक बड़ी सी पुरानी टेबल थी। जिसपर ढेरों जिल्द चढ़ीं किताबें बेतरतीब पड़ी हुई थीं। जमीन पर एक निहायत ही भद्दे से रंग का कारपेट बिछा था। एक कोने में किताबों का एक और ढेर पड़ा था। दीवारें सिगरेट के धुएँ के कारण मटमैली हो चुकीं थीं। बदरंग दीवारें बड़ी मनहूस लग रही थीं। बाईं तरफ की दीवार पर मोने की कोई पुरानी पेंटिंग थी, जिसके रंग और फ्रेम भी दीवारों की तरह बदरंग हो चुके थे। दाईं तरफ पूरी दीवार पर खिड़की थी। उस खिड़की पर हंफ्री और उसके कुत्ते ऐरन का एक पुराना सा फोटो रखा था। खिड़की के परदे भी अन्य चीजों की भाँति बदरंग और भद्दे थे। कमरे में मुश्किल से चलने भर की जगह थी। हमारी दाईं तरफ खिड़की के पास एक गंदा-सा स्टूल और एक छोटी टेबल पर एक बाबा आदम के जमाने का टाइपराइटर रखा था।

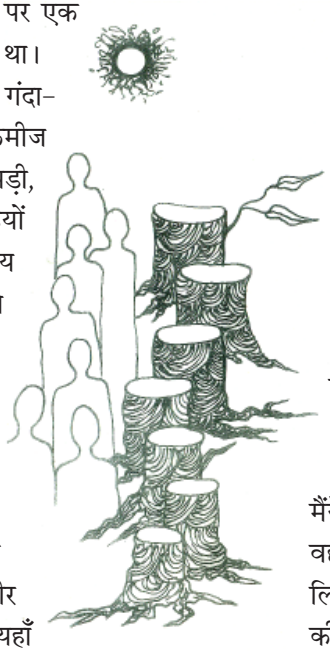

अब हंफ्री को देखा, उसने एक पुराना, गंदा-सा ढीला-ढाला जींस और मटमैली सफेद कमीज पहन रखी थी। उसके जेवर, यानि चश्मा घड़ी, ब्रेसलेट आदि यथास्थान नाक और कलाइयों पर थे। उसने हम सबका आपस में परिचय करवाया और सोफे की तरफ इशारा करते हुए हमें बैठने को कहा। सुधीर झट से छोटी टेबल के साथ रखे स्टूल पर बैठ गए और मुझे मजबूरन सोफे पर बैठना पड़ा। सोफा एकदम चिक्कट, मैला। उफ! मेरी धुली इस्तरी की हुई साड़ी···। उसने मुझे ड्रिंक के लिए पूछा। हर तरफ गंदगी का साम्राज्य देखकर मैंने तो मना कर दिया। लेकिन सुधीर ने ऑरेंज जूस ले लिया। हे भगवान्! मैं यहाँ क्यों आई, अब यह प्रश्न बेमानी था। सुधीर मेरे मनोभावों को पढ़ चुके थे। सो कविताएँ सुनीं और जल्दी ही बच्चों का वास्ता देकर निकल लिए। 'कॉन्सन्ट्रेशन कैंप' की भयावहता अब जाकर समझ में आई। बाहर आकर हम दोनों ने ही खूब गहरी-गहरी साँसे लीं, स्वच्छ हवा के मिलते ही जी में जी आया। वरना थोड़ी देर भी और अंदर बैठते तो कम-से-कम मैं तो घुटन से मर ही जाती।

मुझे एकदम से आनंद पर गुस्सा आने लगा और मैं बोल पड़ी, 'ये आनंद भी न, जब इसे पता था तो बता नहीं सकता था। अभी जाकर फोन करती हूँ, बदमाश!'

सुधीर शुद्ध हवा को फेफड़ों में भरपूर भरते हुए बोले, 'तुम जानती तो हो उसे···।'

फिर एक दिन हंफ्री ने धन्यवाद देने के लिए फोन किया।

'तुम्हारे ऊपर गुलाबी रंग बहुत खिलता है।'

उसका यों खुलकर मेरी प्रशंसा करना मुझे अच्छा नहीं लगा। अगर मैं उसे कह देती तो शायद वह कभी मेरे रूप की इस कदर प्रशंसा नहीं करता। लेकिन हमारी दोस्ती पर प्रभाव पड़ता। मैं थोड़ा सावधान हो गई। खासतौर से, जब से आनंद और सुधीर मजाक में बोले कि तुमने उसका विकेट गिरा दिया सुमि, वह तुम्हें चाहने लगा है!

आनंद और शोभना के जाने के बाद मैंने इस बात पर सुधीर से काफी लड़ाई की। सुधीर मेरी नाराजी को समझकर मनाते हुए बोले, 'अरे, हम तो मजाक कर रहे थे।'

मैं और भी भड़क गई, 'मुझसे इतना भद्दा मजाक करने की तुमने सोची भी कैसे? वह मुझसे ऐसे कैसे प्यार कर सकता है। उसकी उमर तो देखो! मैं शादीशुदा दो बच्चों की माँ हूँ।'

'यार, तुम इतनी सीरियस क्यों रही हो, छोड़ दो न, सुमि! इसके बारे में आनंद ने बताया है मुझे, हंफ्री बुरा आदमी नहीं है।' फिर एक गहरी साँस छोड़ते हुए बोले, बस अकेला है, बेचारा। इनकी सोच, इनका समाज हमसे अलग है। पता है तुम्हें, आनंद कह रहा था कि उसके पास कोई आता-जाता तक नहीं। एक बहन है, वह बहुत समृद्ध है। वह कोई रिश्ता नहीं रखना चाहती। इसने शादी नहीं की। जब पैसा था तो लड़कियाँ भी मिल जाती थीं दोस्ती के लिए। लेकिन पैसा नहीं है तो सब दूर भागते हैं। उसके घर का हाल देखा! बाप का पैसा कब तक चलता? मुझे नहीं लगता कि अब उसके पास कुछ बचा है। बेचारा···' सुधीर उसके बारे में काफी कुछ जानते थे।

अब पुन: उसके लिए मेरी दया का झरना झर-झर बहने लगा।

फिर उसने मुझे कई बार गोष्ठियों में अपने घर पर बुलाया लेकिन मैंने हर बार बच्चों का या सुधीर का कोई-न-कोई बहाना बना दिया। वह यह अच्छी तरह समझ गया कि मेरी जिंदगी में मेरा परिवार ही मेरे लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है। उसने मुझसे कभी-कभी फोन पर बात करने की इजाजत ली। वह बड़ी शिष्टता के साथ बात करता और हर बार परिवार के सब सदस्यों के विषय में पूछता और अंत में 'गॉड ब्लेस योर फैमिली' कहना न भूलता।

फिर वह अकसर फोन करने लगा। फोन पर असंख्य विषयों पर बातें होतीं, जिसमें अकसर हिंदू धर्म, ईसाई धर्म, देश, परिवार अंग्रेजी साहित्य, राजनीति, संस्कृति आदि अनेक विषयों पर चर्चा होती थी।

फिर बहुत दिनों बाद एक बार उसने मुझसे पूछा, 'तुम मेरे साथ बाहर खाना खाने चलोगी?'

मैंने उसे टाल दिया। मैं दकियानूस तो नहीं थी। लेकिन मैं ऐसा कुछ नहीं करना चाहती थी कि जिससे उसकी गलतफहमी और पुष्ट हो।

'ओह, क्षमा करना, हमारी संस्कृति भिन्न है, लेकिन मैं तुम्हें पीड़ा नहीं पँहुचाना चाहता।' वह एकदम नरमी से बोला।

'तुम मुझसे नाराज तो नहीं हो न?'

'नहीं।'

बस ऐसे ही न जाने कितने फोन। जब वह कोई नई कविता

लिखता तो फोन कर के सुनाता। मैं भी ध्यान से सुनती, फिर उस पर चर्चा होती। यदि मैंने कुछ लिखा होता तो मैं भी उसे अपनी रचना का सार समझा देती। वह कभी-कभी कहता कि अकेलापन श्राप है। मुझे तो सिर्फ इस बात से सुख मिलता था, मैं कभी-कभार उसका अकेलापन बाँट लेती हूँ।

हमारी बात अकसर घर के टेलीफोन पर ही होती थी। कभी मेरे बच्चे फोन उठा लेते और शालीनतापूर्वक उसे रुकने के लिए कहकर जब मुझे बुलाते तो वह बच्चों की बहुत प्रशंसा करता, कहता कि तुम्हारे बच्चे बड़े शिष्टतापूर्वक बात करते हैं, आजकल ऐसे बच्चे दिखाई नहीं देते। कभी-कभी सुधीर भी उससे हाल-चाल पूछ लेते थे। उसे अच्छा लगता था।

उसकी बातों से पता चलता था कि उसकी जिंदगी डॉक्टर, ऐरन, चर्च और फोन तक ही सीमित रह गई थी।

'सुमि, तुम्हें हंफ्री का मतलब पता है?'

'नहीं, क्या है?'

'शांतिप्रिय योद्धा।'

'और ऐरन का अर्थ जानती हो?'

'नहीं।'

'जिसको ज्ञान प्राप्त हो गया हो, एनलाइटंड'

'सुमि, उसका नाम मैंने रखा है।...पता नहीं, लेकिन मुझे ऐरन शांतिप्रिय योद्धा भी लगता है और एनलाइटंड भी, मैं तो बहुत बेचैन रहता हूँ।' उसकी आवाज एकाएक गहरी बेबस उदासी से भर गई।

एक दिन फोन पर उदास सी आवाज आई, 'सुमि, तुम्हें पता है, ऐरन को कैंसर है। अगर मुझे कुछ हो गया तो इसे कौन देखेगा?'

'सुनो सुमि, मुझे तेज फ्लू हो रहा है, घर में कुछ खाने को नहीं है, क्या तुम बाज़ार से मेरे लिए कुछ सामान ला दोगी? मैंने खरीदनेवाले सामान की सूची तैयार रखी है, लेकिन मुझे बुखार है, जा नहीं सकता।'

मैंने कहा, 'जरूर।'

'मैं अपना जन्मदिन नहीं मनाता अब।'

सो मैं उसके जन्मदिन पर एक केक, बिस्किट के डिब्बे और सेव-संतरे लेकर उसके घर चली गई। घंटी बजाने पर उसने खिड़की में से झाँका। वह मेरे अचानक पँहुचने से बहुत गद्‌गद हो गया था। उसने दरवाजा खोला। सिगरेट के अपेक्षित भभके को नजरअंदाज करते हुए मैंने उसे हाथ मिलाकर जन्मदिन की बधाई दी तो उसने अंग्रेजी तहजीब के अनुरूप सहज कृतज्ञता के भाव से मेरे गाल पर एक हल्का सा चुंबन देते हुए धन्यवाद कहा। उसका मुँह इतना करीब होने के कारण सिगरेट का धुआँ मेरी आँखों में भर गया और गंध दिमाग में। एक तो अप्रत्याशित, दूसरे दुर्गंध! न चाहते हुए भी चेहरे पर शिकन आ ही गई। जब उसने मेरा चेहरा देखा तो उसे समझने में देर न लगी कि मुझे उसका यों मुझे चुंबन लेना अच्छा नहीं लगा। जिस तेजी से उसने मेरे चेहरे के भाव पढ़े उसी तेजी से मैंने उसके ग्लानि-भरे भावों का अनुभव किया। जिसके कारण मैं स्वयं भी अपराध-बोध से भर गई। उसने तो वही किया था जो अंग्रेजों में एक सामान्य शिष्टाचार था। उसके बाद मैं दस मिनट बैठी तो सही, लेकिन बातचीत में सहजता का अभाव और अनजाना सा तनाव व्याप गया। मैं जानती थी, वह हमारी मित्रता का सम्मान करता था। उस अकस्मात्, अनपेक्षित चुंबन और सिगरेट की दुर्गंध के कारण मेरे चेहरे पर उभर आए घबराहट और घृणा के मिले-जुले भावों को देखकर वह भी बुरी तरह घबरा गया था। मैं फौरन ही यह बहाना बनाकर निकल पड़ी कि बच्चों के स्कूल जाना है। मेरा यह झूठ भी उसकी अनुभवी नजरों से छिपा नहीं रहा। उसने मुझे रोका नहीं।

सुधीर को बताया तो उनके प्रतिक्रियाहीन व्यवहार से ऐसा नहीं लगा कि वे मेरी मानसिक स्थिति को समझ पाए। मैंने सोचा, यदि ज्यादा चर्चा करूँगी तो मुझे ही दोषी ठहरा दिया जाएगा कि तुम्हीं दया की देवी बनती हो...। लेकिन मेरा मस्तिष्क उस घटना से उबर नहीं पाया था। निरंतर विचार चल रहे थे कि क्या कभी पुरुष नारी को समझ सकता है, पुरुष छोड़ो! पति, जिसके साथ १२ साल से रह रही हूँ, वह भी...? कैसी अजीब बात है, साथ-साथ रहते हुए भी हम एक-दूसरे को नहीं जानते। पति-पत्नी, माँ-बाप, भाई-बहन कोई भी किसी को नहीं जानता। सब अजनबी हैं एक-दूसरे के लिए। फिर खुद ही समाधान हो गया कि वह तो वास्तव में अजनबी है। उससे अपेक्षा क्यों? न हमारी भाषा एक, न परिवेश। मैं फिर हंफ्री के प्रति नरम पड़ गई।

तीन-चार दिन कोई फोन नहीं आया। फिर एक शाम फोन बजने पर फोन सुधीर ने उठाया और हंफ्री का फोन था। हैलो के आदान-प्रदान के बाद फोन सीधा मुझे पकड़ा दिया।

'क्या तुम अब भी मुझसे नाराज हो?'

'क्या तुम मुझे माफ नहीं करोगी?'

'नहीं, माफी जैसी कोई बात नहीं है।' मैंने सहज भाव से कहा।

'क्या हम दोस्त बने रह सकते हैं?'

'जरूर!'

'धन्यवाद, गॉड ब्लेस योर फैमिली'

स्पष्ट रूप से वह मुझे खोना नहीं चाहता था। उसका अकेलापन...उसकी सरलता, उसके प्रति मुझे सहानुभूति, दया का भाव उमड़ने लगा। मैं जानती थी कि वह निरापद है। सिर्फ अपने अकेलेपन से लड़ने के लिए वह मुझे फोन करता था। मैं यह भी जानती थी कि मन के किसी कोने में वह मुझसे प्यार करता है। लेकिन इस बात का पूरा प्रयास करता था कि मैं उसकी किसी बात से आहत न हो जाऊँ। पहले हुए वाकये से वह अतिरिक्त सजग रहता था। बातचीत के दौरान वह बार-बार मुझसे पूछता था कि क्या यह बात तुम्हारे यहाँ शिष्ट मानी जाती है। इसका अर्थ क्या होता है...इत्यादि। मैं उसका दिल नहीं तोड़ सकती थी। हमारी मित्रता फोन-मित्रता ही अधिक थी। लेकिन फिर भी मैं उसके स्वर से उसके मूड़ का अंदाज लगा लेती थी और उन विषयों पर बात करती थी, जिससे उसे अच्छा लगे। अकसर ईसाई धर्म पर ढेर बातें होती थीं। दरअसल वह बोलता और मैं बीच-बीच में उसकी बात पर सहमति-असहमति जताती चलती थी। एक अच्छे श्रोता की तरह।

गरमियों के दिन थे। एक दिन फोन पर कुछ खोई-खोई सी आवाज में वह मुझसे आग्रहपूर्वक बोला, 'सुमि, मैं तुम्हारे साथ एक बार हारबोर्न के सेंट पीटर्स चर्च में चलना चाहता हूँ।' मैं कुछ बोल पाती, उसके पहले फिर अपने वाक्य को सुधारते हुए बोला, 'तुम अपने पति और बच्चों को भी साथ ला सकती हो, इन दिनों वह चर्च बड़ा खूबसूरत लगता है। वहाँ हर समय एक अद्‌भुत शांति रहती है, मन को एक अनोखा सुकून मिलता है। तुम मेरे साथ जरूर चलना एक बार।'

मैंने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा, 'जरूर हंफ्री, मैं जरूर आऊँगी तुम्हारे साथ।'

'सुमि, आज मैं बहुत खुश हूँ। मैं डेट पर जा रहा हूँ इस शनिवार, आने पर बताऊँगा।' फोन पर उसकी चहकती हुई आवाज आई।

'नहीं सुमि' वह मेरी तरह की नहीं थी। मुझे···कोई···तुम्हारी तरह की लड़की चाहिए, उसे साहित्य में कोई रुचि नहीं थी। वह तो बस मेरा पैसा और घर चाहती थी।···

उस साल छुट्टियों में हम लोग भारत चले गए। आते ही बच्चों का स्कूल। मैं भी एक नर्सिंग होम में स्वयंसेवी की तरह शाम को एक घंटे के लिए वहाँ रहनेवाले बुजुर्गों से मिलने जाने लगी। वहाँ काम करते हुए बड़ी शिद्‌दत से यह महसूस हुआ कि वास्तव में ही अकेलापन श्राप है और अकेलेपन से भरा बुढ़ापा उससे भी बड़ा। यहाँ मैंने बहुत कुछ सीखा। मैंने अनुभव किया कि मेरे मन में एक कोना हंफ्री के लिए भी था।

दो-तीन बार हंफ्री को फोन किया। वह नहीं था सो आंसरिंग मशीन पर संदेश छोड़ दिया। जब-जब उसने फोन किया तो हम नहीं थे, उसने भी मैसेज छोड़ा। मैं बच्चों से पूछ रही थी कि कोई संदेश तो नहीं है फोन पर और वे एक-दूसरे को 'गॉड ब्लेस' कहते हुए हँस रहे थे। मैंने डाँटा, तो बोले, 'मम्मा मिस्टर डिक्सन को फोन कर लेना।' फिर मैंने फोन किया, लेकिन हमारी बातचीत का योग नहीं बना। हम एक-दूसरे के लिए संदेश ही छोड़कर ही समाचार लेते रहे। वह हर संदेश में कहता था कि उसके लिए हमारी यह मित्रता बहुत ही कीमती है। उसके हर संदेश का अंत 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' की दुआ से होता था।

फिर मैं काफी व्यस्त हो गई। इधर काफी दिनों से हंफ्री का फोन भी नहीं आया था। फरवरी का महीना था, उसका साठवाँ जन्मदिन आ रहा था। हमारी मित्रता को भी पाँच साल हो रहे थे। इधर नर्सिंग होम के काम ने मेरी संवेदना को झकझोर के रख दिया था। मैं अकसर हंफ्री के बारे में सोचा करती कि कैसे अकेलापन उसकी मजबूरी बन गया है। वह और भी ज्यादा अंतर्मुखी हो गया था। उसके फोन-संदेशों का यही सार था।

उस दिन उसका जन्मदिन था। मैंने कार्ड पर लिखा, 'मेरे सबसे अच्छे दोस्त के लिए', बच्चों और सुधीर से भी सुबह ही लिखवा लिया था। एक गिफ्ट बैग में अच्छी तरह रैप कर के एक बुकमार्क और बिस्किट रखे। फिर बस का डे-टिकिट लिया और बस में बैठ गई। वहाँ समाचार-पत्र पड़ा था, सो पढ़ने के लिए उठा लिया। ऑबिच्युरी का पन्ना खुला था। उस पन्ने पर पहली सूचना हंफ्री डिक्सन के देहांत की थी। उसका स्वर्गवास तीन सप्ताह पूर्व हो चुका था। मुझे यकीन नहीं हुआ। मैं एक गहरा धक्का लगा।

इस बार मैंने फिर उसे सरप्राइज देने की सोची, सोचा कि उसके जन्मदिन पर उसके लिए छोले-पूड़ी ले जाऊँगी। मैंने कार्ड खरीदा। उसे खुश देखने का खयाल लुभावना था।

उस दिन उसका जन्मदिन था। मैंने कार्ड पर लिखा, 'मेरे सबसे अच्छे दोस्त के लिए', बच्चों और सुधीर से भी सुबह ही लिखवा लिया था। एक गिफ्ट बैग में अच्छी तरह रैप कर के एक बुकमार्क और बिस्किट रखे। फिर बस का डे-टिकिट लिया और बस में बैठ गई। वहाँ समाचार-पत्र पड़ा था, सो पढ़ने के लिए उठा लिया। ऑबिच्युरी का पन्ना खुला था। उस पन्ने पर पहली सूचना हंफ्री डिक्सन के देहांत की थी। उसका स्वर्गवास तीन सप्ताह पूर्व हो चुका था। मुझे यकीन नहीं हुआ। मैं एक गहरा धक्का लगा। मैं बार-बार खबर पढ़ती, पता देखती कि कोई और होगा, लेकिन सारे अक्षर गड्‌ड-मड्‌ड हो गए। जब यकीन हो गया कि खबर मेरे कवि मित्र हंफ्री की ही थी तो मुझे समझ ही नहीं आया कि मैं क्या करूँ। फ्यूनरल सर्विस हारबोर्न के उसी चर्च में थी, जहाँ वह अकसर मुझे ले जाने की बात करता था। उसे वह चर्च बहुत अच्छा और शांतिदायक लगता था। उसका अंतिम संस्कार अगले दिन सॉमरसेट में था, केवल करीबी रिश्तेदारों के लिए। क्या उसकी वह नकचढ़ी बहन आएगी उसके अंतिम संस्कार में? ऐरन का क्या हुआ होगा? क्या वह जीवित था या डॉक्टर ने पहले ही उसे मौत की नींद का इंजेक्शन दे दिया होगा?

क्या उसने मुझे याद किया होगा?

मेरा बस-स्टॉप निकल चुका था। मैं बहुत भारी मन से घर लौटनेवाली बस में बैठ गई।

मैंने कभी सोचा नहीं था कि मेरे कान उसके फोन के लिए, उसकी 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' की दुआ सुनने के लिए तरस जाएँगे। मैंने सोचा न था कि हंफ्री के जाने के बाद में हारबोर्न के उस चर्च में अपने परिवार के साथ जाकर उसके लिए मोमबत्ती जलाऊँगी। मैंने यह भी नहीं सोचा था कि मैं हारबोर्न के उस चर्च में बिना कारण आते-जाते रुक जाया करूँगी। मैंने यह भी नहीं सोचा था कि उसके लिए मोमबत्ती लगाते हुए दो आँसू मेरी आँखों की कोर से चुपचाप टपक जाएँगे। लेकिन मुझे खुशी है कि मैंने अपनी दोस्ती पूरी ईमानदारी से निभाई। मैं जब भी चर्च जाती हूँ तो मन के किसी कोने में उसे याद करते हुए यह जरूर कहती हूँ कि हंफ्री, मैंने अपना वादा निभाया और मुझे कानों में कहीं से उसकी मुसकराती हुई आवाज आती है, 'गॉड ब्लेस यू एंड योर फैमिली' और मेरे चेहरे पर मुसकान फैल जाती है।

68 Meadow Brook Road
Northfield, Birmingham
B 31 1ND, UR

राम झरोखे बैठ के

अपने-अपने राष्ट्र-निर्माण कार्यक्रम

● गोपाल चतुर्वेदी

सामान्य मान्यता है कि प्रगति के लिए अनुशासन जरूरी है, चाहे वह व्यक्ति हो या देश। इसीलिए भूदानी भावे ने आपातकाल को अनुशासन पर्व का नाम दिया था। कुछ आज भी उसे शिद्दत से याद करते हैं। ट्रेनें हों या दफ्तर, सब समय से काम करते थे। नियत वक्त पर कर्मचारी ऐसे आते कि कार्यालय में कोई घड़ी मिला ले। अखबारों में खबरें छपतीं तो सिर्फ विकास की। लोगों में जनसंख्या नियंत्रण के लिए ऐसा उत्साह था कि नसबंदी के लिए कतारों में वे खुद-ब-खुद खड़े रहते। देश की कानून-व्यवस्था में ऐतिहासिक सुधार को आज भी आदर्श माना जाता है।

थानों में बैठे पुलिसकर्मी अमन-चैन से ऐसे प्रसन्न रहते कि आराम से बीड़ी-सिगरेट पीकर सीटी बजाते। दीगर है कि वारदातें तब भी होती थीं। होने पर न अखबार उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर छापते, न कोई रिपोर्ट लिखाने आता। हमारे शहर में एक परिचित की गुंडों ने हत्या कर दी। शांतिप्रिय परिवार ने थाने जाने के बजाय सबको बताया कि उसकी मृत्यु दिल का दौरा पड़ने से हुई है। वे शंकाग्रस्त थे कि थाने जाने पर पुलिस उन्हें ही हत्या के जुर्म में न धर ले? जानकार बताते हैं कि पुलिस का ऐसा इकबाल अंग्रेजों के जमाने में भी नहीं था। दरअसल लोग जानते थे कि दिग्गज से दिग्गज सियासी बवाली जेल की हवा खा रहे हैं। जंगल के ऐसे हिंसक जानवरों के समक्ष चूहे-खरगोशों जैसे सामान्य इनसानों की हैसियत ही क्या है?

इतना ही नहीं, सरकारी कार्यकुशलता ने भी हैरतअंगेज तरक्की की थी। हमारे मित्र के पिताश्री सेवानिवृत्त होकर बिना पैंशन परेशान थे। न पत्रों का उत्तर मिलता, न अधिकारियों की मिन्नत-चिरौरी का कुछ प्रभाव पड़ता। अनुशासन पर्व के दौरान उन्होंने अपने विभाग को एक शिकायती पत्र भेजा। एक सप्ताह के अंदर पत्र की पावती पाकर वे ऐसे उत्साहित हुए कि हनुमानजी के मंदिर में प्रसाद चढ़ाकर उसे बंदरों में बाँट आए। कौन इनकार कर सकता है कि इस से प्रसन्नता का एक दुर्लभ पल उन्हें हासिल हुआ, भले ही पैंशन का मसला वहाँ का वहीं टिका रहा। मंदिर जाकर उन्होंने जो पुण्य कमाया, वह तो बोनस की श्रेणी में है।

अनुशासन के साथ तरक्की का एक अन्य महत्त्वपूर्ण तत्त्व राष्ट्रपिता बापू द्वारा प्रचारित 'सादा जीवन, उच्च विचार' का दर्शन है। उन्होंने जीवन भर इस पर अमल किया। उनकी महानता सादगी में निहित है। अंग्रेजों से आजादी गांधीवादी अहिंसा की देन है। बकरी का दूध पीकर और रेल के सामान्य डिब्बे में बैठकर जिंदगी बसर करना आसान है क्या? आज के मंत्री तो ऐसे सुविधा-पसंद हैं कि सुरक्षा-घिरे महलों में रहते हैं और जनसंपर्क के नाम पर कभी-कभार जनता को दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं। रेल से सफर उनकी निजी तौहीन है। आने-जाने को राजकीय यान जो है। उनका बस चले तो जन-कल्याण के वास्ते वे शौचालय भी सरकारी हेलीकॉप्टर से ही जाएँ। कोई उन के जनहित पर सवाल उठाए तो समय की बचत के आधार पर वे इसकी अनिवार्यता भी साबित करने को प्रस्तुत हैं।

आज के इनसान की यही खासियत है। वह व्यक्तिगत नैतिक पलायन से लेकर भ्रष्ट आचरण तक, सबका औचित्य सिद्ध करने में समर्थ है। उसकी मान्यता है कि मानवजनित मूल्यों में रखा ही क्या है? उन्हें राजा के चतुर दरबारियों ने, राजा के हित में, राजा की भलाई और उस के सुभीते के लिए बनाया है। राजा के मूर्ख-से-मूर्ख ज्येष्ठ पुत्र को राजा बनना ही बनना। उसे सिंहासन पर बैठने का जैसे दैवी अधिकार प्राप्त है!

निजी तौर पर ऐसे गांधी को सिरफिरा बताते हैं और सार्वजनिक मंच से अपना आदर्श। उनके अनुसार ''सच के साथ किए गए प्रयोग जैसी पुस्तक क्या गांधी को शोभा देती है? उनकी सादगी हमारी तथाकथित महँगी जीवन-शैली से कहीं ज्यादा खर्चीली थी। बकरी की खुराक से लेकर सामान्य श्रेणी के रेल के आरक्षित डिब्बे तक! हमें तो मीडिया ने व्यर्थ ही बदनाम कर रखा है।''

आज के इनसान की यही खासियत है। वह व्यक्तिगत नैतिक पलायन से लेकर भ्रष्ट आचरण तक, सबका औचित्य सिद्ध करने में समर्थ है। उसकी मान्यता है कि मानवजनित मूल्यों में रखा ही क्या है? उन्हें राजा के चतुर दरबारियों ने, राजा के हित में, राजा की भलाई और उस के सुभीते के लिए बनाया है। राजा के मूर्ख-से-मूर्ख ज्येष्ठ पुत्र को राजा बनना ही बनना। उसे सिंहासन पर बैठने का जैसे दैवी अधिकार प्राप्त है! इसीलिए धार्मिक उन्माद की नशीली गोली जनता को खिलाई जाती है,

उसे लतियल रखकर उल्लू बनाने को। देखा जाए तो सारे प्रमुख धर्म इसी शोषण की साजिश से उपजे हैं, वरना कल्पना तो सबने की है, पर क्या आज तक किसी ने ऊपरवाले के दर्शन किए हैं? जिन्हें अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर नाज है, वे भी गुपचुप या खुलेआम हवन-यज्ञ जैसे तमाशों से धर्म की बहती गंगा में हाथ धोने से बाज नहीं आते हैं।

सबका अपना लुका-छिपा एजेंडा है। कुछ की चाहत धर्मगुरु बनने की है, कुछ की राजनेता बनकर सत्ता हथियाने की। भारत की जाति-व्यवस्था कुरसी का सबसे कारगर अस्त्र है। कुछ हैं, जो खुद को हिंदू कहते हैं। पर वे उसकी मूल उदार प्रवृत्ति से कोसों दूर हैं। विभिन्न जातियों में बँटे-बिखरों को एक कर उनका इकलौता लक्ष्य बड़की कुरसी की शोभा बढ़ाना है। यह तभी संभव है, जब भावना भड़काने का कोई मसला-मुद्दा उनके हाथ लगे। देश में अमन-चैन होना उनके किस काम का? यदि है तो अपनी खोजू प्रतिभा से उसमें पलीता लगाने का कोई न कोई बहाना वे खोज लेते हैं। अपने दीर्घ अनुभव से किसी भी सुप्त चिनगारी को दावानल में बदलने का हुनर उन्होंने बखूबी सीखा है। वह इसका लाभ उठाने से क्यों चूकें? अहम सवाल सत्ता का है!

वहीं कुछ का दावा है कि उनका यकीन इनसानी बराबरी में है। कभी वह गांधी का मुखौटा लगाते हैं, कभी जवाहर का। उन पर अमल वे करें, न करें। उनका दावा है कि जात-धर्म से उठकर वे समता-समानता के पक्षधर हैं। उनकी सीमित मंजिल भी सबसे ऊँची कुरसी है। इसके चक्कर में वे अल्पसंख्यकों को पटाने-लुभाने को विकास का दाना डालते हैं कि मुरगे-मुरगियों के बाड़े से वोटों के एकमुश्त अंडे वे ही लूटें। वहीं कुछ और मार्क्स-लेनिन की वोडका तजकर लिट्टी-चोखे की देशी संस्कृति पर आ गए हैं। वहीं कुछ जातवादी भी जयप्रकाश, लोहिया के उसूलों की खाल ओढ़कर उनका ढोल पीटते हैं। गनीमत है कि लोहिया के जीते-जी ऐसों ने 'परिवार का पर्याय प्रजातंत्र' जैसा नाटक नहीं खेला, नहीं तो कौन कहे, वह इनके विरुद्ध धरने पर बैठ जाते! इस सियासी चिड़ियाघर में कहना कठिन है कि कौन सियार है और कौन शेर!

देखने में आता है कि सब की महत्त्वाकांक्षा देश की प्रगति है। कुछ के लिए विकास, केवल बड़े ठेके पाना है। इसके लिए बीस-तीस परसेंट का कमीशन सरकार के चरणों पर चढ़ाने से उन्हें परहेज नहीं है। उनके हिसाब से क्लर्क से लेकर सर्वोच्च अधिकारियों की हैसियत वर्तमान कंप्यूटर युग के कलियुगी देवताओं की है। न मंदिर में बिना चढ़ावे प्रभु द्वारा सुनवाई संभव है, न सरकार के दरबार में। देवता अधिकतर चढ़ावा-निरपेक्ष हैं। न वे प्रसाद को मुँह लगाते हैं, न पूजा के पैसों को। इस काम के लिए हर मंदिर में पुजारी नियुक्त हैं। वही आकाशीय देवताओं के जमीनी एजेंट हैं।

कुछ अपने ऐसे अज्ञानी हैं, जो यह भी नहीं जानते हैं कि ए.टी.एम. किस चिड़िया का नाम है? हमारे संस्कारों में उधार से बचने की नसीहत है। कार्ड या मशीन से भुगतान पता नहीं होता भी है कि नहीं? अपना विश्वास तो चैक से निकाली गई नकदी पर है। हमें यकीन है। हमारे ऐसे कुंद बुद्धि और भी होंगे। अपना भरोसा डिजिटल की जगह फिजिकल पर है। साधू-संत कहते हैं कि जीवन छल है, माया है। पैसा माया का साया है।

सरकार के कलियुगी देवता भी ऐसी ही बीतरागी प्रवृत्ति के हैं। उनके भी दरबारी-पुजारी हैं। भेंट-चढ़ावे को उचित देवता तक पहुँचाना उनका दायित्व है। उनके सदाचार की मिसाल मुश्किल है। वे पैसे-पैसे का हिसाब रखते हैं। उनके रहते नामुमकिन है कि सही कमीशन का हिस्सा कभी भी गलत स्थान पर भटके। मंदिर के पुजारी के समान उन का भी नियत 'कट' है। भौतिकता प्रधान युग में समर्पित समाज-सेवक भी सेवा अपनी फीस लेकर ही करते हैं, तो पेशेवर पुजारी अपना कट क्यों न लें? उन्हें भी तो अपना घर चलाना है।

दु:खद है कि कुछ इसे नैतिक कदाचार की संज्ञा देते हैं। अपना-अपना दृष्टिकोण है। हमें याद रखना है। एक महापुरुष ने कभी आबादी को विकास की राह का अहम रोड़ा बताया है। उन्होंने अनुशासन पर्व के दौरान इसका निदान नसबंदी से किया था, सब जिलों, अस्पतालों को इसके निश्चित लक्ष्य देकर। उनका हर चेला नसबंदी के गुण गाता। 'छोटा परिवार, सुखी परिवार' और 'हम दो हमारे दो' जैसे नारे भी हर सार्वजनिक भोंपू जैसे रेडियो, टी.वी., अखबार, जनसेवकों के भाषण आदि में गूँजते रहते। कई निष्ठावान् सरकारी बुद्धिजीवी भी दोहराते कि ऐसे क्रांतिकारी कदम की आशा क्या, कल्पना तक भी, कठिन ही नहीं किसी और के लिये, संभव ही नहीं थी। चुनाव में हार के बाद नसबंदी ऐसे नदारद हो गई है, जैसे महानगरों से गौरैय्या। तथाकथित क्रांति का गुब्बारा भी वैसे ही उड़ते-उड़ते अचानक धराशायी हो गया, जैसे किसी के जोशीले भाषण से भूकंप आने का खतरा।

हमें नहीं लगता है कि नसबंदी और नोटबंदी की क्रांति में ज्यादा अंतर है। इसे भी शताब्दी का सबसे साहसी परिवर्तन बताया जा रहा है। कहा जा रहा है कि नोटबंदी के एक तीर ने तीन-तीन शिकार किए हैं। काले धन, आतंक और भ्रष्टाचार का विनाश पुराने हजार-पाँच सौ के नोटों का चलन रोकने से खुद-ब-खुद हो गया है। बैंकों के सामने लगी कतारों का हल सरकार के अनुसार कैशलेस व्यवस्था को अपनाकर मुमकिन है।

कुछ अपने ऐसे अज्ञानी हैं, जो यह भी नहीं जानते हैं कि ए.टी.एम. किस चिड़िया का नाम है? हमारे संस्कारों में उधार से बचने की नसीहत है। कार्ड या मशीन से भुगतान पता नहीं होता भी है कि नहीं? अपना विश्वास तो चैक से निकाली गई नकदी पर है। हमें यकीन है। हमारे ऐसे कुंद बुद्धि और भी होंगे। अपना भरोसा डिजिटल की जगह फिजिकल पर है। साधू-संत कहते हैं कि जीवन छल है, माया है। पैसा माया का साया है। डिजिटल के साये का साया होना किसी भी हाल में उस से बदतर है। सुनते हैं कि साइबर क्राइम भी तरक्की पर है। मान लीजिए,

हम रो-झींककर डिजिटल हो भी गए तो डर रहेगा कि कोई दिन-दहाड़े, ऐसे बढ़ते अपराधों की तरह, हमारे एकाउंट पर भी हाथ साफ कर दे तो हम तो कहीं के न रहेंगे!

आधार या पैन के चलते-चलते खर्च की पाई-पाई की खबर सरकार के कंपू भैया को रहेगी। उड़ती चिड़िया को भाँपना इसी को कहते हैं। बहुत दिन आयकर की चोरी कर ली, कभी अधिकारी की मिली भगत से, कभी उससे आँख बचाकर! अब करके दिखाओ तो जानें। यों चोरी से जाए भी तो चोर हेराफेरी से कैसे जाए? परिवर्तन इतना है कि अधिकारी अधिक चौकस हो गया है। कैश की हेरा-फेरी की धर-पकड़ की जप्त राशि से गरीबों का कल्याण होगा। सपनों का भारत बनेगा सो अलग। अपनी एकमात्र आकांक्षा है कि नसबंदी जैसी नियति नोटबंदी की न हो।

भ्रष्टाचार से हमें भी उतनी ही परेशानी है, जितनी सरकार को। किसी भी दफ्तर में बिना चढ़ावे कुछ होना उतना ही नामुमकिन है, जितना चींटी का चीनी का बोरा ढोना। अब तो अपनी दुर्दशा ऐसी है कि किसी भी शासकीय दफ्तर में झाँकने तक की संभावना से रक्तचाप बढ़ जाता है। एक परिचित डॉक्टर ने इसे 'दफ्तर-फोबिया' का नाम दिया है। उन्होंने चेताया है कि जब तक संभव है, हमें सरकार के संपर्क से बचना चाहिए, वरना किसी भी अनहोनी की आशंका है। स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार उन्मूलन अपने जीवन की प्राथमिकता है। साथ ही हमें हर वरिष्ठ नागरिक की तरह, कतार में लगने से उतनी ही चिढ़ है, जितनी करप्शन से।

नोट की नसबंदी का एक और फायदा है। इसने हमें गांधी की सादगी का समकक्ष बना दिया है। शादी करी तो ढाई लाख की सीमा में। बैंक में जमा रुपए मुँह बिराएँ तो बिराएँ। क्या पता, इससे दहेज पर भी रोक लगे। नोटों की नसबंदी में बचत की संभावनाएँ हैं। फिजूलियात पर खर्च बंद होगा। लोग दर्शन का सहारा लेंगे। संतोषी माता की भक्ति बढ़ेगी। यह अहसास होगा कि खुशी बैंक के खातों से नहीं, अंतर की संतोषी प्रवृत्ति से आती है। पेट दाल-रोटी से भी भरता है और चिकन-बिरयानी से भी। दाल-रोटी खाओ, नोट की नसबंदी के गुण गाओ। यही सादा जीवन के सात्त्विक उच्च विचार हैं। वास्तव में यह एक अनिवार्य बचत योजना है। चाहे अर्थशास्त्री कुछ भी कहते रहें!

हम तो यही मनाते हैं कि नोटों की नसबंदी सफल हो। भ्रष्टाचार, आतंक, काले धन का अंत हो। जब हम टैक्स देने की नियमित और जबरन सजा भोगते हैं तो दूसरे क्यों न भोगें? जितनों का गैरकानूनी सेंता धन जप्त होता है, उतना ही अपने आंतरिक उल्लास में इजाफा भी।

यों नसबंदी के विषय में भी अपना ऐसा ही सकारात्मक दृष्टिकोण रहा है। उसके त्रासद भविष्य की सबको खबर है। अपनी हार्दिक अभिलाषा है कि नोट की नसबंदी के साथ ऐसी कोई दुर्घटना न हो। मूल मुद्दा और मंजिल राष्ट्रनिर्माण है। इस लक्ष्य को पाने के प्रयास में अवरोध नहीं आना चाहिए।

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१

साहित्य अमृत (मासिक)

(फॉर्म नं. ४, नियम ८ के अनुसार स्वामित्व संबंधी विवरण)

समाचार-पत्र का नाम	:	साहित्य अमृत
प्रकाशन अवधि	:	मासिक
भाषा जिसमें प्रकाशित होनी है	:	हिंदी
प्रकाशन स्थान	:	४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
संपादक का नाम	:	त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
प्रकाशक का नाम	:	श्यामसुंदर
नागरिकता व पता	:	भारतीय, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२
मुद्रक का नाम व पता	:	ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२
उन व्यक्तियों के नाम व पता जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूँजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझीदार या हिस्सेदार हों	:	श्यामसुंदर, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२

मैं, श्यामसुंदर, एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार दिए गए विवरण सत्य हैं।

नई दिल्ली, २० फरवरी, २०१७ — श्यामसुंदर

कथाकार गंगा प्रसाद मिश्र : एक सफल आयोजक

● इंदु शुक्ला

२८ जनवरी, १९१७ को खंडवा (म.प्र.) में जनमे श्री गंगाप्रसाद मिश्र एक ऐसे कृती साहित्यकार थे, जिनके व्यक्तित्व के विविध पक्ष थे। तीन वर्ष की उम्र में साहित्यिक अभिरुचि के पिता श्री पुत्तूलाल मिश्र का और ८ वर्ष की उम्र में कहानियों की खान माता लवंगीबाई का देहावसान हो गया।

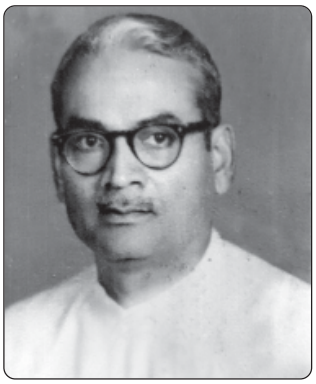

स्व. श्री गंगा प्रसाद मिश्र

मिश्रजी ने १३ वर्ष की उम्र से लिखना प्रारंभ करके ८ उपन्यास यथा—'विराग', 'महिमा', 'संघर्षों के बीच', 'तसवीरें और साये', 'जहर चाँद का', 'सोनारवाणी के पार', 'रॉन्गसाइड' और 'मुसकान है कहाँ' तथा लगभग २५० कहानियाँ, नाटक एवं एकांकी, निबंध, रेखाचित्र और यात्रा-विवरण आदि लिखकर, कविता को छोड़कर रचनात्मक लेखन के किसी भी क्षेत्र को अछूता नहीं छोड़ा। मिश्रजी को अपना लिखा दूसरों तक पहुँचाने, सुनाने की जितनी आकांक्षा थी, देश-विदेश के अन्य साहित्यकारों को पढ़ने और समझने का भी बड़ा चाव था, इसीलिए उन्होंने अपने समकालीन तमाम रचनाकारों की कृतियों की आस्वादपरक समीक्षाएँ भी खूब लिखीं, जो सातवें दशक में बड़ी ही स्तरीय और प्रतिष्ठित पत्रिका 'माध्यम' में लगातार प्रकाशित हुईं। लेखन के अतिरिक्त मिश्रजी को खेलकूद, संगीत और चित्रकला में भी रुचि थी। वे अगर साहित्यकार न होते तो उनमें विविधवर्णी वे प्रतिभा विद्यमान थी कि वे एक सफल खिलाड़ी, संगीतकार, चित्रकार आदि कुछ भी बन सकते थे। उनके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता थी—उनकी असीमित ऊर्जा, आत्मविश्वास और किसी भी कार्य को परिपूर्णता तक पहुँचाने की क्षमता। इनके चलते उन्होंने जो भी कार्य किया, उसमें अपार सफलता उन्हें प्राप्त हुई।

बड़ी ही प्रतिकूल परिस्थितियों में पले-बढ़े बालक गंगाप्रसाद के सामने परिवार में ऐसा कोई आदर्श या उदाहरण नहीं था, जिससे प्रेरणा या प्रोत्साहन पाकर उनका जीवन प्रगति-पथ पर बेझिझक अग्रसर हो जाता। चार भाइयों में वे सबसे छोटे थे, दोनों बड़े भाई पारिवारिक गाड़ी को चलाने के लिए बहुत कम उम्र से ही नौकरी करने लगे थे और तीसरे भाई लगभग उन्हीं के बराबर, उनके साथ स्कूल में पढ़ते थे, किंतु लखनऊ के बड़े ही स्तरीय और ख्यातनाम-कान्यकुब्ज कॉलेज की बड़े ही मनोयोग से दी जानेवाली लाभप्रद एवं कल्याणकारी शिक्षा का परिणाम था कि गंगाप्रसाद में, जो बड़े ही उच्चकोटि के आनुवंशिक गुण थे, वे बड़ी ही तेजी से विकसित होने लगे।

सौभाग्यवश, मिश्रजी का अधिकांश समय लखनऊ में गुजरा और अपने सेवाकाल में इलाहाबाद से भी संपर्क बराबर बना रहा, जहाँ की धरती साहित्यकारों और साहित्य-प्रेमियों से अँटी पड़ी थी, इसीलिए उनसे निकटता बनाए रखना, उनसे संपर्क करना और धीरे-धीरे उनसे मित्रता बना लेना, मिश्रजी का प्रिय शगल रहा होगा। तत्कालीन प्रतिष्ठित साहित्यकारों से तो मिश्रजी का मिलना-जुलना होता ही था, नवोदित रचनाकारों में भी उन्हें उतनी ही रुचि थी। मिश्रजी ने अपने संघर्ष-काल से उबरकर जैसे ही स्थायी रूप से विद्यालयों में अपना सेवाकार्य प्रारंभ किया, विद्यार्थियों को नियमित शिक्षा प्रदान करने के अतिरिक्त उनके लिए वाक्, निबंध, अंताक्षरी आदि की प्रतियोगिताएँ आयोजित करवाने का कार्य प्राय: उनके ही जिम्मे डाल दिया जाता था, क्योंकि किसी भी नए विद्यालय में पहुँचने से पूर्व उनकी इससे संबंधित ख्याति पहले ही वहाँ पहुँच जाती थी।

मिश्रजी की राजकीय सेवा में पहली नियुक्ति जुलाई १९४२ में गवर्नमेंट हाईस्कूल, हरदोई में हुई। चालीस रुपए वेतन पानेवाला एक पच्चीस वर्षीय युवक अपनी साहित्यिक अभिरुचि और खेलकूद में सक्रियता के कारण पूरे शहर में तुरंत लोकप्रिय हो गया। मिश्रजी उस समय एक मँजे-सधे कथाकार के रूप में जाने-पहचाने जा चुके थे, काव्य-प्रेम भी पैतृक विरासत में मिला था, इसलिए उसमें भी अपनी लेखनी आजमाने का प्रयास उन्होंने किया, किंतु कोई विशेष सफलता उन्हें प्राप्त नहीं हुई। इसलिए अपनी इस कमी को पूरा करने के लिए उन्होंने कवियों को सुनकर अपनी काव्य-पिपासा शांत करना प्रारंभ किया। और इस तरह कवि-सम्मेलनों के आयोजन का क्रम प्रारंभ हुआ। उन्होंने पहला कवि-सम्मेलन हरदोई के राजकीय विद्यालय में करवाया और उसकी अध्यक्षता के लिए राष्ट्रकवि पं. सोहनलाल द्विवेदी को आमंत्रित किया। उस कार्यक्रम के संपूर्ण आयोजन एवं संचालन से

हरदोई के ही एक अन्य विद्यालय के अध्यापक पं. ओमदत्त शर्मा इतने प्रभावित हुए कि स्वयं मिश्रजी से मिलने आए और उनके घनिष्ठ मित्र बन गए। ओमदत्त शर्माजी स्वयं एक साहित्य-रसिक थे और हरदोई जिले के रामलीला मेले में बराबर बड़े अच्छे मुशायरे और कवि-सम्मेलन करवाते थे, उसमें देश के शीर्षस्थ शायरों एवं कवियों को बुलाया करते थे। वहीं मिश्रजी की भेंट स्थानीय कथा-लेखक श्री महेशचंद्र मिश्र 'सरल' से हुई और इन तीनों का रोज का साथ-साथ उठना-बैठना और खान-पान का नियम बन गया। इन तीनों का मनोरंजन साहित्यिक गोष्ठियाँ एवं उनसे संबंधित चर्चाओं द्वारा ही हुआ करता था।

साहित्यिक अभिरुचि के इस युवक (गंगा प्रसाद मिश्र) ने कवि-सम्मेलन के आयोजन का जो कार्य हरदोई में प्रारंभ किया, वह उसका एक नशा, एक जुनून बन गया। अपने सेवा-काल में मिश्रजी जहाँ भी स्थानांतरित होकर गए, उनको इस नशे से मुक्ति नहीं मिल पाई, वरन् उसमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। सरस कविता की रुचि, युवावस्था की उमंग और अपनी बुलंद आवाज के कारण मिश्रजी स्थानीय और अपने परिचित आसपास के कवियों को बुलाकर, जो कवि-सम्मेलन करवाते, उसका संयोजन-संचालन स्वयं ही करते। उनका आत्म-विश्वास इतना प्रबल था कि उस कार्यक्रम में वे स्वयं कवि न होकर भी छाए रहते थे। किसी सामान्य कवि को उनकी साहित्यिक टिप्पणी आसमान में चढ़ा देती और फिर वह कवि उनकी इस वाक्-चातुरी के कारण उनका भक्त बन जाता।

हरदोई के बाद मिश्रजी का स्थानांतरण झाँसी हुआ। वे वहाँ रायगंज में रहते थे और उसके पास सीपरी बाजार में हिंदी के पुराने लोग पंडित कालिकाप्रसाद चतुर्वेदी अपने पुत्र श्री सतीशचंद्र चतुर्वेदी के साथ रहते थे, वे झाँसी के जिलाधीश थे और उनके भाई श्री गिरीशचंद्र चतुर्वेदी सिटी मजिस्ट्रेट। ये दोनों सज्जन साहित्य-प्रेमी थे। इनकी साहित्यिक अभिरुचि के कारण बारी-बारी से इनके घरों में गोष्ठियाँ होतीं, चाय-नाश्ते का प्रबंध होता, सबकी रचनाएँ सुनी-सुनाई जातीं और कभी-कभी विषय निश्चित करके उन पर विचार-विमर्श भी होता। दोनों चतुर्वेदी बंधु सरकारी उच्च पदाधिकारी थे, इसलिए इन गोष्ठियों की व्यवस्था और संयोजन का उत्तरदायित्व सदैव मिश्रजी पर होता। बचपन में सुनी बातें हैं और हमारे चचेरे भाई—श्री रमेशचंद्र मिश्र ने अपने एक लेख में इस प्रकरण का उल्लेख भी किया है कि ऐसे ही किसी आयोजन में 'मधुशाला' से विशेष लोकप्रिय हुए और इस सदी के महानायक श्री अमिताभ बच्चन के पूज्य पिताजी श्री हरिवंश राय 'बच्चन' की सपरिवार उपस्थिति से मिश्रजी को झाँसी में एक साहित्यिक माहौल खड़ा करने में अद्‌भुत सफलता मिली थी।

झाँसी में उन्होंने जो कवि-सम्मेलन करवाया, उसमें अध्यक्षता श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' ने की और श्री वीरेंद्र मिश्र, श्री जगदंबा प्रसाद त्यागी, पं. वंशीधर शुक्ल, श्रीमती चंद्रमुखी ओझा 'सुधा' ने रसवर्षा की। उस समय मिश्रजी की भाँति इनमें से अधिकांश उभरते हुए कवि थे, किंतु इन कवियों को साहित्य-जगत् में स्थापित और प्रतिष्ठित करने में

सुपरिचित लेखिका। भगवतीचरण वर्मा के कथा-साहित्य पर पाँच पुस्तकें, 'दरवाजे ही दरवाजे' (कहानी-संग्रह), रीति-साहित्य : समीक्षा और शोध' ग्रंथ (सहलेखन) प्रकाशित। 'अरुणोदय' पत्रिका का संपादन किया। आकाशवाणी बड़ौदा एवं रेडियो पर वार्त्ताएँ प्रसारित। हिंदी अधिकारी रहने के बाद म.स. विश्वविद्यालय, बड़ौदा में प्रवक्ता एवं रीडर रहीं। सेवा-मुक्ति के बाद अब स्वतंत्र लेखन।

इन कवियों की व्यक्तिगत प्रतिभा के अतिरिक्त कहीं-न-कहीं मिश्रजी की उत्प्रेरक टिप्पणियों और कवि को उचित स्थान पर श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करने की समझ का भी अवश्य योगदान रहा होगा—ऐसा हमारा विश्वास है।

जुलाई १९४९ में मिश्रजी लखनऊ के गवर्नमेंट इंटर कॉलेज में स्थानांतरित होकर आए, पूरे उत्तर प्रदेश में इस कॉलेज की बड़ी ख्याति थी। पढ़ाई-लिखाई के उच्च स्तर, खेलकूद और पाठ्येतर गतिविधियों के कारण इस कॉलेज में नगर के सर्वोच्च अधिकारियों, वकीलों, डॉक्टरों और संपन्न बुद्धिजीवियों के बच्चे पढ़ते थे और वहाँ मंडलीय व प्रांतीय स्तर की विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन विशाल स्तर पर किया जाता था। उस विद्यालय के तत्कालीन प्रिंसिपल पंडित श्रीधर सिंह ने मिश्रजी की संयोजन और संचालन क्षमता की ख्याति पहले से सुन रखी थी। इसलिए इन गतिविधियों का कार्यभार मिश्रजी को सौंप दिया। मिश्रजी ने बड़ी सफलतापूर्वक इन प्रतियोगिताओं का आयोजन किया और पूरे नगर में उन्हें बहुत सराहना प्राप्त हुई।

सुप्रसिद्ध कथाकार श्री भगवतीचरण वर्मा से मिश्रजी का घनिष्ठ परिचय था, लखनऊ स्थित हजरतगंज के प्रख्यात रंजना कॉफी हाउस में स्थानीय साहित्यकारों के जमघट में प्राय: इनकी बैठकें हुआ करती थीं। एक बार वर्माजी ने विशाल स्तर पर तुलसी जयंती मनाने की इच्छा व्यक्त की। मिश्रजी स्वयं तुलसी बाबा के अनन्य भक्त थे। मिश्रजी ने भी हनुमानजी की भाँति 'राम काज कीन्हे बिना, मोहि कहाँ विश्राम' संकल्प कर लिया। यह कार्यक्रम लखनऊ की कैसरबाग स्थित 'बारादरी' में आयोजित किया गया। ऐसे विशाल आयोजनों में धन-संग्रह, वक्ताओं, कलाकारों और श्रोताओं को एकत्र करने और उन सबके समायोजन का जो श्रमसाध्य कार्य होता है, उसे मिश्रजी ने सहर्ष अपने सिर ओढ़ लिया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशीजी ने की। इस अवसर पर उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री पंडित गोविंद वल्लभ पंतजी के अतिरिक्त श्री हेमचंद्र जोशी आदि अन्य विद्वानों के विद्वत्तापूर्ण भाषण हुए एवं आकाशवाणी के कलाकारों द्वारा गोस्वामीजी के पदों को प्रस्तुत किया गया।

प्रारंभिक प्रस्तावना के बाद जब वर्माजी कार्यक्रम के संचालन के लिए बार-बार उठते-बैठते तो उन्हें असुविधा होती। निकट ही उनके मित्र 'भारत' के भूतपूर्व संपादक एवं सूचना विभाग के तत्कालीन

अतिरिक्त निदेशक पं. बलभद्र प्रसाद मिश्र बैठे थे। उन्होंने वर्माजी से कहा, 'आप क्यों बार-बार परेशान होते हैं?' उन्होंने मिश्रजी की ओर संकेत करते हुए कहा, 'संचालन इनसे करवाइए।' उनके कहने पर मिश्रजी ने संचालन प्रारंभ किया। वक्ताओं और कलाकारों का परिचय देने में मिश्रजी ने जो कलाकारी दिखलाई तो उससे राज्यपाल महोदय बहुत प्रभावित हुए और श्री बलदेव प्रसाद मिश्र से पूछताछ की। कार्यक्रम के बाद बलदेव प्रसादजी ने मिश्रजी का परिचय राज्यपाल महोदय से करवाया—''यह गंगाप्रसाद मिश्र हैं। हिंदी में बहुत कहानियाँ लिखी हैं, कई उपन्यास भी प्रकाशित हुए हैं।''

मुंशीजी ने कहा, 'मैं नहीं मानता।'

मिश्रजी बड़े ही वाक् पटु थे, उन्होंने कहा, 'मौका दीजिए तो मैं मनवाऊँगा।' इसके बाद मिश्रजी को राजभवन से आमंत्रण मिला। अब प्रश्न था कि एक सामान्य-सा अध्यापक राज्यपाल से मिलने कैसे जाए? तब मिश्रजी पर पितृवत् स्नेह रखनेवाले उनके प्रिंसिपल श्री श्रीधर सिंह ने कहा, 'तुम एक दिन की छुट्टी ले लो, कोई पूछे तो कह देना—राज्यपाल महोदय के आदेश को मैं कैसे टाल सकता था।'

मिश्रजी ने राजभवन जाकर अपनी कुछ पुस्तकें मुंशीजी को भेंट कीं। उनकी भेंटवार्त्ता अत्यंत अनौपचारिक रही और मुंशीजी के आग्रह पर निर्धारित समय से काफी ज्यादा समय तक चली। मिश्रजी के संचालन की साहित्यिक शैली का ऐसा ही गहन प्रभाव सभी श्रोताओं पर पड़ता था।

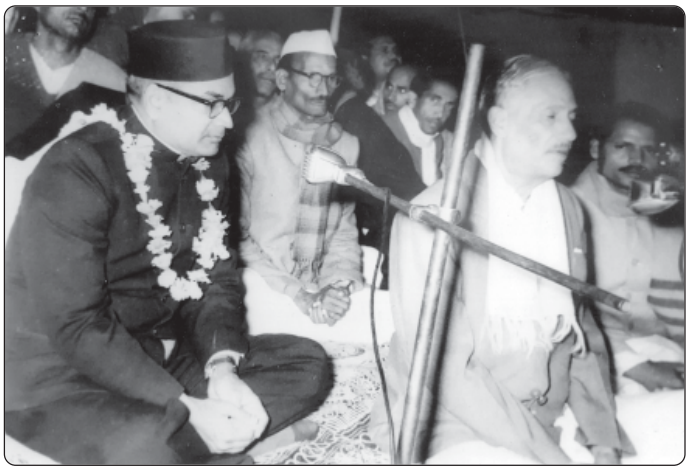

श्रीयुत गंगा प्रसाद मिश्र एक समारोह का संचालन करते हुए

जुबिली कॉलेज, लखनऊ के उपरांत मिश्रजी पदोन्नति पाकर बलरामपुर के गवर्नमेंट नॉर्मल स्कूल में प्रधानाध्यापक के रूप में पहुँचे। वहाँ उन्होंने स्कूल की कायापलट तो कर ही दी, स्थानीय कवियों और शायरों से संपर्क करने में जरा भी विलंब नहीं किया। बलरामपुर एक रियासत थी, वहाँ कवियों-कलाकारों को बहुत सम्मान मिलता था। बलरामपुर में मिश्रजी की मित्रता राजपरिवार से संबंधित मेजर इंद्रबहादुर सिंह से हो गई। डी.ए.वी. कॉलेज के प्रिंसिपल डॉ. भगवती प्रसाद सिंह और स्थानीय डिग्री कॉलेज के प्राचार्य श्री आदित्य कुमार चतुर्वेदी से भी उनकी घनिष्ठता हो गई। इस प्रकार उन्होंने नगर में साहित्यिक माहौल बनाने के लिए मुख्य आधारशिला रख दी। बलरामपुर में मिश्रजी केवल नौ महीने ही रहे, लेकिन उनका परिचय श्री बेकल 'उत्साही' से हुआ, जिन्हें कालांतर में अंतरराष्ट्रीय ख्याति अपनी उर्दू कविता के लिए प्राप्त हुई। बलरामपुर की एक बड़ी हस्ती बाबू नानकचंद्र, जो उर्दू में 'इशरत' और हिंदी में 'निश्चित' नाम से लिखते थे तथा जिनकी 'काबा और बुतखाना' अमर रचना है—इन सभी के साथ हुई साहित्यिक गोष्ठियों के अनुभव मिश्रजी के मनो-मस्तिष्क पर जीवनपर्यंत छाए रहे। श्री बेकल 'उत्साही' बहुत बाद तक मिश्रजी के कवि-सम्मेलनों में स्थायी रूप से आमंत्रित कवियों की सूची में सम्मिलित किए जाते रहे।

नवंबर १९५७ में मिश्रजी पूर्वी उत्तर प्रदेश के वृहद जिले बस्ती स्थानांतरित होकर पहुँचे, वहाँ का उनका कार्यकाल काफी लंबा रहा और साहित्यिक आयोजनों की उपलब्धियों की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण भी। बस्ती उत्तर प्रदेश में पूर्वांचल का, क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा जिला है। आज से ५०-६० वर्ष पहले भी वहाँ बड़े नामी और प्रतिष्ठित डॉक्टर, पुराने जमींदार, वकील, राजनेता आदि रहते थे और बड़ा जिला होने के कारण सरकारी उच्चाधिकारी भी बहुत प्रभावशाली होते थे। मिश्रजी में सबसे जुड़ जाने की जो कला थी, उसके कारण उनकी सबसे गहरी मित्रता हो जाती थी, इसलिए बड़े-बड़े आयोजन करने में उन्हें कभी दिक्कत नहीं आई।

बस्ती पहुँचकर मिश्रजी को ब्रजभाषा के आचार्य कवि पंडित बलराम प्रसाद मिश्र 'द्विजेश' के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिन पर सरस्वती और लक्ष्मी, दोनों की समान रूप से कृपा थी, किंतु वह दुर्घटनावश अपंग होकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे। उनके यहाँ मिश्रजी को अपार स्नेह और आदर-सत्कार प्राप्त हुआ। 'द्विजेशजी' का तो कुछ समय बाद स्वर्गवास हो गया, किंतु 'द्विजेशजी' के पुत्र श्री प्रेमशंकर मिश्र की उनसे बड़ी घनिष्ठता हो गई। 'द्विजेशजी' का पूरे अंचल के लोग बहुत सम्मान करते थे, इसलिए मिश्रजी की पहल से पूरे नगरवासियों और साहित्यप्रेमियों ने मिलकर एक साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'द्विजेश परिषद्' की स्थापना की। मिश्रजी इस संस्था के महामंत्री बने और उनके निर्देशन और संयोजकत्व में बस्ती में बड़े ही भव्य तथा अविस्मरणीय समारोहों का आयोजन हुआ। प्रत्यक्षत: हम उन समारोहों का आस्वादन नहीं कर सके, किंतु जो चित्र हमने देखे, उन समारोहों की जो सराहना और प्रशंसा हमने सुनी, उससे मन गद्गद होता रहा। मिश्रजी की वह गहन-गंभीर वाणी, उनकी संक्षिप्त-रोचक भूमिका और नवीन उद्भावनाओं का अनुमान मात्र करके पूरा दृश्य हमारी आँखों के समक्ष उपस्थित हो जाता था। बस्ती के दो दिन चले पहले कार्यक्रम में हिंदी रीतिकालीन कविता के प्रकांड विद्वान् एवं कवि-पंडित रामशंकर शुक्ल 'रसाल' और सुप्रसिद्ध सितारवादक उस्ताद यूसुफ ने कार्यक्रम में अपनी उपस्थिति और कला-प्रदर्शन से श्रोताओं का मन मुग्ध कर लिया था। इसका स्मरण वर्षों तक बस्ती के काव्य-कला रसिक करते रहे।

एक अध्यापक के रूप में लखनऊ और एक प्रधानाध्यापक के रूप

में मिश्रजी का बस्ती, सुल्तानपुर और फैजाबाद का सेवाकाल विशेष उल्लेखनीय रहा, क्योंकि वहाँ वह लगभग ५-५ वर्ष रहे और संपूर्ण नगर और वातावरण को अपने अनुकूल बनाकर, विद्यालयों के कार्यभार का उचित निर्वहण करते हुए उन्होंने अन्य गतिविधियों में भी ऐसा कुछ कर दिखाया कि वह पूरे नगर में छा गए। सुल्तानपुर में एक बार 'ऑल इंडिया मेडिकल कॉन्फ्रेंस' के अवसर पर सांध्यकालीन सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन-संचालन भी मिश्रजी ने किया, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा पूरे देश से आमंत्रित डॉक्टरों एवं अन्य श्रोताओं ने की।

फैजाबाद में उनके कवि-मित्रों की सूची में कुछ अन्य नाम जुड़ गए, जिनमें कुछ प्रमुख थे—सर्वश्री भवानी प्रसाद मिश्र, रमई काका, बेधड़क बनारसी, दानबहादुर सिंह 'सूँड़', जगदीश 'पंकज', ब्रजेंद्र अवस्थी, राजेश दीक्षित, सोम ठाकुर, माहेश्वर तिवारी 'शलभ', सुरेंद्र तिवारी और विकल साकेती। विद्यालय परिसर में विशाल स्तर पर आयोजित कवि-सम्मेलनों में कवियों की प्रस्तुति और मिश्रजी की संचालन-क्षमता की थोड़ी बानगी हमें वहाँ टेप-रिकॉर्डर में ध्वनिमुद्रित टेप को सुनकर मिली थी। कवियों के गीत तो आज स्वप्न हो गए हैं और पूरी-पूरी रात अपने काव्य-मकरंद से मदहोश करनेवाले और चिड़ियों के कलरव से समाप्त होनेवाले कवि-सम्मेलनों के सामने आज छिटपुट होनेवाले कवि-सम्मेलन कितने फीके लगते हैं। इन कवि-सम्मेलनों को ६-७ घंटों तक पूरी सफलता से समाप्ति तक ले जानेवाले आयोजक श्री गंगाप्रसाद मिश्र श्रद्धापूर्वक स्मरणीय रहेंगे।

उत्तर प्रदेश के पूर्वांचल में स्थित गोंडा जनपद में मिश्रजी ने जिला विद्यालय निरीक्षक के पद पर अपना कार्यभार ग्रहण किया। यहाँ एक बात विशेष उल्लेख्य है कि गोंडा, बस्ती, बलरामपुर और फैजाबाद आदि लखनऊ की तुलना में कुछ पिछड़े हुए क्षेत्र की अवश्य थे, किंतु वहाँ साहित्यिकता का बड़ा ही प्रेरणादायक वातावरण था। इन छोटे-छोटे कस्बानुमा नगरों में हिंदी के बड़े ही स्तरीय कवि, शायर और लेखक होते रहे। गोंडा में मिश्रजी के पास बड़े आयोजनों के लिए कोई मंच नहीं था, किंतु जहाँ गुड़ होता है, चींटियाँ आ ही जाती हैं। गोंडा में मिश्रजी को हास्य-सम्राट् श्री जी.पी. श्रीवास्तव का विशेष स्नेह प्राप्त हुआ। उनके आवास के निकट गोंडा के सुप्रसिद्ध साहित्यिक बंधु श्रीकृष्ण चंद्र 'हैरत' और श्री लक्ष्मीचंद्र श्रीवास्तव रहते थे। इसी प्रकार फिराक गोरखपुरी की भाँति श्री अलख निरंजन श्रीवास्तव ने भी उर्दू शायरी में अपना विशेष स्थान बनाया था—उनसे भी मिश्रजी की बड़ी घनिष्ठता थी। गोष्ठियों में तो इन सबका संगम होता ही था, प्रातःकालीन सैर में भी छोटी-मोटी गोष्ठी हर दिन हो जाया करती थी। श्री अलख निरंजन श्रीवास्तव की 'कृष्ण दर्शन' कविता का स्मरण मिश्रजी ने अपनी 'अध्यापक की डायरी' में किया है। इसी प्रकार श्री देवप्रकाश तिवारी प्रातःकाल टहलते हुए रामचरित मानस के पूरे-पूरे प्रसंग अपने ललित कंठ से सुनाते थे—इसका भी उल्लेख वहाँ किया गया है।

मिश्रजी का ऐसा चुंबकीय एवं आकर्षक व्यक्तित्व था, उनके कंठ में ऐसा वर्चस्व और आधिपत्य विद्यमान था और सरस्वती की ऐसी अद्‌भुत कृपा थी उन पर कि वे जहाँ होते, एक प्रभामंडल उनके आस-पास निर्मित हो जाता; फिर वे होते और उनका चतुर्दिक् प्रभाव सबको वशीभूत कर लेता। वर्षों तक सफल आयोजनकर्ता और कार्यक्रमों के संचालक के रूप में उन्हें जो सफलता प्राप्त हुई, उसकी कुंजी उनके पास स्वाभाविक रूप से विद्यमान थी और सुदीर्घ अनुभव से उसमें उत्तरोत्तर अभिवृद्धि होती गई।

बलरामपुर भी गोंडा जनपद का ही एक अंग है, वहाँ मिश्रजी ने अपने मित्र श्री शिवराज सिंह के साथ मिलकर 'कहानी की शाम' का आयोजन करवाया, जिसमें सर्वश्री रतनसिंह, जमालपाशा, के.पी. सक्सेना, शत्रुघ्नलाल और श्रीमती चंद्रकिरण सौनरेक्सा सहित मिश्रजी ने स्वयं अपनी कहानियाँ सुनाईं। बलरामपुर में ही मिश्रजी के पुराने मित्र श्री आदित्य कुमार चतुर्वेदी ने बलरामपुर महाविद्यालय में एक कथा-गोष्ठी का आयोजन किया, जिसमें सर्वश्री भगवती चरण वर्मा, अमृतलाल नागर और श्रीलाल शुक्ल सम्मिलित हुए थे और इस कार्यक्रम की अध्यक्षता मिश्रजी ने की थी। गोंडा में भी एक कहानी-गोष्ठी का आयोजन हुआ था, जिसमें मिश्रजी ने अपने नए लिखे जा रहे उपन्यास 'जहर चाँद का' के कुछ अंश सुनाए थे, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा उपस्थित महानुभावों ने की थी।

मिश्रजी का ऐसा चुंबकीय एवं आकर्षक व्यक्तित्व था, उनके कंठ में ऐसा वर्चस्व और आधिपत्य विद्यमान था और सरस्वती की ऐसी अद्‌भुत कृपा थी उन पर कि वे जहाँ होते, एक प्रभामंडल उनके आस-पास निर्मित हो जाता; फिर वे होते और उनका चतुर्दिक् प्रभाव सबको वशीभूत कर लेता। वर्षों तक सफल आयोजनकर्ता और कार्यक्रमों के संचालक के रूप में उन्हें जो सफलता प्राप्त हुई, उसकी कुंजी उनके पास स्वाभाविक रूप से विद्यमान थी और सुदीर्घ अनुभव से उसमें उत्तरोत्तर अभिवृद्धि होती गई। मिश्रजी के बहुआयामी व्यक्तित्व का एक प्रखर पक्ष आयोजक एवं संचालक का था, जिसे उनके आगे की पीढ़ी के लोग, जो आज अपनी प्रौढ़ावस्था या वृद्धावस्था में हैं, बड़ी आत्मीयता और सम्मान के साथ स्मृति में सँजोए हुए हैं।

ईवेंट मैनेजमेंट और ऐंकरिंग आज एक बड़ा ही लाभकारी और ग्लैमरवाला व्यवसाय बन गया है। यह कला मिश्रजी में स्वतःस्फूर्त थी, उन्होंने उसका उपयोग साहित्य को लोकप्रिय बनाने के लिए किया, जो सदैव श्लाघ्य रहेगी।

१बी, ८०६ ट्रिनिटी टावर्स
आई ओ एन आई टी पार्क के पास
गेरा ग्रीन विले, खराड़ी पुणे-४११०१४
दूरभाष : ०९७२३७२३६८१

सोचकर रह गया दंग

मूल : **के.वी. तिरुमलेश**

अनुवाद : **डी.एन. श्रीनाथ**

सुप्रसिद्ध लेखक एवं अनुवादक। कन्नड़-हिंदी में परस्पर अनुवाद की साठ पुस्तकें प्रकाशित। साहित्य अकादेमी का अनुवाद पुरस्कार, कर्नाटक साहित्य अनुवाद अकादेमी पुरस्कार, कमला गोयनका अनुवाद पुरस्कार, गोरूर पुरस्कार, विश्वेश्वरैया साहित्य पुरस्कार आदि पुरस्कारों से पुरस्कृत।

आमने-सामने

मोटी-ताजी एक बिल्ली ने अपने घर के
ड्राइंग-रूम में आकर मुझे देखा
और यकायक रुक गया,
उसे वहाँ मेरी निरीक्षा नहीं थी शायद
नहीं, सोमवार सभी अपने-अपने ऑफिस
चले गए हैं, यह दोपहर तो सचमुच नहीं
कुछ बेचैनी से मेरी ओर ताका
हमारी आँखें आपस में टकराईं, पहले कौन
मुँह मोड़े, ऐसी एक हालत
अघोषित-युद्ध में लग गए दोनों,
एक बिल्ली की आँखें
इतनी निश्चल होती हैं,
यह मुझे नहीं था मालूम।

अकड़ी पूँछ, तने बाल, गड़े हुए पाँव के नख
कुल मिलाकर चढ़े हुए धनुष के समान बिल्ली
उसने आक्रमण किया था अभी-अभी,
मेरी संपूर्ण दृष्टि मंडल को
मैं भूला-भटका, इतिहास पूर्व भूखंडों में
अपरिचित समुद्रों में गिरा जैसे फिर भी
मैंने आँखें बंद नहीं कीं,
बिल्ली ने भी आँखें बंद नहीं कीं।
मनुष्य और मृग के लिए कोई मूलभूत
विशेष स्थिति में खड़ी थी बिल्ली मेरे सामने
बिल्ली के लिए बिल्ली ही जिद बनकर
एक बिल्ली की आँखें इतनी अनाथ होती हैं
यह नहीं था मुझे मालूम।

आखिर हारा तो मृग ही,
या सोचा इस प्रकार
मैंने तना हुआ वह शरीर
धीरे-धीरे खिसककर
चली गई बिल्ली, बिल्ली की गति में

इस प्रकार जब मेरी नजर
यकायक हुई शून्य तो
लगा मुझे कि मान लेना था मुझे
बिल्ली के लिए बिल्ली का स्वाभिमान
और मैंने कमाया ही क्या?
जीना है तो जीना है बाहुबली के समान।
सब कुछ त्यागने से
एक बिल्ली की आँखों में
इतनी उदासीनता रहती है,
यह मुझे नहीं था मालूम।

पीट का दिया हुआ बाइबल
मुझसे ही खरीदा हुआ कुरान
उपनिषद्, जो घर में था
ग्रंथ साहेब जो मँगाया गया था

रखता हूँ सभी को एक साथ
देखेंगे
कि होता क्या है
होता कुछ भी नहीं है।

अलादीन का तिलिस्मी लैंप

अलादीन का तिलस्मी लैंप आज
लगा मेरे हाथ
धूल थी उस पर सैकड़ों बरसों की
इतने समय तक न जाने कहाँ छिपा था
सोचकर रह गया दंग
इच्छा हुई रगड़कर देखने की

लाकर रख दिया पोंछने का कपड़ा।

रगड़ा तो भूत को उठ जाना चाहिए
'देखो' कहकर हाथ बाँधकर खड़ा होना चाहिए।
मैं तो डरनेवाला नहीं हूँ,
कहानी मालूम है न पहले ही।
मनचाहे काम को तुरंत कराकर
भूत को भूत की आजादी दूँगा
मैं गुलामी का विरोधी हूँ।

रगड़ने से भूत आएगा क्या,
इतने बरसों बाद
इस बीसवीं सदी के अंत में?
भूत भी भूल गया होगा,
इस तरह की लंबी निद्रा में
अपनी जादूगरी कमाल
बहुत देर तक इस प्रकार की उलझन में पड़कर
एक कहानी को खत्म करने की संभावना से हटकर
लैंप को ही तोड़ डाला

एक पंक्ति धूप की,
चली गई बादल की ओर
धूल के समान भूत या भूत के समान धूल
सब कुछ अब एक समान
अब भूत आजाद, कहानी भी सुरक्षित
आज हमें जो करना है, यही है।

नवनीत, द्वितीय क्रॉस, अन्नाजी राव लेआउट
प्रथम स्टेज, विनोबा नगर, शिमोगा-५७७२०४ (कर्नाटक)
दूरभाष : ०९६११८७३३१०

न खींचो लक्ष्मण-रेखाएँ

कविता

● नीता चौबीसा

कितनी अग्नि-परीक्षाएँ
न खींचो लक्ष्मण-रेखाएँ
क्योंकि तुम्हीं लाँघ न पाओगे
मैं तो अशोक वाटिका में भी रह लूँगी
फिर मुझ तक पहुँचने को
बड़े ही जतन से
आदम पुल भी तुम ही बनाओगे।

आखिर कितनी बार और
दूसरों के बहकावे में आकर
तुम मुझे अग्नि से नहलाओगे?

कभी वर्जनाओं का हवाला देकर
तो कभी मर्यादा का नकाब पहनकर
और कितनी बार तुम
मेरे सच को झुठलाओगे?
लाजिमी है कि अब
मैं इनकार करूँ।

युग बदला है हे राघव!
अब तुम भी खुद में बदलाव लाओ,
क्योंकि यदि मैंने ठान लिया
तुम्हारे सत् की परीक्षा लेना,
तो तुम खरे न उतर पाओगे
और पहले ही कदम पर
जिंदगी की जंग हार जाओगे।

मन मानसरोवर
मेरा मन मान सरोवर
नहीं उतरती यहाँ
कोई बगुलों की जमात

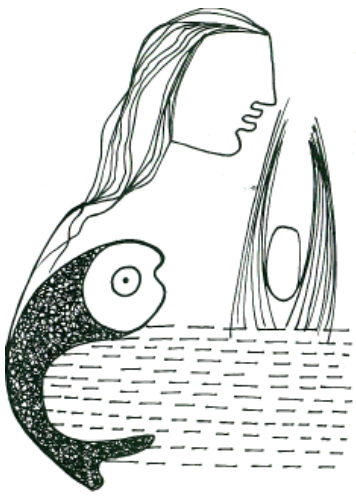

कभी कोई हंस
आ जाता है
इसके किनारों पर
भूले-भटके और चुन लेता है
मानस जल में बिखरे मोती
तरंगित हो उठता है ये जल
थिरकने लगती हैं असंख्य रश्मियाँ
क्योंकि इतना पारदर्शी है इसका जल
कि सिर्फ दिखाई पड़ते हैं मोती
नहीं इसमें एक भी मछली
आओ हंस,
धुएँ के उस पार से आओ
ये जल सिर्फ तुम्हारे
इंतजार में मुसकराता है
सदियों से…।

७३, वृंदावन कॉलोनी, सुभाष नगर
बाँसवाड़ा (राज.)
दूरभाष : ९४१४५६७७४८

निराला का यह 'भिक्षुक' कौन है

● भारत यायावर

'भिक्षुक' निराला की सर्वाधिक लोकप्रिय और मार्मिक कविता है। यह छायावादी दौर में यथार्थवादी जीवन-चित्र प्रस्तुत करने वाली इकलौती कविता है। इस कविता में निराला ने लिखा है—वह आता/दो-टूक कलेजे के करता पछताता पथ पर आता!' यहाँ कलेजे के दो-टूक करना और पछताते हुए पथ पर आना, यह संकेत करता है कि निराला का यह 'भिक्षुक' पेशेवर भिखारी नहीं है। जिन लोगों का भीख माँगने का स्वभाव या धंधा होता है, वे अपने इस कर्म पर क्यों पछताएँगे? उन्हें भीख माँगते हुए शर्म क्यों आएगी? तो निराला का यह भिक्षुक कौन है? यह सवाल प्राय: अनुत्तरित है। इस सवाल को हल करने के लिए तत्कालीन समय और समाज की परिस्थितियों का बारीकी से अध्ययन करना होगा। साथ ही, यह भी देखना होगा कि क्या इस कविता द्वारा चित्रित जीवन-यथार्थ की भी कोई परंपरा है?

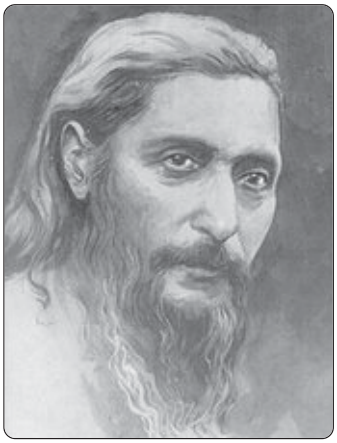

भारत में अंग्रेजीराज की जड़ें जैसे-जैसे मजबूत होती गईं, भारत की आर्थिक दशा बिगड़ती गई। पहले भारत कृषि और उद्योग दोनों में समुन्नत था। लेकिन अंग्रेजों ने यहाँ के उद्योग-धंधों को नष्ट कर दिया और इस देश की आर्थिक निर्भरता का साधन मात्र कृषि रह गया। ब्रिटिश संसदीय जाँच समिति के अध्यक्ष माटगोमरी मार्टिन ने १८४० में भारत की आर्थिक दशा को दरशाते हुए जो रिपोर्ट प्रस्तुत की थी, उसमें आगाह करते हुए कहा था, 'मैं यह नहीं मानता कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत जितना कृषि प्रधान है, उतना उद्योग प्रधान भी है, और जो उसे कृषि प्रधान देश की स्थिति तक लाना चाहते हैं, वे सभ्यता के पैमाने पर उसका स्थान नीचे लाने की कोशिश करते हैं।' तात्पर्य यह कि धीरे-धीरे भारत के उद्योग-धंधों का विनाश हुआ और देश की पूरी निर्भरता कृषि पर आधारित होती गई। १८५७ के स्वाधीनता-संघर्ष में अंग्रेजों द्वारा जो भारतीयों का नरसंहार किया गया और दमन का जो चक्र चलाया गया उससे लंबे समय तक भारतवासी उबर नहीं पाए। १२ फरवरी, १९५८ को 'हाउस ऑफ कॉमन्स' में जॉर्ज कॉनेक्स लीविस ने इस पर बोलते हुए कहा था, 'मैं पूरे विश्वास के साथ कहता हूँ कि धरती पर आज तक कोई भी सभ्य सरकार इतनी भ्रष्ट, इतनी विश्वासघाती और इतनी लुटेरी नहीं पाई गई।' ईस्ट इंडिया कंपनी के सौ वर्षों के शासन काल को जॉन ब्राइट ने 'ए हंड्रेड ईयर्स ऑफ क्राइम' कहकर भर्त्सना की थी।

किंतु इससे क्या होता है? भारत तो बरबाद और कंगाल हो चुका था। विक्टोरिया ने १८५८ ई. में जब भारत की सत्ता का अधिग्रहण किया, तब उनके घोषणा-पत्र से भारतवासियों को सुख-शांति का भरोसा हुआ था। उनके शासन काल में देशभर में तेजी से सड़कों और रेलों का विकास हुआ। भारतीयों को लगा कि अब उनकी दशा सुधरेगी। भारतेंदु ने लिखा, 'धन्य सहबा जौन चलाइस रेल।/ मानो जादू किहिस दिखाइस खेल।' विक्टोरिया के प्रति इसीलिए उस समय के देश-प्रेमियों में आदर का भाव दिखाई पड़ता है। किंतु भारतीय जनता का त्रास नहीं मिट रहा था। यहाँ के लोग लगातार निर्धन होते जा रहे थे। भारतेंदु की इस कविता में यही भाव प्रकट हुआ है—

तार औ' रेल की चाल करी
'हरिचंद' जो लोगन को सुखदायी।
दीन भए बलहीन भए धनहीन
भए सब बुद्धि हिरानी।
ऐसी न चाहिए आपु के राज
प्रजाजन ज्यों मछरी बिनु पानी।
टिक्कस देहु छुड़ाई कहै सब
जीवौ सदा विक्टोरिया रानी।

भारतेंदु ने विक्टोरिया की प्रशंसा करते हुए कहा है कि आपने तार और रेल का भारत में प्रचलन किया, यह तो सुखदायक है, किंतु भारत के लोग दयनीय, कमजोर, निर्धन हो गए हैं, उनकी बुद्धि जवाब दे रही है कि वे क्या करें। हे महारानी, आपका ऐसा राज्य नहीं चाहिए, जिसमें भारत की प्रजा पानी के बगैर मछली की तरह तड़प रही है। उस पर टैक्स का बोझ! कम-से-कम उसे तो कम कर दिया जाए।

भारत में रेल की सुविधाएँ बढ़ने से कुछ ही समय बाद लोगों ने देखा कि भारत की कृषि-उपज बहुत तेजी से विलायत गमन कर रही है। और देखते-ही-देखते भारत में भीषण अन्न संकट पैदा हुआ। इससे अकाल का तांडव शुरू हुआ। लोग भूख से मरने लगे। डब्लू. डिगवी ने, 'प्रॉसपेरस ब्रिटिश इंडिया' (१९०१) नामक पुस्तक में लिखा, 'मोटे तौर

पर कहा जाए तो १९वीं शताब्दी के अंतिम तीस वर्षों में अकेले खाद्यान्नों की जितनी कमी हुई, वह सौ वर्ष पहले की तुलना में चार गुना अधिक और चार गुना ज्यादा व्यापक थी।' यह भारतीय रेल का ही चमत्कार था। भारत में अकाल पड़ा और उस पर एक 'अकाल आयोग' का गठन किया गया। रजनीपाम दत्त ने 'इंडिया टुडे' नामक अपनी प्रसिद्ध पुस्तक में लिखा है, '१८८० में प्रकाशित आयोग की रिपोर्ट का निष्कर्ष यह था कि अकालों के विनाशकारी परिणामों का मुख्य कारण यह है कि यहाँ की विशाल जनता प्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है और ऐसा कोई उद्योग नहीं है, जिसके सहारे आबादी का उल्लेखनीय हिस्सा काम चला सके।' उद्योग-धंधों के नष्ट होने के बाद भारतीय जनता पूरी तरह कृषि पर निर्भर थी और आकाशीय कृपा तथा पारंपरिक कृषि-स्वरूप के कारण कृषि-उत्पादन बहुत कम हो पाता था, उस पर हर साल लगान या टैक्स का बढ़ाया जाना भारतीय जनता को अकाल की ओर ढकेल रहा था। भारत की इस आर्थिक दुर्दशा की ओर सबसे पहले दादाभाई नौरोजी ने ध्यान आकर्षित किया, फिर रमेश चंद्र दत्त ने। उन्होंने 'इकनॉमिक हिस्टरी ऑफ ब्रिटिश इंडिया' तथा 'इंडिया इन द विक्टोरियन एज' नामक अंग्रेजी में दो पुस्तकें लिखीं। ये दोनों तब लंदन में रहते थे। कार्ल मार्क्स ने 'पूँजी' में भारत के तत्कालीन अर्थव्यवस्था के कई आँकड़े दिए हैं, जिसमें यहाँ के कृषि-उपज का विलायत जाने और वहाँ की संपत्ति में इजाफा होने का सप्रमाण आँकड़ा प्रस्तुत किया है। हिंदी में राधामोहन गोकुलजी ने 'देश का धन' एवं महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'संपत्तिशास्त्र' नामक पुस्तकें लिखकर भारतीय निर्धनता के कारणों की तलाश की है।

'संपत्तिशास्त्र' में द्विवेदीजी ने विस्तार से भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं कि ईस्ट इंडिया कंपनी की प्रभुता के पहले, और उसके कुछ समय बाद तक भी, इस देश में उद्योग-धंधों की बड़ी अधिकता थी। प्राय: सब तरह का माल तैयार होता था और देश-देशांतरों को जाता था। पर कंपनी ने अपने शासन-शक्ति के बल से युक्तिपूर्वक उसका सर्वनाश कर दिया। इससे देश का निर्वाह अब प्राय: एकमात्र खेती की पैदावार पर रह गया है।' आगे वे बताते हैं कि किसानों का संबंध कृषि से है और कृषि का जमीन से। परंतु अँगरेजी राज में भारत के किसानों से उसकी जमीन छीन ली गई। अँगरेजी सरकार हिंदुस्तान में शासन भी करती है और जमींदारी भी। वह कुछ वर्षों बाद नए सिरे से जमीन की मापजोख करके लगान बढ़ा देती है। और जो अधिक लगान नहीं देता, उसे बेदखल कर देती है। खेती की उपज से ही जीवन-निर्वाह करने वालों की लोटा-थाली बिकती चली जाती है।

यही किसान थे, जो धीरे-धीरे भूमिविहीन होकर मजदूर होते चले जाते थे और उन्हें भारत में उद्योग-धंधा नहीं होने के कारण काम भी नहीं मिल पाता था। अनावृष्टि होने पर उन्हें खेतों में भी काम नहीं मिल पाता था और वे शहरों में जाकर भीख माँगते थे। अंग्रेजों ने भारत के किसानों को बरबाद करके रख दिया था। द्विवेदीजी ने एक अन्य पुस्तक भी लिखी है, 'अवध के किसानों की बरबादी'। 'संपत्तिशास्त्र' में वे व्यंग्य करते हुए कहते हैं, 'यदि इस देश के संपत्ति-रस को निचोड़ना ही था, तो और

जाने-माने कवि-लेखक। 'झेलते हुए', 'मैं हूँ यहाँ हूँ', 'बेचैनी', 'हाल-बेहाल' एवं 'तुम धरती का नमक हो' कृतियाँ चर्चित। नागार्जुन पुरस्कार, बेनीपुरी पुरस्कार, राधाकृष्ण पुरस्कार, पुश्किन पुरस्कार, एवं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी सम्मान से सम्मानित।

किसी मद से निचोड़ते, जहाँ अधिक गीलापन होता। निचोड़ा कहाँ से, जहाँ से मुश्किल से दो-चार बूँद निकली।' इस तरह भारतीय किसानों को भिखारी बना दिया गया। निराला का 'भिक्षुक' वही भारतीय किसान है, इसलिए वह अपनी दुर्दशा और भिखारीपन पर दो-टूक कलेजे के करता है और पछताता हुआ पथ पर आता है।

द्विवेदीजी बताते हैं कि पुराने जमाने में जब अन्न बहुत महँगा हो जाता था और लोग भूखों मरने लगते थे, तब राजा हुक्म देता था कि देश से बाहर अन्न न जाए। पर आजकल का जमाना ठहरा अँगरेजी ! इस देश वाले चाहे भूखों मर जाएँ, विदेश माल भेजना बंद नहीं होता। 'संपत्तिशास्त्र' का प्रारंभ ही इन पंक्तियों से होता है, 'हिंदुस्तान संपत्तिहीन देश है। यहाँ संपत्ति की बहुत कमी है। जिधर आप देखेंगे उधर ही आपको दरिद्र देवता का अभिनय, किसी-न-किसी रूप में अवश्य ही दीख पड़ेगा। परंतु इस दुर्दमनीय दारिद्र्य को देखकर भी कितने आदमी ऐसे हैं, जिनको उसका कारण जानने की उत्कंठा होती हो? यथेष्ठ भोजन-वस्त्र न मिलने से करोड़ों आदमी जो अनेक प्रकार वे कष्ट पा रहे हैं, उनका दूर किया जाना क्या किसी तरह संभव नहीं? गली-कूचों में, सब कहीं, धनाभाव के कारण जो कारुणिक क्रंदन सुनाई पड़ता है, उसके बंद करने का क्या कोई इलाज नहीं? हर गाँव और हर शहर में जो अस्थिचर्मा वसिष्ठ मनुष्यों के समूह के समूह आते-जाते दीख पड़ते हैं, उनकी अवस्था उन्नत करने का क्या कोई साधन नहीं?' यहाँ वहीं निराला का भिक्षुक है, जिसकी ओर द्विवेदीजी ध्यान दिलाते हैं। उनमें यह चेतना शुरू से विद्यमान थी, इसलिए १९०३ में लिखित 'स्वदेशी वस्त्र का स्वीकार' कविता में वे देशवासियों को जगाते हुए कहते हैं—

न सूझे है अरे भारत भिखारी!
गई है हाय तेरी बुद्धि मारी !
हजारों लोग भूखों मर रहे हैं
पड़े वे आज या कल कर रहे हैं
महा अन्याय हा हा हो रहा है;
कहें क्या कुछ नहीं जाता कहा है
मरें असगर, बिसेसर और काली;
भरें घर ग्रांट, ग्राहम और राली।

'भारत भिखारी' शब्द पर ध्यान दीजिए, यही भारत भारतेंदु के नाटक 'भारत-दुर्दशा' में पहली बार दिखाई देता है और यही निराला का भिक्षुक भी है, जिसके पेट-पीठ मिलकर एक हो गए हैं। भूखा-नंगा और भिखारी भारत। इस भारत को भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद सबसे गहराई से

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने लेखन में सजीव उपस्थित किया है। द्विवेदीजी भी प्रारंभ में ब्रजभाषा में ही कविताएँ लिखा करते थे। उन्होंने अकाल पीड़ित भारतीय जनता का मार्मिक चित्रण करते हुए 'भारत दुर्भिक्ष' नामक कविता लिखी थी, जो ११ मार्च, १८९७ ई. के 'हिंदोस्तान' नामक समाचार-पत्र में प्रकाशित हुई थी। इसकी इन पंक्तियों को ध्यान से पढ़ें तो निराला का 'भिक्षुक' यहाँ दिखाई पड़ेगा—

गली-गली कंगाल पेट पर हाथ दोउ धरि धावैं,
अन्न-अन्न पानी-पानी कहि शोर प्रचंड मचावैं।
बालक, युवा, जरठ, नारी, नर, भूख-भूख कहि गावैं,
अविरल अश्रुधार आँखिन ते बारंबार बहावैं।
अस्थिमात्र जिनके शरीर हैं ऐसे बालक नाना;
गोद माहिं माता की लिपटे रोवत कंठ सुखाना।
माँगे मिले न भीख माय कहँ किहि विधि राखहि प्राना,
विह्वल विकल विपन्न पुकारति हा! हा! हा भगवाना!
लोचन चले गए भीतर कहँ कंटक समकच छाए
कर में खप्पर लिये, अनेकन जीरन पट लपटाए।
मांस विहीन हाड़ की ढेरी भीषण भेष बनाए
मनहुँ प्रबल दुर्भिक्ष रूप बहु धरि विचरत सुख पाए।

यह अकाल का महा तांडव अंग्रेजी राज में लगातार चल रहा था और स्वाधीनता के बहुत बाद तक चलता रहा। द्विवेदीजी ने इस कविता के बाद एक और कविता लिखी, 'त्राहि नाथ! त्राहि!' जो कलकत्ता के साप्ताहिक 'हिंदी बंगवासी' में २९ नवंबर, १८९७ के अंक में प्रकाशित हुई थी। इसमें वे बताते हैं कि भारत में अकाल का कोप भारत झेल रहा था और लोग भूख से लगातार मरते जा रहे थे, दूसरी ओर हैजा, प्लेग आदि महामारियाँ भी लोगों को ग्रस रही थीं, साथ ही प्रकृति भी अपनी विनाशलीला जगह-जगह दिखला रही थी, कहीं बाढ़, तो कहीं भूकंप और कहीं तूफान, लगातार इस देश की आबादी को खत्म कर रही थी।

१९४७ ई. में भारत में सत्ता-परिवर्तन हुआ, लेकिन व्यवस्था वही बनी रही। रेणु ने उसी दौर में 'इतिहास, मजहब और आदमी' नामक एक कहानी लिखी, जिसमें इस व्यवस्था को ईश्वर, गुलामी, गरीबी, भूख, मौत, जुल्म, दंगे, लूट, कत्लेआम को बरकरार रखने वाला बताया है। १९४७ ई. में हिंदू-मुस्लिम जगह-जगह लड़ रहे थे। रेणु इस कहानी में सवाल उठाते हैं, ''भूखे, बीमार मुल्क में धर्म के नाम पर लड़ाइयाँ होती हैं अथवा रोटी के लिए? रोटी के लिए नोआखाली और बिहार के गाँवों ने कितनी बार सम्मिलित कोशिश की?''

नागपुर से माधव राव सप्रे 'हिंदी निबंधमाला' नामक मासिक पत्रिका निकालते थे। इसके मई, १९०८ के अंक में उन्होंने लिखा था कि १७१३ से १९०० ई. तक दुनिया भर की तमाम लड़ाइयों में सिर्फ पचास लाख लोग मारे गए हैं, किंतु हमारे हिंदुस्तान में केवल १८९१ से १९०१ यानी इन दस वर्षों में अकाल और भूख के मारे एक करोड़ नब्बे लाख मनुष्यों ने प्राण त्याग किए। इसके अलावा प्राकृतिक आपदाओं से भी लाखों लोग मरे। इसी बात को मैथिली शरण गुप्त ने 'भारत-भारती' में इस प्रकार लिखा—

सब विश्व में सौ वर्ष में, रण में मरे जितने हरे
जन चौगुने उससे यहाँ दस वर्ष में भूखों मरे।

राष्ट्रकवि ने आगे लिखा कि जिस प्रकार तेज हवा चलने पर सूखे पत्ते उड़ते हैं, वैसे ही लाखों भिखारी चारों ओर घूमते रहते हैं। आदमी का पेट खाली हो तो वह उससे नीच से नीच काम भी करवा लेती है। कुल, जाति का भेद मिट गया है, बस एक मुट्ठी अन्न चाहिए। उनके कमर में एक चिथड़ा रहता है और हाथ में खप्पर। किसी पेड़ के नीचे सो रहते हैं। नंगे और भूख से बिलबिलाते हुए बच्चे उनके साथ रोते हुए चलते हैं। निराला के 'भिक्षुक' को हम शब्दशः यहाँ देख सकते हैं—

वह पेट उनका पीठ से मिलकर हुआ क्या एक है?
मानो निकलने को परस्पर हड्डियों में टेक है।
निकले हुए हैं दाँत बाहर, नेत्र भीतर हैं धँसे,
किन शुष्क आँतों में न जाने प्राण उनके हैं फँसे!
अविराम आँखों से बरसता आँसुओं का मेह है,
है लटपटाती चाल उनकी, छटपटाती देह है
गिरकर कभी उठते यहाँ, उठकर कभी गिरते वहाँ
घायल हुए से घूमते हैं वे अनाथ जहाँ-तहाँ।
एक मुट्ठी अन्न को वे द्वार-द्वार पुकारते,
कहते हुए कातर वचन सब ओर हाथ पसारते
दाता, तुम्हारी जय रहे, हमको दया कर दीजियो,
माता! मरे हा! हा! हमारी शीघ्र ही सुध लीजियो।

यह है असली भारत—भूखा, नंगा। इसीलिए निराला ने 'विधवा' कविता में 'दलित भारत' कहा है। निराला के क्रांतिकारी चिंतन का यही उत्स है। जिस देश में हर वर्ष भूख से लाखों लोग मरते हैं, वहाँ वर्ण-व्यवस्था कैसी? तुलसीदास ने 'दारिद दसानन' कहा है, जिसने सबको ग्रस लिया है। निराला कहते हैं, अब वास्तव में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य नहीं हैं, सब शूद्र हैं। अर्थात् जाति-बंधनों में बँधे हुए भारतीय समाज में सबकी स्थिति शूद्र की है, क्योंकि पूरा भारत ही दलित है। इसलिए सबके अधिकार और सबकी सामाजिक स्थिति एक ही है। भूखे और नंगों से पटी हुई भारतभूमि में वर्ण और धर्म का सवाल कहाँ? यहाँ तो लोगों को रोटी चाहिए। शिकागो सभा में व्याख्यान देते हुए विवेकानंद ने यही बात कही थी कि हमारे यहाँ धर्म और दर्शन बहुत है, भारत को रोटी चाहिए और उसकी जब माँग की जाती है तो उसे पत्थर मिलता है।

जिस भारत के धन से अंग्रेज जाति अमीर हो रही थी, उसी के अभाव में यहाँ के लोग मर रहे थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय बंगाल में इतना भीषण अकाल पड़ा और उसमें इतने लोग मरे कि उसकी गणना ही नहीं हो सकी। रांगेय राघव ने उस अकाल का मार्मिक चित्रण 'विशाल

भारत' में कई रिपोर्ताज लिखकर किया। फणीश्वरनाथ रेणु ने १९४४ से १९५१ ई. तक कई कहानियाँ और रिपोर्ताज लिखकर भूख से तड़पते और मृत्यु से जूझते मनुष्यों का हृदय-विदारक चित्रण किया है।

१९४७ ई. में भारत में सत्ता-परिवर्तन हुआ, लेकिन व्यवस्था वही बनी रही। रेणु ने उसी दौर में 'इतिहास, मजहब और आदमी' नामक एक कहानी लिखी, जिसमें इस व्यवस्था को ईश्वर, गुलामी, गरीबी, भूख, मौत, जुल्म, दंगे, लूट, कत्लेआम को बरकरार रखने वाला बताया है। १९४७ ई. में हिंदू-मुस्लिम जगह-जगह लड़ रहे थे। रेणु इस कहानी में सवाल उठाते हैं, ''भूखे, बीमार मुल्क में धर्म के नाम पर लड़ाइयाँ होती हैं अथवा रोटी के लिए? रोटी के लिए नोआखाली और बिहार के गाँवों ने कितनी बार सम्मिलित कोशिश की?''

अर्थात् भारतीय लोगों का संघर्ष रोटी के लिए होना चाहिए था, किंतु वे धर्म के लिए लड़ रहे थे। मुसलमान लड़ रहे थे पाकिस्तान के लिए और हिंदू हिंदुस्तान के लिए। १९५० ई' में रेणु ने 'हड्डियों का पुल' लिखा। हिंदी साहित्य में इतना मार्मिक और जीवंत कथा-रिपोर्ताज पहली बार लिखा गया था, जिसमें भूख से मरते हुए लोगों का चित्रण सामाजिक विषमताओं को दरशाते हुए अनूठी शैली में किया गया है। रेणु बताते हैं कि मरे हुए लोगों की इतनी हड्डियाँ बिखरी हैं कि उससे एक शानदार पुल बनाया जा सकता है। १९६६ ई. में बिहार में अकाल पर लिखते हुए अंत में उन्होंने लिखा—

'ओकराहा गाँव के रत्तु सिंह ने हमें प्रेम से पाँच बेर लाकर दिए।...उससे पूछा गया कि जब यह बाजरा भी नहीं मिलेगा तो क्या करोगे? क्या होगा?'

उसने उसी सरलता से जवाब दिया, 'होते की? खायला न मिलते मरत।' खाने को नहीं मिलेगा, तो मरेंगे। और क्या होगा?...और क्या होगा?

'रत्तु सिंह मर जाएगा तो क्या होगा? इतने लोग मर गए तो क्या हुआ?...क्या होगा? कुछ नहीं होगा।'

१९वीं शताब्दी से अब तक अकाल, बाढ़ और महामारी से भारत में जितनी मौतें हुईं, उसका आँकड़ा प्रस्तुत करना मुश्किल है, लेकिन इन सवालों का जवाब भारतीय जनतंत्र में अब तक नही ढूँढ़ा जा सका है। निराला का 'भिक्षुक' जिस जीवन-स्थिति में दिखाई पड़ता है, आज भी भारत के हर शहर और गाँव में सामान्य जन की कमोबेश वैसी ही स्थितियाँ हैं, आदमी जहाँ जिंदा है, मुरदे की तरह!

यशवंत नगर, मार्खम कॉलेज के निकट,
हजारीबाग-८२५३०१ (झारखंड)
दूरभाष: ०९८३५३१२६६५

श्रीहरि की मधुशाला

कविता

● रोहित कुमार

मन की मादक प्रेम सुरा
को जोड़ बना लाया हाला,
प्रियवन तुमको आज पिलाना
चाह रहा मन मतवाला।

प्रेम भरा पहला प्याला
है प्रिये तुम्हारे हाथों में,
सर्वप्रथम तेरा अभिनंदन
करती मेरी मधुशाला।

प्रथम वार्त्ता तेरी-मेरी
लिये करों में हो प्याला,
सरल रूप में मुखरित हो
परिचय और मादक हाला।

श्रद्धाभाव से तुमको देखूँ,
प्रेमभाव से तुम मुझको।
प्रथम बार में प्यारा परिचय,
यों ही कराए मधुशाला।

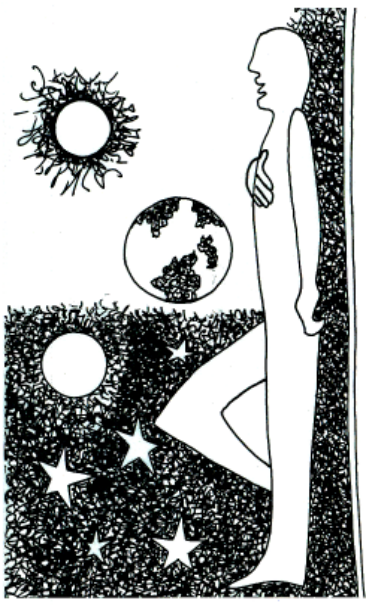

एक-एक कण जोड़कर मैंने
निर्मित की है मधुशाला,
सूक्ष्म, सरल, पर्याप्त है इसमें,
साकी, हाला, मधु प्याला।

भेज रहा हूँ मधुर निमंत्रण
मधु के हर दीवाने को,
हाला की पहचान अगर हो
आना मेरी मधुशाला।

अंगूरों की नव लताओं से
निकली है नव रस हाला,
चाह रहा हर एक प्यासा,
भरने को अपना प्याला।

नए रंग औ' नए स्वाद में
जग को आज परोसी है,
नए-नए हैं पीनेवाले
नई-नई है मधुशाला।

चोर नहीं मैं मदिरालय का
मैं हूँ एक प्यासा प्याला,
जिसने आज परिश्रम करके
खुद को सुरा में रँग डाला।

दुनियावालो! दोष न देना
मैंने यह स्वीकार किया,
मेरे मन में बसे हैं 'श्रीहरि'
ये है उन्हीं की मधुशाला।

बादीपुर, मरु आइमा
इलाहाबाद-२१२५०६
दूरभाष : ९१७३०९०९५२६२

स्मरण

अनुपम मिश्र : जिनका समाज साफ माथे का था

● संदीप जोशी

पहले कुछ अनुपम शीर्षक—'साफ माथे का समाज', 'पोथी पढ़ि-पढ़ि', 'अज्ञान भी ज्ञान है', 'लोक बुद्धि की जीवट यात्रा', 'गोचर का प्रसाद बाँटता लापोड़िया', 'साध्य, साधन, साधना', 'भोग उनका, भोगना हमारा', 'परोपकार का नया धंधा', 'अस्सी चूल्हों का गणतंत्र', 'कौन जीतेगा? मशीन या मन', 'थाली का बैंगन', 'मरघट तक जिंदा है बाजार', 'कुएँ में भाँग', 'ई-मौन', 'पुराना चावल', 'पुरखों से संवाद', 'अकेले नहीं आते हैं : अकाल', 'तैरने वाला समाज डूब रहा है', 'राजरोगियों की खतरनाक रजामंदी', 'भगदड़ में पड़ी सभ्यता', 'मरण हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है'। ये सभी शीर्षक अपने समय के साहित्य पर, सामाजिकता पर, व्यवस्था पर और राजनीति पर टिप्पणी हैं।

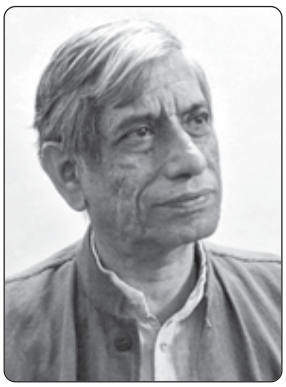

स्व. श्री अनुपम मिश्र

अनुपम जीवन अकसर असाधारण होते हैं। असाधारण हो या साधारण सभी जीवन मृत्यु पाते हैं। जन्म और मृत्यु के बीच की खटपट ही अपन सभी का जीवन होता है। बीच की खटपट को सुधारना ही जीवन का अनुपम उद्देश्य रहा है। अनुपम मिश्र ऐसा ही बिना खटपट के सुधार का जीवन जीकर गए। उनके जाने के बाद सबसे ज्यादा जो खटकता रहेगा उनसे संवाद। जिस संवाद को अपनी संपदा अपन मानते रहे, वही अब नि:शब्द हो गया है। और अपने जैसे अनेकों निठल्ले देश भर में, अनुपम संवाद के लिए तरसते रहेंगे। फिर जीवन क्यों केवल सम्मुख होते हुए संवाद करना भर ही रहता है? अब तो उनके साहित्य से ही उनके काम का, उनकी राजनीति का और उनके समाज का संवाद किया जा सकता है।

अनुपम मिश्र का जन्म वर्धा में हुआ। वहीं गांधीजी का आश्रम भी था। दिल्ली के हिंदू कॉलेज से वे सन् १९६९ में संस्कृत स्नातक हुए तो उसी साल देश भर में गांधी शताब्दी मनाई जा रही थी। समाजवादी राजनीति में रुचि लेने लगे और शताब्दी के काम में लगे। मन लगाकर मेहनत करने के लिए उनके साथी उनको मानने लगे। पिता और जाने-माने कवि भवानी प्रसाद मिश्र गांधी वाङ्मय पर काम कर रहे थे। राजघाट के सामने गांधी निधि में ही सपरिवार रहने आए। गांधी-विचार के माहौल में वे पले-बढ़े थे। गांधीजी के रचनात्मक कामों के महत्त्व को समाज और राजनीति में बढ़ाने के लिए बनाए गए शांति प्रतिष्ठान में अनुपम मिश्र ने पर्यावरण कक्ष बनाया। क्योंकि वे मानते थे कि गांधी ने ही दुनिया में सबसे पहले अपने पर्यावरण के प्रति लोगों को प्रेमपूर्वक आगाह किया था। हर तरह की अहिंसा से ही दुनिया के पर्यावरण को सम्मान से सहेजा जा सकता है।

पूरी तरह से पर्यावरण में लगने से पहले वे पत्रकार के रूप में टेहरी-गढ़वाल गए। वहाँ गौरा देवी, सुंदरलाल बहुगुणा और चंडीप्रसाद भट के द्वारा चलाए गए 'चिपको आंदोलन' के काम को देखा। गांधीजी के अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांत के प्रभाव से निकले आंदोलन को अनुपम मिश्र ने शामिल हो कर देखा। सभी सामाजिक और रचनात्मक कामों में गांधी की प्रासंगिकता का उनपर गहरा प्रभाव पड़ा। अनुपम मिश्र की आँखों देखी और मन से लिखी रिपोर्ट ने प्रकृति और पर्यावरण के प्रति लोगों की आँखें खोलीं और उनके मन झकझोरे। 'चिपको आंदोलन' की मुख्य नायिका गौरा देवी का मशहूर हो गया चित्र भी अनुपम मिश्र ने ही खींचा था। वे चित्र खींचने के रसिया थे और लिखने-पढ़ने के अलावा उसमें पारंगत भी हुए। राजघाट वाले घर में ही उन्होंने चित्रों को धोने का एक 'डार्क-रूम' भी बनाया था। 'चिपको आंदोलन' से अनुपम मिश्र ने समाज में अपनी पगडंडी तलाशी। यहीं से समसामयिक पत्रकारिता की शुरुआत की।

इसी बीच देश की राजनीति करवट ले रही थी। जयप्रकाश नारायण के प्रयासों से इंदिरा गांधी के विरोध में जनमत जुटाया जा रहा था। देश में गांधी विचार को लेकर जेपी ने अहिंसक तौर पर 'संपूर्ण क्रांति' का आवाह्न किया था। जेपी ने ही चंबल के बागियों और डाकुओं को समर्पण के लिए प्रोत्साहित किया। उन्हीं ने प्रभाष जोशी, अनुपम मिश्र और श्रवण गर्ग को उस समर्पण का लेखा-जोखा तैयार करने का काम सौंपा। तीनों ने मिलकर चंबल में रहकर 'चंबल की बंदूकें गांधी के चरणों में' किताब लिखी। पलटते माहौल को देखते हुए इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लगाया। जेपी और उनसे जुड़े लोगों को दिक्कतों तथा परेशानियों का सामना करना पड़ा। फिर सन् १९७७ के चुनाव हुए तो जनता ने जनता पार्टी को जनमत दिया। जनता पार्टी की सरकार बनी, जो आपसी कलह से ही जूझती रही। अनुपम मिश्र और उनके जैसे अनेकों गांधी के काम से प्रेम करनेवालों का मन खट्टा हुआ। अनुपम मिश्र ने राजनीति और पत्रकारिता से मुँह मोड़ा और समाज के काम में मन लगाया। गांधी शांति प्रतिष्ठान में आकर गांधीमार्ग में काम करने लगे। वहीं पर्यावरण-कक्ष की स्थापना की। गांधीजी के पर्यावरण विचारों पर शोध करने और उससे

कुछ नया निकालने में लग गए।

पर्यावरण का काम करने के साथ-साथ वहीं से निकलने वाली द्वि-मासिक पत्रिका 'गांधीमार्ग' से अपनी रोजी-रोटी चलाने लगे। गांधीमार्ग की संपादकीय पाने से पहले उन्होंने पर्यावरण कक्ष में शोध का काम करते हुए 'देश का पर्यावरण' किताब संकलित कर प्रकाशित की। फिर उसके बाद 'हमारा पर्यावरण' निकाली। दोनों ही किताबों से देश के पर्यावरण शोधकार्य पर अनुपम काम हुआ। देश में हर साल आनेवाली जल समस्या पर उनकी रुचि पैदा हुई। जल समस्या हल करने के रास्ते खोजने निकले तो देशभर में घूमने लगे। सभी जानते हैं, राजस्थान में सबसे कम बारिश होती है। वहाँ का समाज अपना जीवन कैसे चलाता है, समझने में लग गए। बारिश की एक-एक बूँद को सहेजने की प्रथा राजस्थान में बरसों से रही है। रेगिस्थान में जीवन-यापन करनेवाले लोग अपने तालाब, बावड़ी और कुएँ कैसे सहेजते हैं, अनुपम मिश्र ने वहाँ बार-बार जाकर समझा। फिर उनकी किताब 'तालाब' आई। जिसने रेगिस्थान के जनजीवन में नाममात्र जलस्रोतों के महत्त्व को समझा और सरलता से सभी को समझाया। उनकी किताबों की खासियत उनकी सरल भाषा, सुंदर सजावट और संवेदनशील कीमत रही है। इसलिए सभी किताबों ने लोकप्रियता के कीर्तिमान बनाए हैं।

'तालाब' आने के बाद उस किताब को वे जमीन पर उतारना चाहते थे। इसके लिए वे उन सभी संस्थाओं के साथ जुड़े, जो जल-संरक्षण और तालाब-उत्थान के काम में लगी थी। राजस्थान और अन्य जगहों पर काम करनेवाली ऐसी ही एक संस्था 'तरुण भारत संघ' है। उससे अनुपम मिश्र जुड़े और उनके साथ मिलकर हजारों तालाबों के जीर्णोद्धार में लगे। अपन भी एक बार उनके और पिताजी के साथ अलवर जिले के भीखमपुरा गाँव में सन् १९८९ में गए थे। जलविद् राजेंद्र सिंह 'तरुण भारत संघ' के प्रावधान में अलवर जिले के तालाबों पर काम कर रहे थे। वहीं विशाल सुंदर सिलीसेढ़ तालाब है और सरिस्का का 'टाईगर रिजर्व' जंगल भी। छोटा था, लेकिन दो मुद्दे तब भी समझ में आ गए थे। टाईगर के 'रिजर्व' के नाम पर सरकार गाँववालों को बेदखल करना चाहती थी और सिलीसेढ़ तालाब गाँववासियों और टाईगर दोनों के लिए जरूरी जल जुटाने में असमर्थ होता जा रहा था। क्योंकि अन्य छोटे तालाब, बावड़ी और कुएँ सूखते जा रहे थे। गाँववासियों को एक-दूसरे से जुड़ी इन समस्याओं से निजात तो पाना था, लेकिन उनकी समझ में नहीं आ रहा था।

राजेंद्र सिंह और अनुपम मिश्र ने अलग-अलग गाँवों में बात करनी शुरू की और उनको जुटाना, जोड़ना शुरू किया। सरकार के कलेक्टरों को भी समझाया कि बरसों से गाँववासी और टाईगर एक साथ रहते आए हैं। गाँव या जंगल केवल एक के लिए नहीं होने चाहिए। पेड़ों को कटने से रोकना ही जल-संसाधनों को सहेज सकता है। वहाँ जिन तालाबों और बावड़ियों को गाँववालों की मदद से सहेजा जा रहा था, उन कामों को देखने वहाँ गए थे। अनुपम मिश्र ने सरकार, गाँववासियों और 'तरुण भारत संघ' में समन्वय बनाया जाए, इसपर जोर दिया। उनका मानना था कि समाज में अपनी समस्याओं को सुलझाने का दमखम होता है, जिसे

समाज, राजनीति और साहित्य का उत्साही तथा इन्हीं विषयों पर समाचार-पत्रों में लगातार लेखन। एयर इंडिया के खेल-कूद विभाग में कार्यरत पूर्व क्रिकेट खिलाड़ी।

आपसी बैठकों में समझा-सुलझाया जा सकता है।

एक मजेदार किस्सा है। तरुण भारत संघ पेड़ों के संरक्षण में लगा था। गाँववाले अपने तालाब व जंगल बचाने में लगे थे। अलवर के तब के कलेक्टर इसमें साजिश देख रहे थे। वे गाँववालों के फिर से उभरे प्रकृति प्रेम में खोट देख रहे थे। उन्होंने गाँववालों और राजेंद्र सिंह के लिए अड़चनें पैदा कीं। राजेंद्र सिंह ने अनुपम मिश्र से कहा और उनने 'जनसत्ता' अखबार के तब के संपादक प्रभाष जोशी को मसला सुनाया। तीनों राजस्थान के मुख्यमंत्री से मिले और कलेक्टर का रातोरात तबादला हो गया। लेकिन गजब तो उसके बाद हुआ, जो अनुपम मिश्र ने किया। निकाले गए और जबरदस्ती भेजे गए कलेक्टर का गाँव में आदर किया और सम्मान से उनकी विदाई कराई। कलेक्टर को गणेश मूर्ति गाँववालों से भेंट कराई। सरकार, समाज और सेवा के समन्वय को सभी को समझाया। आज वही कलेक्टर केंद्र सरकार के उच्च पद पर हैं। अनुपम मिश्र के कारण उनके मन में गाँव, समाज और संघ के प्रति कोई खटास नहीं है।

अलवर में तरुण भारत संघ के उन कुछ सालों के काम से वहाँ का जोगराफिया ही बदल गया। अब सिलीसेढ़ झील बारह महीने पानी से भरी रहती है। उसको और अन्य जल संसाधनों को अनुपम मिश्र की प्रेरणा से, राजेंद्र सिंह के संगठित करने से और गाँववासियों के परिश्रम से आज जल समस्या से निवारण मिल गया है।

सन् १९८९ की भीकमपुरा यात्रा पर वापस आते हैं। हम तीनों और चालक रामसिंह जंगल में से होते हुए तरुण भारत संघ के आश्रम पहुँचे थे। वहाँ दो-तीन दिन रहकर कामकाज देखना था और गाँववालों से मिलना था। लेकिन उन दो दिनों में अलवर जिले में इतनी बारिश हुई कि वापस आने के रास्ते धुल गए। बहुत समय तक जंगल में ही घूमते रहने के बाद हम गुम गए। रामसिंह को रास्ता नहीं सूझ रहा था, क्योंकि सभी पगडंडी एक समान लग रही थीं। बीच में कई पेड़ गिरे थे जिनके कारण मुश्किल आसान नहीं हो रही थी। सूरज ढलने से पहले जंगल से बाहर भी निकलना था। अनुपम मिश्र को एक १०-१२ साल का बच्चा मिला। उन्होंने उसे अपने साथ गाड़ी में बैठाया और पूरे रास्ते हाथ इशारे से उस लड़के ने हमें शाम होने से पहले जंगल से निकाला।

उस बच्चे का नाम अब याद करने पर 'गोपाल', कृष्ण जैसा ही कुछ रहा था। क्योंकि अनुपम चाचा ने कहा था कि ये साक्षात् भगवान् बनकर हमें रास्ता दिखाने आया था। अनुपम मिश्र ने उस बेहद अजनबी लड़के का नाम पता कर लिया और उसे पढ़ने-लिखने के लिए प्रेरित

किया था। उस जंगल की वर्षा यात्रा से शुरू हुआ उनका और 'गोपाल' का डायरी, रोचक किताबें और पोस्टर वगैरह का आदान-प्रदान शायद उनके जाने तक चलता रहा। कुछ साल पहले पूछने पर उन्हीं ने किस्सा दोहराया था। 'गोपाल' और उनके जैसे अनेकों कृष्णों को अपने पढ़े-लिखे समाज में जोड़ने के पुल थे अनुपम मिश्र।

अनुपम मिश्र के जीवन का केंद्र तो उनका सुशील, समझदार, सहृदय और साक्षर समाज ही रहा है। जीवन भर वे समाज की समझ के संवाहक रहे। उनके लिए किसी भी सभ्यता, सरकार और सरोकार से बड़ा समाज ही रहा। उनकी स्मृति सभा में राजस्थान के लापोड़िया गाँव से पधारे लक्ष्मण सिंह ने जो कहा, वही अनुपम मिश्र की संपदा थी। लक्ष्मण सिंह बोले कि आप सभी को अगर अनुपम मिश्र से अब मिलना हो तो लापोड़िया पधारें। अनुपम मिश्र लापोड़िया में होने वाले हर काम में, हर उत्सव में और हर समस्या में जीवनसंगनी मजूश्री के साथ खड़े दिखेंगे। जाने के बाद, अपने कार्यक्षेत्र में यह आदर-सम्मान केवल नसीबवालों को नहीं मिलता। अनुपम मिश्र के लिए होनेवाला कुछ गलत नहीं होता था। अगर उनको कोई काम पसंद नहीं आता तो वे उसे खराब या गलत नहीं कहते थे। वे अकसर कहते देखे जा सकते थे, 'अपन इसको इस तरह करें तो कैसा रहेगा।' करनेवाले को प्रोत्साहन और प्रेरणा एक साथ मिलती थी। अनुपम मिश्र के समाज में सहजता और समझ की कभी कमी नहीं रही। भीखमपुरा, गोपालपुरा, लापोड़िया, देवघर, जैसलमेर, रामनगर के अलावा फ्रांस और मोरक्को, और ऐसी कई जगह हैं, जहाँ अनुपम मिश्र या उनके कामों को आज भी और कभी भी देखा जा सकता है। अनुपम मिश्र का समाज राष्ट्रीयता और आर्थिकता से परे सांस्कारिकता में विशाल था।

अगर समाज है तो उसकी राजनीति भी जरूर होगी। अनुपम मिश्र की भी सामाजिक राजनीति थी, जो गांधीजी और विनोबा से प्रेरित अध्यात्म और सेवा की थी। अगर समाज में राजनीति रही है तो अनुपम मिश्र की भी राजनीति रही। वे उससे निराश जरूर रहे, लेकिन अलग कभी नहीं हुए। निराश इसलिए थे कि राजनीति सामाजिकता में कमजोर सिद्ध हुई है। इसके बावजूद आशावादी थे, क्योंकि उनका विश्वास गांधीजी, विनोबा और समाज सेवा में जीवनपर्यंत बना रहा। अकसर दु:खी मन से लगता था कि अनुपम चाचा क्यों सरकार के कारिंदों को जल समस्या के निपटारे के समाधान नहीं समझाते हैं। उनसे पूछने पर ही मालूम पड़ा। दिल्ली की आप सरकार से पहले जो सरकार रही, उसके मुख्यमंत्री ने उनको वर्षा के जल को संरक्षण के उपाय सुझाने के लिए बुलाया। अनुपम चाचा ने जो मुख्यमंत्री को समझाया उसको करने का तय हो गया।

मुख्यमंत्री के अफसरों ने खर्चे का लेखा-जोखा माँगा। अनुपमजी ने उनके साथ जुड़े तकनीकी लोगों को खर्चे का हिसाब देने को कहा। केवल कुछ एक लाख रुपए का खर्चा देखकर मुख्यमंत्री के अफसरों ने स्वार्थी हैरानी में प्रस्ताव यह कहते हुए ठुकरा दिया कि कम-से-कम करोड़ों में तो होना चाहिए था। उसके बाद न तो दिल्ली की मुख्यमंत्री ने कोई हिम्मत दिखाई, न अनुपम मिश्र में कोई आशा जगी। दिल्ली की राजनीति में तैरनेवाले धुरंधर आज भी मानसून में डूबते देखे जा सकते हैं।

फिर कुछ साल पहले जी.एम.आर. कंपनी ने दुनिया में देखे जाने लायक दिल्ली में नई जगह पर नया एयरपोर्ट बनाया। तकनीक में तटस्त और आधुनिकता में अव्वल माने गए एयरपोर्ट में दूसरे मानसून में ही बाढ़ आ गई। अनुपम चाचा कहते थे कि तकनीकि और ताकतवर लोगों को यह समझ नहीं आया कि नए एयरपोर्ट की जगह तीन तालाब हुआ करते थे। इस जरूरी सभ्यता को नजरअंदाज कर एयरपोर्ट बनेंगे तो हर मानसून में माहवारी की तरह बारिश का पानी 'अराइवल' में आता रहेगा। इस विरासत के सत्य से कोई राजनीति मुँह नहीं मोड़ सकती है। इसीलिए और ऐसे कई कारणों से अनुपम मिश्र का राजनीतिक मोहभंग हुआ था।

अनुपम मिश्र ने अनुपम साहित्य भी गढ़ा है। सामाजिकता में लिखा गया उनका गद्य सुसंस्कृत समाज के लिए न भुलाए जानेवाला ग्रंथ माना जाएगा। इसका साफ बहता झरना, झरोंखे के रूप में अपन ने शुरुआत में ही दिखाने की कोशिश की है। सरल, सुंदर व सुरुचिपूर्ण शब्द उनके वाक्यों को जो अर्थ देते हैं, उसमें सार, सौम्यता और सार्थकता के साथ-साथ दु:ख न देनेवाला तंज भी होता था। पढ़ने में आनंद, रुचि और कही गई बात का संदर्भ नए अंदाज में मिलता है। साहित्य अगर समाज से जुड़ा न हो तो उसका औचित्य ही खतरे में दिखता है। अनुपम मिश्र के साहित्य के शीर्ष पर वही सेवाभावी समाज रहा है, जिसको नकचढ़ों ने साहित्य के लायक ही नहीं माना था। अनुपम मिश्र का साहित्य निर्मल, निमोही और निराकार रहा है। उनका साहित्य शाश्वत है।

अनुपम मिश्र में अपने जीवन के प्रति कोई आपाधापी नहीं थी। कबीर के शब्दों में कहें तो वे 'ऐसे परदेसी पंछी' थे, जो संसार में विरले थे। इस संसार में जहाँ लोग अचेते हैं, पग-पग पर पछताते हैं। लेकिन अनुपम मिश्र ने अपनी जीवन-चादर इतनी झीनी और इतनी तसल्ली से बुनी कि कोई पछतावा नहीं रहेगा। उनके जीवन में धन यौवन की तरह, बादल की छाया की तरह और सपने की माया जैसा रहा। वे कभी-कभी कहते थे कि ज्यादातर अज्ञान भी ज्ञान ही सिद्ध होता है। इसलिए अज्ञान को जानना भी ज्ञान को पहचानना है। हाड़-मांस के अनुपम मिश्र के लिए भी वही दोहराया जा सकता है, जो आइंस्टीन ने गांधीजी के बारे में कहा था। अनुपम मिश्र 'भोले मन' के थे, लेकिन 'अमर काया' की निष्क्रियता भी जानते-समझते थे। उनके लिए बेशक 'वा घर ही न्यारा' हो, लेकिन उनके होने से ही यह घर भी न्यारा होता था। अनुपम मिश्र समाज के ऐसे नायक हैं, जिनको सभ्यता तक याद किया जाता रहेगा। वे वहाँ पहुँच गए हैं, जहाँ न मन, न पवन पहुँच सकते हैं। लेकिन यहाँ उनका साहित्य सदा रहनेवाला है। ऐसे अनुपम जीवन को प्रणाम!

बी-४०८, प्रथम तल
निर्माण विहार, विकास मार्ग
दिल्ली-११००९२
दूरभाष : ०९९१११००४०८
इ-मेल : sandyjosh@gmail.com

नया जोश हो, नई उमंगें

● कृपा शंकर शर्मा 'अचूक'

नव वर्ष अभिनंदन

सबको हर दिन नया साल हो,
निज स्वदेश हित मन विशाल हो।

कर्मभूमि की करना पूजा,
एक लक्ष्य हो और न दूजा।

ऐसी अपनी चाल-ढाल हो,
सबको हर दिन नया साल हो।

नया जोश हो नई उमंगें,
खुशहाली की उठें तरंगें।

कहीं नहीं हिंसा-धमाल हो,
सबको हर दिन नया साल हो।

सदा समय का आदर करना,
सूरज जैसा तेज निखरना।

नित्य निरंतर उच्च भाल हो,
सबको हर दिन नया साल हो।

आओ दृढ संकल्प आज लें,
कोई नया विकल्प आज लें।

भारत की 'अचूक' मिसाल हो,
सबको हर दिन नया साल हो।

: दो :

गया साल, नववर्ष आ गया,
अभिनंदन कर लें।

प्रकृति सुहानी सरस मनोरम को,
वंदन कर लें।

नई सोच और संकल्पों से,
नाता हो अपना।

कर्मभूमि पर नव स्वर गूँजे,
पूरा हो सपना।

सभी दिशा मधु गीत सुनाएँ,
मन चंदन कर लें।

गया साल, नववर्ष आ गया,
अभिनंदन कर लें।

जो बैठे हैं घोर तिमिर में,
उन्हें जगाना है।

जिनको दूर-दूर जग करता,
अब अपनाना है।

मुसकाता हर फूल दिखे,
ऐसा उपवन कर लें।

गया साल, नववर्ष आ गया,
अभिनंदन कर लें।

संस्कृति सभ्यता सदा से,
सबसे है आली!

पर्वतराज 'अचूक' हमारी,
करता रखवाली।

अच्युत के उस महारास में,
तन पावन कर लें।

नया साल, नववर्ष आ गया,
अभिनंदन कर लें।

गीत

समय को प्रणाम कीजिए,
अपने फिर काम कीजिए।

देवता महान् बड़ा,
देखता है खड़ा-खड़ा।

रास्ता न जाम कीजिए,
समय को प्रणाम कीजिए।

बुरा नहीं, भला नहीं,
झुका नहीं चला नहीं।

सुपरिचित कवि, गीतकार एवं समीक्षक। 'फिर भी शेष रह गया', 'बतियाती भोर' (गीत-संग्रह); 'गीत खुशी के गाओ तुम' (बालगीत-संग्रह) के अलावा अब तक लगभग ७ हजार रचनाएँ प्रकाशित। काव्य शिरोमणि, काव्यश्री, साहित्यश्री, गीत शिरोमणि, तुलसी सम्मान, हिंदी सम्राट् सहित दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

नाम सरेआम कीजिए,
समय को प्रणाम कीजिए।

इस जैसा कौन यहाँ,
मुनियों में मौन यहाँ।

करना निष्काम कीजिए,
समय को प्रणाम कीजिए।

यह अपना जीवन है,
खिलता सा उपवन है।

ललित औ ललाम कीजिए,
समय को प्रणाम कीजिए।

नित 'अचूक' नारा है,
सारा जग हारा है।

अब मत आराम कीजिए,
समय को प्रणाम कीजिए।

गीत

साँझ ढले सूरज मन अपने
अनबन सा चलता जाए,
तोड़ सके सब मौन साधना
जो-जो इस पथ में आए।

तन की तपन बढ़ी भी इतनी
सागर भी शीतलता हारा,
छोड़ सका कब यह सदियों से
अब तक खारे का खारा।

सदियों साथ भ्रमण नित करता,
अपनापन नहीं अपनाए,
तोड़ सके सब मौन साधना
जो-जो इस पथ में आए।

भावांजलि तो रही अधूरी
पुष्पांजलि रहने देते
अनगिन सपनों की समिधाएँ
आतप इनकी सह लेते।

भोर प्रतीक्षालय से निकलें
धीमे-धीमे शरमाए,
तोड़ सके सब मौन साधना
जो-जो इस पथ में आए।

शासन-अनुशासन किस पर हो
कुछ भी नहीं पता कोई,
दुविधाओं की बसे नगरिया
अपनी परछाईं खोई।

सोम 'अचूक' पिया जिस-जिसने
वह पीकर के लहराए,
तोड़ सके सब मौन साधना
जो-जो इस पथ में आए।

३८-ए, विजय नगर, करतारपुरा,
जयपुर-३०२००६
दूरभाष : ०९९८३८११५०६

जीवन-झरना

मूल : **एमिलिया पार्डो बाजान**
अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

बीमार ऊँट चालक को झरने के किनारे छोड़कर काफिला चलता रहा। झरने के पानी की प्रसिद्धि के कारण सारे काफिले वहाँ रुकते थे—पानी, जिसकी बाबत बहुत बातें की जाती थीं। कुछ कहते कि इसके एक घूँट से दुर्बल में पुन: शक्ति आ जाती थी और दूसरों का विचार था कि इसके गुण अजीब, भयानक और यहाँ तक कि प्राणनाशक थे।

हजरत मुहम्मद के दामाद हजरत अली के अनुयायी और वह आदमी जिससे हजरत के धार्मिक और राजनैतिक काम को जारी रखना था, झरने के पानी का विशेष आदर करते थे। वे कहते थे कि उदार और अभागा राजकुमार, जो अपने घोषित शत्रु ऐशा या आजा, हजरत की विधवा, की सेना पर विजयी था, ने अपनी निश्चित विजयवाले दिन इसी से अपनी प्यास बुझाई थी। जैसे सभी विश्वासी जानते हैं कि हजरत की विधवा लड़ाई में ऊँट से गिर गई थी, अली ने उसे आदरपूर्वक उठाया तथा क्षमा कर दिया और उसे सुरक्षित मक्का भेज दिया। यह कहा जाता है कि उसी समय से ही जीवन झरने के पानी के गुणों की चर्चा शुरू हुई थी। यह बताया गया है कि ऐशा, जो उन केवल चार अद्वितीय महिलाओं में से एक थी जो इस दुनिया में रहीं, ने अपनी पराजय और कैदी बनाए जाने के बाद, पानी को अपने होंठों से छुआ तो उसने घोषणा की कि उसका स्वाद असह्य था।

ऊँट चालक पानी के स्वाद के बारे में नहीं सोच रहा था। उसने धूल के उस बादल को लुप्त होते देखा जो विदा होता हुआ काफिला छोड़ गया था और अपने आपको मरुस्थल की रेत के समुद्र में टूटे हुए जहाज के यात्री के रूप में पाया।

यह सत्य है कि झरना नखलिस्तान से घिरा हुआ था। दस-बारह खजूर के पेड़ और ऊँटों को पानी पिलानेवाला ईंट-मसाले से बना कठौता और दूर मसजिद में जानेवाले यात्रियों के थोड़े आराम के लिए विश्रामगृह—इतना ही उस एकांत नखलिस्तान में था। गरमी, जिसने उसकी नाड़ियों में रक्त को शुष्क कर दिया था, से भकोसाए किफायती और संयमी ऊँट चालक ने अब खाने—रोटी और खजूर जो उसका सामान्य भोजन था, की ओर ध्यान नहीं दिया; अब उसका सहारा केवल झरने का पानी था।

''वे इसको जीवन का झरना कहकर अच्छा करते हैं। मैं कुछ ही दिनों में अच्छा हो जाऊँगा। मैं इसको पीता रहूँगा।''

दो-तीन दिन बीत गए। त्यागा हुआ व्यक्ति अपना मिट्टी का बरतन पानी की मुश्क से भरता रहा, जो उसके साथी आगे जाने से पहले भरकर उसकी बगल में छोड़ गए थे, और जैसे ही वह पानी पीता था, सोचने लगता—

'मेरी बीमारी जरूर मेरे दिमाग को घुमा देगी। अभी यह पानी कितना मीठा था और अब ऐसा हो गया जैसे कोई कड़वा काढ़ा मिला दिया गया हो।'

तीसरे दिन बौनी जाति के लोगों, जो थोड़ी दूर शुष्क घाटी की ढलान पर ठहरे हुए थे, की लड़कियाँ अपनी पानी की मुश्के भरने के लिए झरने पर आईं। बीमार आदमी ने अपनी मुश्क भरने के लिए याचना की क्योंकि वह स्वयं इतना दुर्बल हो गया था कि मुश्क को झरने में डुबो नहीं सकता था। एक पंद्रह वर्षीया, बारहसिंघे की तरह पतली लड़की ने सिकड़ी को घुमाया और पानी से भरी बालटी ऊपर आ गई। पानी ठंडा और बिल्लौर की तरह साफ था। बीमार आदमी ने घूँट भरने के लिए काँपते हुए हाथ फैलाए। जब लड़की ने चमकीले पानी से भरा, चित्रकारी किया हुआ अपना बरतन उसे दिया तो वह प्रसन्नता से मुसकराया, परंतु कुछ बूँद पानी पीते ही उसने बुरी तरह मुँह बनाया।

''मुश्क के पानी के स्वाद की अपेक्षा इसका स्वाद और अधिक कड़वा है।'' वह व्याकुलता से बड़बड़ाया।

लड़की ने अपने बरतन में थोड़ा पानी लिया और उसको बड़ी प्रसन्नता से धीरे-धीरे स्वाद चखते हुए पीया और बरतन को खाली कर दिया।

''तुम कड़वेपन की क्या बात करते हो?'' उसने हँसते हुए पूछा, ''यह तो पहाड़ों की चोटियों पर पड़ी हुई बर्फ से भी अधिक ताजा और हमारी भेड़ों के दूध से भी अधिक मीठा है। इसने मुझे ताजा कर दिया है और बहुत लाभ पहुँचाया है। मैंने इससे अच्छा पानी कभी नहीं पीया। लड़कियो, इसे चखो और बताओ कि मैं ठीक कह रही हूँ।''

और पानी लेनेवाली लड़कियों के समूह ने अपनी भरी हुई मुश्कें गधों पर पड़े हुए जाल के थैलों में रखने से पहले, झरने के पानी के लंबे-लंबे घूँट पीए। एक-दूसरी से बरतनों को छीनने का बहाना करते हुए और उनकी कुर्तियों पर पानी के छींटें उड़ाते हुए, उन्होंने परस्पर मजाक किया; ताजा खजूरों की तरह धूप से चमकते जैतूनी रंग के उनके कंधे, उनकी युवा छातियों के आकार मात्र और गोल बाँहें चमक रही थीं;

उनकी अंडाकार काली आँखें खोलते समय चमकती थीं और अनार के दानों की तरह उनके दाँत पानी से ताजा हुए लाल होंठों में और भी सफेद नजर आते थे। फिर वे मुश्कों के बीच जमकर गधों पर सवार हो गईं और जीवन एवं यौवन के आनंद के साथ वापस अपने पड़ाव के लिए चल दीं।

ऊँट चालक एक बार फिर अकेला रह गया। जैसे उसने पहले लुप्त होते हुए काफिले के धूल के बादल को देखा था, अब उसी तरह उसने गधों के खुरों से उठती रेतीली धूल के बादल को देखा। मुश्कों के साथ घर जल्दी पहुँचने के लिए, हँसते-हँसाते सवारों को दूर तक जाते देखा—किसी सड़क पर नहीं क्योंकि मरुस्थल स्वयं ही एक विशाल सड़क है, रेतीली समतल भूमि है। ज्वर ने उसको नष्ट कर दिया था; निराशा में उसने पुन: पानी पीया; पानी का स्वाद पहले से भी अधिक कड़वा था!

दिन गुजरते गए। बीमार आदमी ने उनके बीतने को माला के मनकों पर गिना—माला, जो हर धार्मिक मुसलमान अपनी कमर से बाँधता है। वह इसी तरह उनको गिन सकता था क्योंकि सभी दिन एक जैसे होते हैं। प्रतिदिन सूर्य की किरणें पीतल के आकाश को चूर-चूर करती थीं; प्रत्येक चौंधियानेवाली दोपहर वैसी थी जैसी पहले बीती थी—बहुत बड़े नीले निर्दयी आकाश से रोशनी की भड़कीली धन-संपन्नता; हर सायंकाल भुनी रेत से वही प्रतिबिंबित गरम साँस आती थी, जब सूर्य दूर क्षितिज में अस्त होता और जंगली जानवर अपनी मोदों और गुफाओं से रेतीले समतल मरुस्थल में निकलते थे। हर रात पूरबी सितारों की दमक से जड़े आकाश का वही देदीप्यमान सामान्य स्थान। कभी भी ठंडी हवा का झोंका पृथ्वी से नहीं उठा अथवा आकाश से नहीं उतरा। गहरे नीले रंग के अस्तर के साथ ताँबे का चंदवा-सा नजर आ रहा था, सितारे निर्दयता से झाँक रहे थे मानो वे किसी सम्राट् की उदास आँखें हों जो अपनी प्रजा के दु:खों के प्रति लापरवाह हो!

अपनी प्यास, जिसने उसे नष्ट कर दिया था, को रोकने में अक्षम बीमार आदमी ने पानी पीया। हमेशा झरने से पीया जो प्रतिदिन कड़वे-से-कड़वा होता चला गया और स्वाद का प्रतिघाती बनता गया—न केवल प्रतिदिन, बल्कि हर घूँट के बाद अनुक्रम से। ऐसा लगता था कि दुरात्माएँ मानव जाति को यातना देने के लिए कठोरता के थैले, मुट्ठी भर नमक और हर अत्यंत कड़वी औषधि झरने में डाल रही हो, जो स्वाद को अप्रिय बनाते थे। एक ऐसा क्षण आया जब ऊँट चालक की शक्ति ने जवाब दे दिया, जब वह पानी को देखकर काँप जाता था और झरने की बगल में लेटे हुए उसने मृत्यु की प्रतीक्षा करने का निश्चय कर लिया जिसके लिए सहनशीलता और समर्पण त्यागे नहीं जा सकते; वह अपने दु:खों से मुक्त होने के लिए चिंतित भी था।

एक गंभीर आवाज सुनकर उसकी आँखें खुल गईं। उसके सामने एक भद्र आदमी, चाँदी-सी सफेद दाढ़ी के साथ, पैबंद लगे कपड़े पहने जो निर्धनता के प्रतीत थे—खड़ा था। वह चरवाहे की छड़ी पर झुका हुआ था और उसके कंधों पर थैला था जिससे प्रतीत होता था कि वह भिक्षुक था। धूप से भूरा हुआ उसका चेहरा कुलीन आकृति से, अलग पहचाना जा सकता था; और बीमार आदमी पर जमी उसकी आँखों में दया नहीं, बल्कि निर्मल गहरी चिंता दिख रही थी; मन:स्थिति जो पवित्र पुस्तकों को जानती थी और समस्त जीवन के दिल में प्रवेश करने योग्य थी। भद्र अजनबी अपने दाएँ हाथ में प्याला थामे हुए था, मानो उससे पीना चाहता हो।

एक गंभीर आवाज सुनकर उसकी आँखें खुल गईं। उसके सामने एक भद्र आदमी, चाँदी-सी सफेद दाढ़ी के साथ, पैबंद लगे कपड़े पहने जो निर्धनता के प्रतीत थे—खड़ा था। वह चरवाहे की छड़ी पर झुका हुआ था और उसके कंधों पर थैला था जिससे प्रतीत होता था कि वह भिक्षुक था।

''मत पीयो, महाराज,'' ऊँट चालक ने कहा, ''यह चिरायते की भाँति कड़वा है, यह तुम्हें नुकसान देगा। मैं इसे और नहीं पी सकता।''

उसको अनसुना करते हुए अजनबी ने पी लिया, परंतु किसी प्रकार की घृणा अथवा खुशी प्रकट नहीं की।

''यह पानी,'' उसने मुँह पर हाथ का पिछला भाग, जो तपते सूर्य से भुन गया था, फेरते हुए कहा, ''न कड़वा है और न ही मीठा। इसका कड़ुवापन या मिठास, इसको पीनेवाले के स्वाद पर निर्भर होती है। जबसे तुम यहाँ लेटे हुए हो, क्या तुमने अपने अतिरिक्त औरों को नहीं देखा? क्या स्वस्थ युवा लोग पानी पीने नहीं आए?''

''हाँ,'' ऊँट चालक ने उत्तर दिया—''कुछ युवा लड़कियाँ आई थीं—बहुत प्रसन्न और आनंदचित्त—अपने डेरे के लिए पानी लेने; उन्होंने पानी के गुणों की प्रशंसा की थी।''

''तो अब तुमने देखा,'' भद्र अजनबी ने शांतिपूर्वक कहा, ''मौत का फरिश्ता तुमपर दया करे और कम-से-कम तुम्हें आज्ञा दे कि तुम झरने का पानी पी सको। मैं तुम्हें अपने साथ ले जाता, परंतु तुम्हें इस दुर्दशा से निकालने के लिए मेरा गधा पहले ही पूरी तरह लदा हुआ है और मुझे किसी काफिले से मिलने की जल्दी है क्योंकि यदि मैं अकेला जाऊँगा तो जंगली जानवर मुझपर झपटकर मुझे फाड़ डालेंगे।''

और अजनबी कुरान शरीफ की आयत पढ़ता हुआ चला गया। जब चमकते क्षितिज में उसका काला आकार लुप्त हो गया तो ऊँट चालक ने सोचा कि उसकी अंतिम आशा भी जाती रही। अपने बढ़ते ज्वर में वह झरने के इर्दगिर्द पत्थरों से बने स्थान पर पहुँचा और अपनी निराशा में उसको दोनों हाथों से थामा, परंतु अपनी शक्ति के लिए किसी विशेष प्रयत्न के बिना, जो मृत्यु को प्राप्त करने के लिए भी पर्याप्त नहीं थी, वह सिर के बल झरने में गिर गया।

□

जब ऊँट चालक ने अपने आपको जीवन झरने में गिरा दिया तो उसके बाद भी झरने से निकाला गया पानी किसी के लिए मीठा एवं स्वादिष्ट था और दूसरे कई के लिए कड़वा। यहाँ यही कहा जा सकता है कि जब लोग उस प्रभेदकारी स्वाद को चखते थे तो वे सोचते थे कि भले ही पानी जीवन झरने से आता था, परंतु वह स्वाद उनके मन में मृत्यु का अनिवार्य विचार पैदा करता था!

'घी के बिना होम-हवन नहीं, बेटी के बिना संसार नहीं'

● मालती शर्मा

एक क्रांतिकारी कदम के रूप में मोदी सरकार का देश के सबसे कम लिंगानुपात और ऑनरशिप किलिंग के प्रांत हरियाणा से प्रारंभ किया 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' अभियान भारतीय लोक-परंपरा के लोकपुरुष प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की आज के समाज में हमारी लोक-परंपरा की वापसी है। एक तरह का पुनरुज्जीवन है।

आज 'बेटी बचाओ अभियान' पर हर पत्र-पत्रिका में सहस्त्रों पन्ने रँगे जा रहे हैं। मीडिया दिन-रात 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' पुकार रहा है, पर हमारे देश में लोक परंपरित हमारे जीवनदर्शन में लोक परंपरा अपने गीतों की कुछ पंक्तियों में सृष्टि के युग्मराग के एक तार 'बेटी की जीवन में अनिवार्यता' के लिए न जाने कब से यह कहती आई है। बुंदेलखंड का लड़की के विवाह का एक लाड़ी/बन्नी गीत है—

काँकर कुइया खुदाऊ राजा आजुल
बा पै रँहट चलाऊ हो रामा
रँहट को पानी आजी रानी ए पिबाऊ
तो धीय को गरभ खसि जाय न हो रामा
धीय बिन होम न होय राजा आजुल
धीय (बेटी) बिन जग संसार न हो रामा!

इस तरह के अनेकानेक लोकगीतों की दो-दो पंक्तियों में समाहित सामाजिक संवेदनाओं से सराबोर जीवन के सत्य हमारी आज की स्थितियों पर सोचने के सही संकेत देते हैं।

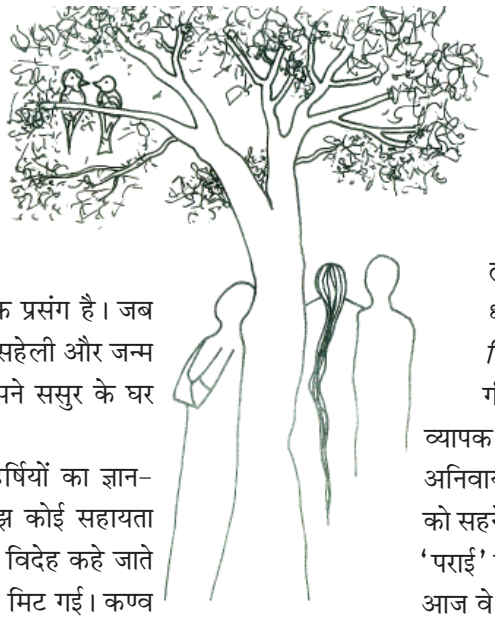

आणविक सभ्यता और कंप्यूटर से हुई क्रांति से मिटी समय और स्थान की दूरियों में सिमटी, मानवीय संवेदनाओं के इतने क्षरण के बावजूद अभी भी, आज भी, हमारे समाज में बेटी की विदाई जीवन का सबसे कारुणिक प्रसंग है। जब बेटी घर के कोने-आले में रखी गुड़ियाँ, रोती सहेली और जन्म से अब तक का बाबुल का आँगन छोड़, अपने ससुर के घर जाती है।

बेटी की विदाई की इस स्थिति में महर्षियों का ज्ञान-वैराग्य, वैज्ञानिकों की तथ्य यथार्थपरक समझ कोई सहायता नहीं करती। जानकी की विदाई पर जनक, जो विदेह कहे जाते थे, उनका भी धैर्य चुक गया, ज्ञान की मर्यादा मिट गई। कण्व ऋषि तक शकुंतला की विदाई नहीं सह सके थे।

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ लेखिका। कविता, लोकवार्त्ता, लोक-संस्कृति, समीक्षा, बाल साहित्य तथा अद्यतन सामाजिक-राजनीतिक विषयों पर विगत अड़तालीस वर्षों से अनवरत लेखन। प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में लगभग नौ सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित, विविध संग्रहों तथा शोध ग्रंथों में शामिल। छोटे-बड़े कई दर्जन पुरस्कार-सम्मानों से अलंकृत। संप्रति लेखन में रत।

मैंने अपने भाई 'पृथ्वी' मिसाइल और अग्नि-५ मिसाइल के निर्माता-निदेशक पद्मभूषण डॉ. वी.के. सारस्वत को अपनी बेटी की विदाई पर फूट-फूटकर रोते हुए देखा है। दूसरे छोटे भाई चर्म और कुष्ठ रोग विशेषज्ञ डॉ. पी.के. सारस्वत को बेटी अक्षदा की विदाई करते हिचकियाँ भरते रोते देखा है।

पर लड़की की यह विदाई, यह बिछोह कितना जरूरी, कितना अपरिहार्य व अनिवार्य है समाज के लिए, यह तथ्य सत्य लोक-परंपरा में स्वयं विदा होती हुई बेटी, उसके रथ का डंडा पकड़े खड़े रोते हुए भाई को बहन समझाती हुई बताती है—

'भाई, मेरे रथ का डंडा छोड़ दो। हम समाज में यदि अपनी बहन-बेटी दूसरों को देंगे नहीं और दूसरों की लेकर आएँगे नहीं तो यह संसार चलेगा कैसे?'

बेटी की विदाई का गीत है—
छोटे बीरन पकर्‌यो रथ कौ ओ डंडा
हमरी बहिन कहाँ जाए हो... ?
छोड़ो बिरन मेरे रथ कौ ओ डंडा
अपनी न देंगे, पराई न लेंगे।
लोक-चलन कैसे होय हो?
धरती-चलन कैसे होय हो?
जिअ जग कौ, ब्यौहार ओ...

गीत की दो पंक्तियों में व्यक्त विश्व लोकवार्त्ता में व्यापक स्तर पर मान्य 'क्रॉस ब्रीड' का तथ्य तो समझाता, अनिवार्यता बताता ही है, बहन-बेटी के बिछोह के दु:ख को सहने की शक्ति भी देता है—और गीत में आए 'अपनी' 'पराई' शब्द क्या एक अभिव्यंजित अर्थ ध्वनित करते हुए आज वे लिए 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' जैसा एक घोष

वाक्य या नारा नहीं देते?

'बेटी देओ, बेटी लाओ,
दहेज दावानल पी जाओ।'

बेटी की जुदाई के इस करुण प्रसंग में परिवारजनों और परिचितों के लाड़-प्यार के बीच पाल-पोसकर बड़ी की गई बेटी को अपने से अलग कर, पराई बना, दूसरे के हाथों में सौंपने का दु:ख तो है ही। बेटी के अनिश्चित भविष्य की आशंकाओं और आज आए दिन सामने आते चले जा रहे दहेज हत्या, वधू दहन, उत्पीड़न, अत्याचारों, दुर्व्यवहार के मामलों का दु:ख भी नहीं है क्या?

लोक-परंपरा में वधू दहन के तत्काल बचाव के लिए पहली होली पर नई बहू को सुसराल में न रहने देने जैसे रीति-रिवाज भी बनाए हैं। सौ बातों की एक बात, इनके पीछे का यथार्थ जो भी हो, आज की सामाजिक परिस्थितियों में सारी विसंगतियों पर सोचने, लोकपरंपरित, शाश्वत सत्यों के प्रकाश में परीक्षण की जरूरत क्या नहीं है? उत्तर 'हाँ' है।

फ्लैट नं. ८, मधु अपार्टमेंट
१०३४/१ मॉडल कॉलोनी, कैनाल रोड
पुणे-४११०१६ (महा.)
दूरभाष : ९४२३२४७०३३

दोहे

नीतिपरक दोहे

● **शिव ओम अंबर**

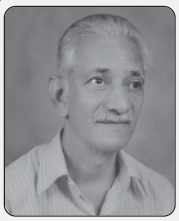

सुप्रसिद्ध गजलकार। २३ सितंबर, १९५२ को जनमे शिव ओम अंबर के कई गजल संग्रह आए हैं। 'आराधना अग्नि की' कृति विशेष चर्चित रही। 'काँटों का सफर' संपादित गजल संग्रह है। अबतक पं. दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान, हिंदी साहित्य भूषण सम्मान तथा विविध संस्थाओं द्वारा अनेक बार सम्मानित।

आगम-निगम बने सदाशिव के श्वासोच्छ्वास।
अश्रु बना रुद्राक्ष तो अट्टहास कैलास॥

प्यास-त्रास-उपवास का है अब-जग इतिहास।
हास-हुलास-विलास की परिणति इस नि:श्वास॥

एक-एक रजकण यहाँ है रहस्यमय ग्रंथ।
बेहद जटिल निगूढ़ है जग-जीवन का पंथ॥

दूर-दूर से ही सुभग श्री संयुक्त महान्।
तैलचित्र हैं वस्तुत: यहाँ सभी इनसान॥

ठहरी तो कजला गया निर्मल धवल चरित्र।
जब तक रही प्रवाह में थी जल-राशि पवित्र॥

क्षिति-जल-पावक-वायु-नभ का प्रगाढ़ आश्लेष।
व्यक्ति-व्यक्ति है वस्तुत: संवेगों का श्लेष॥

कृति के हर किरदार में व्यंजित है कृतिकार।
कविता का सत्कार ही है कवि का सत्कार॥

निस्पृता निर्लेपता नवता का अधिवास।
यायावर पर्जन्य है मूर्तिमंत संन्यास॥

हद में अनहद बाँधने की अक्षरा उमंग।
कविता वसुधा पे सुधा की सम्मूर्त तरंग॥

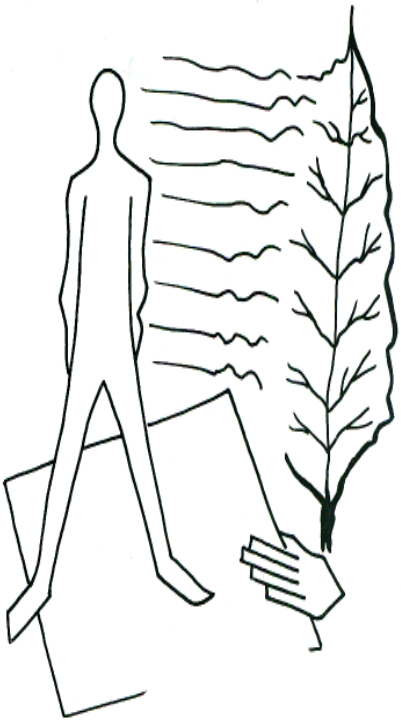

अंधकार के पृष्ठ पर अंकित ज्योतिर्मंत्र।
हर दीपक है स्वस्तिकर श्रेयस्कर श्रीयंत्र॥

है विराटनगरी सदृश दिल्ली का परिवेश।
पार्थ यहाँ धारे मिला वृहन्नला का वेष॥

बना नहीं गुणतंत्र तो ये असफल गणतंत्र।
शनै:-शनै: बन जाएगा खुद ही गणिकातंत्र॥

अर्थहीन हैं शिष्टता-सहृदयता-सौजन्य।
जो है जितना वन्य वो है उतना मूर्धन्य॥

मंच कर रहा है विकृति को साष्टांग प्रणाम।
अर्चा के आसन हुए उद्दंडों के नाम॥

कवि वन-वन भटकाव का इक करुणार्द्र निबंध।
कविता विश्व-विमोहिनी कस्तूरी की गंध॥

४/१०, नुनहाई स्ट्रीट,
फर्रुखाबाद-२०९६२५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५३३३०५९

उत्तराखंड के चारों धाम की यात्रा

● एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

पैरों में पर लग गए, मन में भरी उमंग।
अब चलो बदरीधाम को, आप हमारे संग॥

गनचुंबी हिमालय पर्वत की श्रृंखलाएँ, बर्फीली चोटियाँ, चाँदी-सी चमकीली हिमशिलाएँ पिघलकर सैकड़ों फीट नीचे गिरती जल-धाराओं के साथ झरने, नदी रूप में परिवर्तित होते, सर्पीले वेग से बहती धाराएँ, तटों पर पहरा देते देवदार के हरे-भरे ऊँचे वृक्ष किसका मन नहीं मोह लेते!

पत्नी सहित हमारा सात सदस्यी यात्री दल चार धाम की यात्रा पर निकल पड़ा। वर्ष २००३ के मई माह का मध्य है, यहाँ बहुत गरमी पड़ रही है, गरमी से बेहाल तपते दिवस में ही झाँसी, दिल्ली होते हुए करीब १२ बजे हरिद्वार स्टेशन पर पहुँच गए। कुछ देर ठहरकर ट्रेन चल दी, देखते क्या हैं कि कुल ६ सदस्य ही रह गए। हुआ यह कि सभी लोग सामान उतारने में लग गए थे और हमारी रिश्ते की भाभीजी ने सोचा कि बाथ से निपट लें। बस ट्रेन चल पड़ी। भाभीजी की होशियारी काम नहीं आई। हम लोगों ने अगले स्टेशन मास्टर को फोन किया। चार पहिया वाहन लेकर के अगले स्टेशन से भाभीजी को वापस लाकर समूह में शामिल किया। इस घटना से सभी साथियों को यह बात समझ में आ गई कि थोड़ी सी असावधानी यात्रा में परेशानी का कारण बन जाती है। वहाँ से चलकर शहर में एक अच्छे से होटल में आरामदायक कमरों में ठहर गए। आज ही कल की यात्रा की व्यवस्था करनी थी और सात बजे शाम को गंगाजी की संसार-प्रसिद्ध भव्य आरती में भी शामिल होना था।

उत्तराखंड के चार धाम की यात्रा दो स्थानों द्वारा सड़क मार्ग से प्रारंभ होती है—हरिद्वार और ऋषिकेश। हम लोग हरिद्वार से यात्रा प्रारंभ करनेवाले हैं। उल्लेखनीय है कि अक्षय तृतीया से प्रारंभ होकर दीपावली को यात्रा पूर्ण होती है। ट्रांसपोर्टर के एजेंट होटलों और धर्मशालाओं से संपर्क साधे रहते हैं। ये लोग हमारे पास भी पहुँच गए। सो छोटी गाड़ी से ही सात सदस्यों की संपूर्ण यात्रा की बात हो गई। हम लोग छह बजे ही गंगा तट के लिए चल दिए। गंगाजी के किनारे मंदिर के समीप घाट पर हजारों लोग एकत्र हैं। यहाँ साधु-संत सामूहिक रूप से सैकड़ों आरतियाँ ऊँ-आकार में घुमाकर माँ गंगा की आरती कर रहे हैं। संपूर्ण तीर्थ का साक्षात्कार हो रहा है। ऐसा अनुभव होता है, मानो हमारे हृदय में ज्ञान प्रकाश प्रज्वलित हो गया हो। अनुपम दृश्य, संसार प्रसिद्ध भव्य आरती के दर्शन कर धन्य हो गए। वहाँ से लौटकर ९ बजे तक वापस होटल आए तो वह एजेंट मिला, उसे और यात्री मिल गए थे। उसने छोटी गाड़ी का प्रोग्राम निरस्त कर मिनी बस कर ली थी। कुल ३५ यात्री हो गए थे। सीट आरामदायक २×२ की थी। रात्रि विश्राम हरिद्वार में करके प्रात: यात्रा पर निकलना था। सामान्यत: हरिद्वार से चार धाम यात्रा का कार्यक्रम छोटी गाड़ी से ९ दिन, बड़ी गाड़ी से १० दिन का तथा गढ़वाल मंडल की टूरिस्ट बसों के द्वारा यह समय ११ दिन और १० रात्रि का होता है।

जाने-माने लेखक एवं कवि। प्रमुख कृतियाँ हैं—'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (*काव्य-संग्रह*), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (*कहानी-संग्रह*)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

वेद-पुराणों में वर्णित है कि चार युगों के चार धाम हैं। जो देश की चार दिशाओं में स्थापित हैं—बदरी विशाल, रामेश्वर, द्वारकापुरी एवं जगदीश पुरी। इन तीर्थों के दर्शन करने से मनुष्य पापों से मुक्ति पाता है और समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं। बदरीतीर्थ के लिए यमनोत्तरी से यात्रा प्रारंभ की जाती है। यमनोत्तरी से गंगोत्तरी, केदारनाथ, तत्पश्चात् बदरी विशाल में यात्रा समाप्त होती है। परंपरानुसार इन चार धाम की यात्रा पश्चिम से प्रारंभ कर पूर्व दिशा में समाप्त की जाती है। उत्तरांचल में स्थित इस तीर्थ को देवभूमि कहते हैं, जो कि साक्षात् स्वर्ग यानी बैकुंठ धाम है। जैसे गूँगे व्यक्ति को अत्यंत मीठा फल खिलाया जाए तो उसका स्वाद वह कह नहीं सकता, उसकी अनुभूति ही कर सकता है, यहाँ वैसा ही आनंद प्राप्त होता है—अकथनीय! यह यात्रा अक्षय तृतीया से प्रारंभ होकर दीपावली के पश्चात् अक्तूबर-नवंबर तक ही चलती है, क्योंकि फिर अधिक वर्षा, बर्फ गिरने के कारण मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं। याद रखें—ऊपरी बर्फीले हिस्से में पहुँचने पर यदि घबराहट होती है तो गरम पानी पीना चाहिए, जिससे बहुत राहत मिलती है। नाश्ते के लिए अधिकांशत: सूखे मेवे इत्यादि ही रखना अच्छा रहता है।

चूँकि श्रीबदरीनाथ धाम के पट अक्षय तृतीया यानी सतयुगी दिवस को खुलते हैं। पूजा-अर्चना होती है तो इसके साथ ही उत्तरांचल के धामों की यात्रा प्रारंभ हो जाती है। क्षेत्रवासियों के लिए भी रोजगार प्रारंभ हो जाते हैं। भोजनालय एवं ठहरने के स्थान भी साफ-सफाई कर तैयार कर दिए जाते हैं। १९ मई सोमवार को सभी सहयात्री तैयार होकर मिनी बस

में बैठे। हम सब सातों लोग भी बैठ गए। चालक के पीछे बगलवाली दरवाजे के पास खिड़की के समीप बाईं ओर की दो सीट मिल गई। जिससे आगे के मनमोहक दृश्य आराम से दृष्टिगत होते रहे। ठीक प्रात: ७ बजे बस चल पड़ी। सभी यात्रियों ने गंगाजी को प्रणाम किया। हम गंगाजी के समानांतर मार्ग से चल रहे थे कि दाईं ओर देहरादून मार्ग पर मुड़ते ही भोलेनाथ की विशाल प्रतिमा है, जो जलधारा के बीच शोभायमान है। शिवजी को प्रणाम कर आगे बढ़ रहे हैं। सड़क मार्ग के दोनों ओर हरे-भरे जंगल बड़े सुहावने और मनमोहक हैं। कहीं-कहीं आम के पेड़ भी, जिनमें आम के गदरारे फल लगे हैं। जैसे चाँदनी रात में कदंब के फूल चमकते हैं। भाँति-भाँति के वृक्ष, टेड़े-मेड़े रास्ते पर भागती लक्जरी बस, बहुत आनंद आ रहा है। ढाबे, चाय-नाश्ते की दूकान, सभी कुछ रास्ते में उपलब्ध है। हम लोग दोपहर को एक छोटे से भोजनालय पर रुके। वहाँ स्वादिष्ट भोजन किया और मार्ग के लिए पानी की बोतलें भरने लगे थे तो गाइड ने बताया कि आगे से स्वच्छ पानी भर लेना। दोपहर के बाद एक पहाड़ी के पास ड्राइवर ने बस रोक दी कि पानी पी लें। वहाँ पहुँचकर बहुत आश्चर्य हुआ, बहुत से यात्री तो खुशी से नाचने लगे। इतना ठंडा स्वच्छ जल कभी देखा ही नहीं था। पहाड़ में एक पाइप लगा देने से अविरल धारा में बह रहा है। थोड़ा रुककर आगे प्रस्थान किया। रास्ते में कई प्रकार के वृक्ष और गुलमोहर फूल रहे हैं। रंग-बिरंगे, नीले, नारंगी, लाल, पीले फूलों से पेड़ लदे हैं। यमनोत्तरी के किनारे हनुमान चट्टी (२१५ किलोमीटर) पर रात्रि विश्राम किया।

पत्नी के साथ लेखक केदारनाथ धाम में

२० मई को प्रात: ७ बजे सभी यात्री तैयार हैं और बस को यहीं छोड़ आगे बढ़ रहे हैं। यमनोत्तरी की ओर ७ कि.मी. का रास्ता छोटी गाड़ी से तय करना पड़ता है। जब जानकी चट्टी तक पहुँच जाते हैं तो यहाँ से ७ कि.मी. ऊपर पर्वत के सँकरे रास्ते से ही पैदल चढ़ना पड़ता है। जो लोग पैदल नहीं चल पाते हैं या चढ़ाई चढ़ने में असमर्थ होते हैं, उनके लिए घोड़े, डोली तथा पिट्ठू आदि साधन हैं। घोड़े का किराया ३५०-४००, पिट्ठू का लगभग ४००-५०० एवं डोली का १६००-१७०० रुपए तक तय होने के अनुसार लगता है। इसके लिए यह सावधानी बरतनी चाहिए कि ऊपर ले जानेवाले घोड़े, डोली, पालकी से संबंधी व्यक्ति का स्थानीय जनपद के द्वारा प्रमाणित परिचय-पत्र उनके पास होता है, यात्रियों को जाने के पहले यह कार्ड अपने पास या अपने सहयात्री के पास अवश्य रखवा लेना चाहिए, जो यात्रा पूरी होने पर संबंधित व्यक्ति को वापस कर दिया जाता है। रास्ते में बहुत ही ऊँचे, विशाल पर्वत हैं। पर्वतों के किनारों से ऊपर कुंड तक पहुँचने का मार्ग है, जिसके बगल से यमनोत्तरी की धारा बहती है। यमनोत्तरी सूर्य की पुत्री, यमराज की बहन हैं। यमनोत्तरी की ऊँचाई समुद्र तल से ३१६५ मीटर है। दिन में मौसम सुहावना लेकिन अपराह्न दो बजे से बूँदाबाँदी, कभी-कभी अधिक वर्षा भी होने लगती है। रात्रि में बहुत बर्फ गिरती है, यहाँ ठहरने के लिए धर्मशाला इत्यादि की अच्छी व्यवस्था है। यमनोत्तरी की साँवली-सलोनी, स्वच्छ जलधारा इतने वेग से बहती है, जिसको देखकर साक्षात् देवी शक्ति की अनुभूति होती है। वास्तव में ऐसा लगता है कि महाशक्ति के रूप में यह जलधारा देवी माँ का अंश है। संपूर्ण मार्ग में एक तरफ यमनोत्तरी का किनारा तो दूसरी ओर संकीर्ण पहाड़ी मार्ग है।

यहाँ पहाड़ों के ऊपर बस्तियाँ हैं। जीवकोपार्जन के लिए आम के बगीचे, पहाड़ी ढलानों पर छोटे-छोटे खेत बनाकर कृषि करते हैं। मई में गेहूँ की फसल पककर कटने को तैयार है तथा कुछ कट रही है एवं दूसरी नई गेहूँ की फसल बोई भी जा रही है। आलू वगैरह की खेती भी यहाँ की जाती है। पहाड़ों के ऊपर से झरने बहते हैं, झरने के पानी से ही लोग पीने का तथा बाकी निस्तार का काम चलाते हैं। किंतु यह स्थिति हनुमान चट्टी के पूर्व है। हनुमान चट्टी से जानकी चट्टी और वहाँ से आगे का रास्ता तथा पहाड़ बर्फीले हो गए हैं, जो अधिकांशत: बर्फ से ढके रहते हैं। पर्वत के ऊपर ही यमनोत्तरीजी का मंदिर तथा गरम पानी का कुंड है। इस कुंड में लोग स्नान कर थकान मिटाते हैं और बहुत ही सुख का अनुभव करते हैं। इसका तापमान लगभग १८५ फॉरनेहाइट रहता है; यात्री लोग इस कुंड में चावल पकाकर देवी को अर्पित करते हैं। यहाँ दर्शनीय स्थल सूर्यकुंड, दिव्यशिला तथा इसके पूर्व लाखा मंडल का शिवलिंग मंदिर है, जहाँ कौरवों ने लाक्षागृह का निर्माण पांडवों को जलाने के लिए कराया था। स्नान-दर्शन आदि करने के पश्चात् बहुत से यात्री वहीं ऊपर धर्मशाला में रुक जाते हैं तथा अधिकांश वापस हनुमान चट्टी आकर विश्राम करते हैं, जहाँ पर आवास एवं भोजन की अच्छी व्यवस्था है।

तीसरे दिवस माँ यमनोत्तरी को प्रणाम कर प्रात: ६ बजे से तैयार होकर बस में बैठ गए और पापनाशिनी पवित्र गंगाजी के उद्गम की दिशा में चल दिए। सर्पाकार लहराता संकरा सड़क मार्ग, ऊँचे-नीचे पहाड़ों के किनारे जहाँ हजारों मीटर ऊँचे पर्वत और नीचे सैकड़ों मीटर गहराई में तीव्र गति से बहती जलराशि, हरे-भरे वृक्ष, आधे बर्फ से ढके हुए, ऐसा अनुपम दृश्य, जहाँ मनुष्य सांसारिक मायाजाल से विरक्त स्वर्गानंद की अनुभूति करता है। यमनोत्तरी से गंगाजी मंदिर की दूरी मात्र २०७ किलोमीटर है, किंतु इस यात्रा में स्नान, भोजन आदि के लिए अल्प विराम देते हुए संपूर्ण दिवस लग जाता है। औसत २०-२५ किलोमीटर से अधिक नहीं चल पाते, संकरे ऊँचे-नीचे दुर्गम मार्ग हैं। बड़कोट के पास तिराहा धरासु से गंगाजी का साथ मंदिर एवं गौमुख तक निरंतर चलता है। एक किनारे गंगाजी दूसरी ओर पहाड़, बीच में बहुत ही संकीर्ण मार्ग है। जहाँ से दो वाहन आसानी से क्रॉस नहीं हो पाते और दूसरी ओर २०००-२५०० मीटर की गहराई है। पहाड़ों पर घेरकर रोड बने हैं। इसी रास्ते से गंगनानी पहुँचते हैं। यह स्थान लगभग २५०० मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। यहाँ पर

गरम पानी का कुंड है, मंदिर जाने के पूर्व यात्री यहाँ पर स्नान करते हैं। यह प्रकृति की अद्‌भुत लीला है, जहाँ एक ओर खौलता हुआ जल का स्रोत है, वहीं दूसरा स्रोत बर्फ के समान ठंडे पानी का है।

यहाँ से करीब ५५ कि.मी. आगे जाने के पश्चात् भागीरथी के दाएँ तट पर गंगादेवी का मंदिर है। हिमालय की पर्वत-श्रृंखलाओं में गंगामाता का उद्‌गम है। शिवपुराण के आधार पर स्वर्ग की पुत्री गंगा देवी जल स्वरूप नदी का रूप लेकर राजा भगीरथ के पूर्वजों को पाप से मुक्त करने के लिए घोर तपस्या कर भगीरथ के द्वारा पृथ्वी पर लाया गया। शिवजी ने गंगा देवी का वेग कम करने के लिए अपनी जटाओं में धारण किया। इस स्थल को भागीरथी के नाम से जाना जाता है। गंगा देवी का मंदिर उद्‌गम स्थान से १९ कि.मी. पूर्व में ही निर्मित है, जिसकी ऊँचाई समुद्र तल से ३१४० मीटर है। जहाँ से गंगाजी का उद्‌गम है, उस स्थान को 'गौमुख' कहा जाता है। हनुमान चट्‌टी से गंगोत्तरी की दूरी सड़क मार्ग के द्वारा २०७ कि.मी. है। यह मंदिर १८वीं शताब्दी में गोरखा कमांडर अमरसिंह थापा द्वारा बनवाया गया था, ऐसा बताया जाता है। मंदिर में गौमुख से निकलती बर्फ पिघलकर धीमी गति से बहती हुई शिलाखंडों के साथ हल्की, भूरी, सुनहरी रंग की पडूली जलधारा देखकर साक्षात् देवी माँ के रूप और शक्ति का आभास होता है।

गंगोत्तरी मंदिर का विहंगम दृश्य

गौमुख तक पैदल अथवा खच्चरों से जाते हैं, यह मार्ग बहुत ही कठिन और दुर्गम है। सामान्यत: यात्री मंदिर से ही पूजा आदि करके वापस लौट आते हैं; गौमुख तक बहुत कम लोग जाने का साहस जुटा पाते हैं। वैसे तो गौमुख से आगे ही तपोवन, नंदनवन लगभग २५ कि.मी. दूरी पर हैं, जहाँ पर हमारे ऋषि-मुनियों ने समाधि लगाकर तपस्याएँ कीं, किंतु वर्तमान समय में उस स्थान तक पहुँचना और दर्शन करना भी एक अलौकिक अनुभूति है। यहाँ पर जलमग्न शिवलिंग, केदार ताल, नंदनवन, तपोवन, गौमुख, भैरोंघाटी, हरसिल, गंगनानी, मनेरी इत्यादि बहुत ही सुंदर स्थान हैं। इसके अलावा यदि कोई अधिक समय तक यात्रा करना चाहे तो नचिकेता ताल, डोंडी ताल, दयारा बुग्याल, टेहरी इत्यादि स्थान हैं, किंतु सामान्यत: यात्री गंगा माँ के मंदिर में अर्चना कर सड़क मार्ग से वापस होकर उत्तरकाशी में विश्राम करते हैं अथवा गंगोत्तरी मंदिर पर ही रुक जाते हैं; क्योंकि छोटी-बड़ी सभी गाड़ियाँ मंदिर तक सुगमता से पहुँच जाती हैं। यहीं से गंगोत्तरी का जल किसी बरतन अर्थात् गंगाजली में भर लेना चाहिए, क्योंकि यही गंगाजल प्रसिद्ध रामेश्वरम् ज्योतिर्लिंग में शंकर भोले की प्रतिमा पर अर्पित किया जाता है, जिसकी स्थापना स्वयं श्रीरामजी के द्वारा त्रेता युग में की गई थी।

चौथा पड़ाव २२ मई को था; पवित्र पापनाशिनी गंगामाई के स्वर्णमयी रंग के पडूले, भूरे रंग की तीव्रगामी जलधारा में स्नान कर मंदिर में दर्शन-पूजन कर गंगाजली में गंगाजल विधि-विधान से पूजन कर भर लिया। गंगाजी को प्रणाम करके दोपहर १२ बजे सभी लोग यात्री बस में सवार हो उत्तरकाशी के लिए गंगाजी के किनारे से संकरी सड़क पर चल रहे हैं। दूसरी ओर गगनचुंबी पहाड़ और हरे-भरे जंगल हैं। अपराह्न से थोड़ी वर्षा प्रारंभ हो गई है। सड़क पर आगे गाड़ियों का जाम लगा है। पता चला कि पहाड़ों से मिट्‌टी फिसल रही है। मिट्‌टी के साथ ही बड़े-बड़े पत्थर नीचे गिर रहे हैं। रोड साफ करनेवाले कर्मचारियों ने उन्हें हटाया और वहाँ लगभग दो घंटे रुकने के पश्चात् आगे चल दिए। यात्रा का आनंद लेते हुए १०० कि.मी. चलकर उत्तरकाशी में दर्शन-पूजन कर रात्रि विश्राम किया।

२३ मई को पाँचवें दिन उत्तरकाशी में स्नान-ध्यान, पूजा-अर्चन, दर्शन कर ठीक ७ बजे सभी लोग तैयार होकर बस में आ चुके हैं। फुहार पड़ रही है, रास्ता लंबा है, इसलिए पहुँचने की शीघ्रता है। मार्ग बहुत सुहावना है। बीच-बीच में बादलों से झाँकते सूर्यदेव अपनी किरणों से बर्फीले पहाड़ों पर चमक बिखेर देते हैं। पहाड़ों के ऊपर और बीच के समतल स्थानों पर बस्तियाँ बहुत ही आकर्षक लग रही हैं। यहाँ के स्त्री-पुरुष गठीले बदन के, गौर वर्ण, सुंदर और परिश्रमी होते हैं। यहाँ की महिलाएँ पशुओं को घास, पेड़ों के पत्ते और स्वयं के लिए खाद्य सामग्री अपनी पीठ पर लादकर ले जाती हैं। पीठ पर बाँस की डलिया लगाए रहती हैं। इसी में रखकर बाजार से खाद्य सामग्री तथा अन्य सामान ले जाती हैं।

उत्तरकाशी से टेहरी के मार्ग से होकर दुर्गम पहाड़ियों की ऊँचाइयों वाले पहाड़ी रास्तों से होकर सड़क मार्ग से जाते हैं। टेहरी में बहुत ही ऊँचे पहाड़ हैं, जो पास-पास सटे हैं, इन्हीं दो पहाड़ों को बाँधकर टेहरी बाँध बनाया जा रहा है, उसमें अथाह जलराशि एकत्र होगी। टेहरी से तिलवारा होकर गौरीकुंड पहुँचते हैं, इस मार्ग में जो पहाड़ों की श्रृंखलाएँ हैं, उनमें पत्थरों की आकृति गोलाकार है। छोटे पत्थर, बड़े आकार के पत्थर सभी सालिग्राम की तरह हैं। ये करोड़ों वर्ष पुराने पहाड़ हैं, यहाँ आज भी खुदाई में गोलाकर पत्थर ही निकलते हैं तथा जगह-जगह से पानी के झरने। यात्री केदारनाथ पहुँचने के पहले गौरीकुंड पहुँचते हैं, रात को वहीं विश्राम किया जाता है। गौरीकुंड में स्नान करने के लिए गरम जल का कुंड है। यात्री इसी में डुबकी लगाते हैं। यहाँ पर कुंड के समीप ही गौरी देवी का मंदिर है, इसी मंदिर के पास से कुंड में गरम जलधारा बहती है। इस कुंड में स्नान करने से शरीर की थकान, रोग, चर्मरोग इत्यादि दोष से मुक्ति पा लेते हैं। रास्ते में भोजन करने के लिए अल्प विश्राम कर, पहाड़ों से झरनों का निर्मल जल पीते हुए, घुमावदार संकरे मार्गों से चलकर २३० कि.मी. की दूरी पूर्ण कर गौरी कुंड आ पहुँचे। शाम हो रही है। यहाँ के नियमानुसार शाम ६ बजे के बाद आगे वाहन नहीं चलाए जाते हैं। जहाँ शाम हो गई, वहीं रात्रि विश्राम करना पड़ता है। हम लोग गौरी कुंड पहुँच चुके हैं। पहाड़ के नीचे बस्ती है। छोटा सा बाजार भी है। ठहरने के लिए होटल, धर्मशालाएँ

हैं। हम लोग एक अच्छे से होटल में रुक गए। कुछ लोग धर्मशाला में ठहर गए।

२४ मई को छठे दिन प्रात: कुंड में स्नान कर १४ कि.मी. पहाड़ पर चढ़ाई की यात्रा मंदिर तक पहुँचने के लिए करनी है। गौरी कुंड से यह यात्रा पैदल, पिट्ठू, पालकी, खच्चर आदि से यात्रा की जाती है। यहाँ मेरी पत्नी श्रीमती सुधा पालकी में बैठी और उसी से वापस आईं और मैं खच्चर पर सवार हुआ। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि एक व्यक्ति ४-६ खच्चर रखता है और सभी पर सवारी बैठाकर ले जाता है। खच्चर इतने प्रशिक्षित होते हैं कि अपनी सधी हुई चाल से दुर्गम रास्तों पर पाँव जमाकर चलते रहते हैं। सबसे कठिन वापसी में उतरते हुए लगता है, जिस यात्री को अधिक भय लगता है तो खच्चर के साथ चलनेवाला उसकी लगाम पकड़कर चलता है। मंदिर खुलने का समय प्रात: ७ बजे से अपराह्न १ बजे तक है, लेकिन दर्शनार्थियों की अधिक संख्या में पहुँच जाने पर शाम ४ बजे तक पट खुले रहते हैं। श्रीकेदारनाथ भगवान् शिव के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक हैं। यह तीर्थ मंदाकिनी नदी के किनारे पर समुद्र तल से ३५८९ मी. की ऊँचाई पर स्थित है।

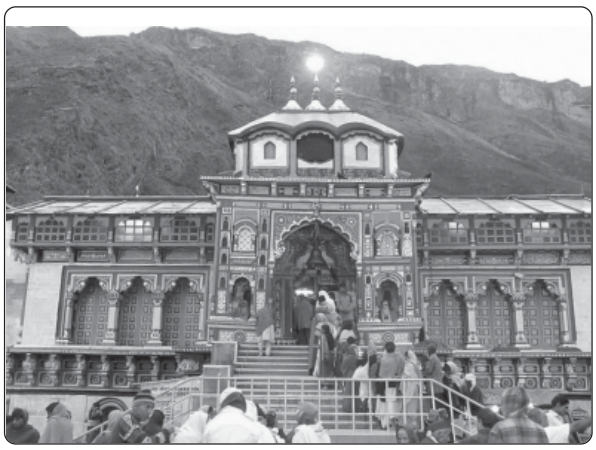

आस्था का केंद्र बदरीनाथ मंदिर

इस मंदिर का निर्माण आठवीं सदी में आदिशंकराचार्य द्वारा कराया गया था। केदारनाथ में हिमालय का नाम कैलाश पर्वत है, जिसमें अलग दो नाम प्रसिद्ध हैं, एक मेरु पर्वत तथा दूसरा सुमेरु पर्वत तथा तीसरा हनुमान टाप के नाम से जाना जाता है। इन पर्वतों के शिखर अधिकांश समय बर्फ से ढके रहते हैं। महाभारत के अनुसार भगवान् शिव ने तपस्या के लिए हिमालय पर भैंसे का रूप धारण किया था, ताकि उन्हें कोई पहचान न सके। पांडव वनवास के दौरान जब हिमालय पर गए तो भीम ने भगवान् शिव को पहचान लिया, यह बात शिवजी समझ गए और वहाँ से भागने लगे, तब भीम ने पीछे से उनके दोनों पैर पकड़ लिये व स्तुति की, शिवजी ने प्रसन्न होकर उन्हें दर्शन दिए। शरीर का पृष्ठ भाग वहीं रह गया जो कि केदारनाथ के रूप में शोभायमान है तथा भैंसे का अग्रभाग मुख काठमांडू (नेपाल) के मंदिर में प्रतिष्ठित हुआ, जो कि पशुपतिनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। केदारनाथ पंचकेदार हैं, जिनकी पूजा भिन्न-भिन्न प्रकार से की जाती है, जैसे केदारनाथ में पृष्ठभाग, तुंगनाथ में शिवलिंग तथा बाहु, रुद्रनाथ में मुख, मदमहेश्वर में नाभि तथा कलेश्वर में जटा के रूप में शिव अर्चना की जाती है।

केदारनाथ धाम में दर्शनीय स्थल हैं—केदारनाथ मंदिर, शंकराचार्य की समाधि, चोरावाड़ी, यह स्थान बहुत ही आकर्षक है। झील में तैरती हुई बर्फ बहुत सुहावनी लगती है। इसी झील मार्ग से युधिष्ठिर सशरीर स्वर्ग गए थे, ऐसी किंवदंती है। अन्य स्थान बासुकी ताल ६ कि.मी. ऊँचाई ४१३५ मीटर, सुंदर झील, ब्रह्म कमल यहीं पाया जाता है। सोनप्रयाग २० कि.मी., सोनगंगा और मंदाकिनी के संगम का सुंदर स्थान है। गुप्तकाशी ४९ कि.मी., यह स्थान अर्द्धनारीश्वर विश्वनाथ मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। ऊखीमठ ६० कि.मी, यह भगवान् शिव का सर्दियों का निवास स्थान है। अगस्त्य मुनि ७३ कि.मी., मंदाकिनी नदी के किनारे अगस्त्य ऋषि का मंदिर है, अब इस स्थान से यात्रियों की सुविधा के लिए हेलीकॉप्टर से मंदिर पहुँचने की व्यवस्था हो गई है, जिसमें पूजा का सभी सामान तथा वापसी की व्यवस्था रहती है।

रुद्रनाथ पूर्वजों के श्राद्ध तर्पण का स्थान है, कहते हैं कि मरणोपरांत मृत आत्माएँ यहीं से वैतरणी नदी को पार करती हैं, तब उन्हें दूसरे जीवन में प्रवेश मिलता है। इस मंदिर में भगवान् शिव की मुखाकृति की पूजा की जाती है। कल्पेश्वर वही स्थान है, जहाँ दुर्वासा ऋषि ने कल्प वृक्ष के नीचे घोर तपस्या की थी। ऋषि-मुनि व तपस्वी मंदिर के गर्भगृह में स्थापित चट्टान पर बैठकर आज भी तपस्या करते हैं। यह चट्टान शिवजी की जटा के रूप में पूजी जाती है। पंचकेदार दर्शन कर हमने रुद्रनाथ में पूर्वजों का श्राद्ध-तर्पण किया। कल्पेश्वर की शिला को स्पर्श कर भगवान् भोलेनाथ का चरण वंदन, ध्यान कर रात्रि विश्राम भी केदारधाम में ही किया।

सातवें दिन समुद्र तल से लगभग ३६०० मीटर की ऊँचाई पर भोलेनाथ केदारनाथ धाम का प्रात: दर्शन जीवन में अविस्मरणीय रहेगा। यहाँ पर पर्वतों की अधिक ऊँचाई और बर्फीली हवाओं के दबाव में साँस फूलती है, मुँह सूखता है, क्योंकि अधिक ऊँचाई होने पर यहाँ ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, इसलिए यात्रियों को नेक सलाह है कि गरम पानी पिएँ तथा सूँघने के लिए कपूर साथ में ले जाएँ, गरम पानी औषधि का काम करता है। यहाँ पंडों से सावधान रहें, इनके जाल में न फँसें। उत्तराखंड के चारधाम में सबसे अधिक केदारनाथ धाम के पंडा श्रद्धालुओं को ठगते हैं। केदारधाम से वापस गौरीकुंड आ रहे थे कि बाईं ओर करीब एक हजार मीटर से गिरता हुआ झरना देख मन वहीं ठहर गया। रात्रि विश्राम गौरी कुंड में किया गया।

आठवें दिन गौरी कुंड से बदरीनाथ धाम की दूरी छोटे, संकरे, घुमाव और चढ़ाईदार रास्ते से शुरू की, यह दूरी २२७ कि.मी. है। इसलिए गौरी कुंड से जोशी मठ तक यात्रा कर विश्राम करते हैं। यहाँ से जोशी मठ के लिए प्रात: ७ बजे प्रस्थान किया। बदरीनाथ धाम पहुँचने के लिए केदारनाथ से वापस रुद्रप्रयाग आना पड़ता है, रुद्रप्रयाग से गौचर कर्णप्रयाग, नंदप्रयाग, चमोली, पीपलकोठी होकर जोशीमठ तक पहुँचते हैं। जोशीमठ में रात को विश्राम करते हैं। दीपावली के बाद से यहीं भगवान बदरीनाथ निवास करते हैं। कहते हैं कि ६ महीने बदरीनाथ भगवान् की पूजा-अर्चना मनुष्य

करते हैं और ६ महीना देवता। जब मंदिर अक्षय तृतीया को खोला जाता है, उस समय मंदिर की ज्योति जलती हुई मिलती है, जो इसका साक्षात् प्रमाण है। जोशीमठ से बदरीनाथ भगवान् तक बहुत ही संकरा वनवे है। जब यात्रियों का एक काफिला निकल जाता है तब दूसरे को आने का रास्ता दिया जाता है। जोशीमठ से प्रस्थान करके ८ कि.मी. की दूरी प्रात: मंदिर पहुँचने के लिए पूरी की जाती है। इसके पूर्व की यात्रा कर्णप्रयाग से जोशीमठ तक दुर्गम पहाड़ों से होकर है।

कर्णप्रयाग से आगे पहाड़ों पर बहुत ऊँचाई में बस्ती बसी है और लोग छोटी-छोटी क्यारियाँ में मिट्टी डालकर कृषि करते हैं, जिसमें फसलें पक रही हैं। पहाड़ों को ऐसे तराशा गया है कि मैंने एक ऊँचे पहाड़ पर सात घेरे लगाकर ऊपर ऊँचाई तक पहुँचने के लिए इसकी गिनती की है। पहाड़ को सात बार सड़क मार्ग से घेरा गया है। रुद्रप्रयाग से पीपलकोठी तक पहाड़ों पर पानी नहीं है, लोग अलकनंदा का जल पीते हैं। पीपलकोठी से आगे पहाड़ों से झरने फूटने लगते हैं। वहाँ स्वजल ग्राम के बोर्ड लगे हैं अर्थात् गाँव में पानी पीने की जल व्यवस्था प्रकृति के द्वारा ही उपलब्ध है। पहाड़ों पर बर्फ जमी है, पर्वत बहुत ऊँचे हैं, गेहूँ की फसल तैयार होते हुए वहाँ देखी है। संपूर्ण मार्ग में एक किनारे पहाड़ दूसरी ओर अत्यंत गहरी तीव्र गति से बहती हुई अलकनंदा का साथ है। आज रात्रि विश्राम जोशीमठ में किया गया।

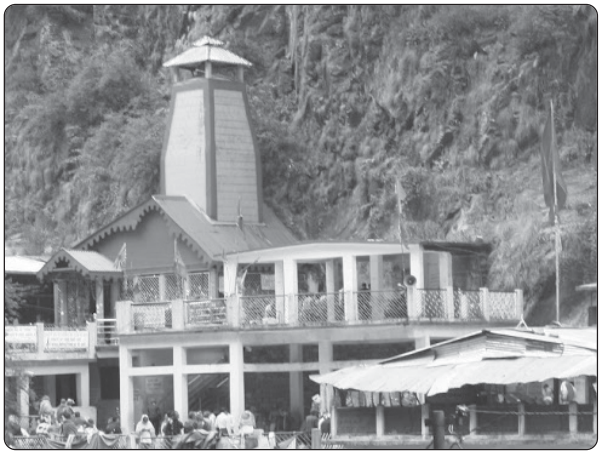

प्राकृतिक वैभव के बीच यमुनोत्तरी मंदिर

आज यात्रा का नौवाँ दिन है। साक्षात् विष्णु के धाम सत्ययुग का सबसे पावन धाम उत्तरांचल की देवभूमि में बदरीविशाल का मंदिर अलकनंदा के दाएँ तट नीलकंठ पर्वतमाला की पृष्ठभूमि पर स्थित है। ऐसा सुंदर आध्यात्मिक साक्षात् विष्णुधाम इस संसार में कहीं नहीं है। यह अद्वितीय है, महान् है। कहते हैं कि प्राचीन समय में यहाँ पर बदरीफल (बेर) के पेड़ों का घना वन था। समुद्र तल से १०३०० फुट पर स्थित है। मंदिर के दोनों ओर नर-नारायण पर्वत की ऊँची शृंखलाएँ हैं। मई माह के प्रथम सप्ताह में अक्षय तृतीया के दिन तक बदरीनाथ मंदिर के पट खुलते हैं।

जोशीमठ से बदरीनाथ धाम के रास्ते पहाड़ों पर ऐसे सुंदर रंग-बिरंगे फूल खिले हैं, जो कालीन सा बिछा हुआ प्रतीत होता है। इसी मार्ग से भगवान् विष्णु के धाम पहुँचते हैं। मंदिर की ऊँचाई लगभग १५ मीटर है तथा यह तीन भागों में विभाजित है—गर्भगृह, दर्शन मंडप और सभा मंडप। गर्भगृह में भगवान् विष्णु की साँवली-सलोनी प्रतिमा विराजमान है। इसी मंदिर के नीचे तप्तकुंड अलकनंदा नदी के तट पर स्थित है, जिसमें गरम पानी आता है, इसी कुंड में स्नान करने के पश्चात् भगवान् के दर्शन करते हैं। मौसम इतना सुहावना होता है कि नर-नारायण पर्वत की शृंखलाएँ बर्फ से आच्छादित गगनचुंबी शिखर आसमान को छूते हुए दृष्टिगत होते हैं। बादलों की घटाओं में शिखर की ऊँचाई विलीन हो जाती है। अधिकांश समय अपराह्न ३ बजे से वर्षा प्रारंभ हो जाती है और रात्रि में मौसम अत्यधिक ठंडा हो जाता है। मंदिर खुलने का समय प्रात: ७ बजे से दोपहर १ बजे तक, अधिक दर्शनार्थी होने पर मंदिर ३-४ बजे तक खुला रहता है। इसके पश्चात् प्रत्येक शाम को ६ बजे आरती होती है व ८ बजे शाम तक मंदिर खुला रहता है।

बदरीनाथ धाम में ठहरने के लिए बहुत ही अच्छी आवासीय सुविधाएँ उपलब्ध हैं, जिनमें अच्छे होटल, सामान्य होटल, धर्मशालाएँ हैं। यहाँ की जलवायु मई माह से ५ से ० डिग्री तक पहुँच जाती है। जून, जुलाई, अगस्त, सितंबर तक यह १७-१८ डिग्री तक रहता है। नवंबर में दीपावली के पश्चात् यहाँ का तापमान ० डिग्री से नीचे पहुँच जाता है। वैसे तो यहाँ पर कम-से-कम २-३ दिन अवश्य रुकना चाहिए, क्योंकि प्रकृति का जो नजारा है, उसमें होनेवाले परिवर्तन सुबह-शाम नर-नारायण पर्वत की ओर निहारकर देखे जा सकते हैं तथा जो नजदीकी स्थान हैं, उनका भ्रमण किया जा सकता है, जैसे ब्रह्मकपाल, शेषनेत्र, चरण पादुका, नीलकंठ, मातामूर्ति मंदिर ३ कि.मी., अलकनंदा के दोनों तट पर बदरीनाथजी की माँ का मंदिर है। भाणागाँव ४ कि.मी. है। यह भारत-तिब्बत सीमा पर हिंदुस्तान का अंतिम गाँव है। इसमें अधिकांशत: मंगोलियन जाति के लोग रहते हैं। यहाँ व्यास गुफा, भीमकुंड, बसुधरा प्रपात जैसे दर्शनीय स्थल हैं। अब पुन: वापस मंदिर स्थल पर पहुँचते हैं, जहाँ पर बदरीनाथ मंदिर के समीप स्थित गरम कुंड से पहुँच मार्ग पुल के पास तिराहे पर जाते समय दाहिनी ओर रुद्राक्ष की मालाएँ उचित कीमत पर मिल जाती हैं। यह उत्तरांचल देवभूमि का साक्षात् बैकुंठ धाम है, जहाँ साधना, तपस्या, मन की शांति एवं पाप-मुक्ति करने के लिए अच्छा स्थान है।

दसवें दिन बदरीनाथ धाम में दर्शन, पूजन-अर्चन, वंदन कर सभी ने ७ बजे प्रात: तैयार होकर वापस हरिद्वार के लिए प्रस्थान किया। बदरीनाथ से हरिद्वार की दूरी २८० कि.मी. है। प्राकृतिक छटाओं का आनंद लेते हुए सूर्यास्त होने तक हरिद्वार आकर विश्राम किया और जो अन्य लोग साथ बस में गए थे, वे वहीं हरिद्वार से अपने गंतव्य को चले गए। अगले दिवस गंगा माँ के चरणों में नमन कर हम लोग रेलवे से वापसी यात्रा करते हुए दिल्ली, झाँसी होकर सकुशल पृथ्वीपुर आ गए। देवभूमि हिंदुस्तान का स्वर्ग है। चारधाम की यात्रा जीवन में एक बार अवश्य करनी चाहिए।

आनंद भवन, मेनरोड पृथ्वीपुर
जिला-टीमकगढ़-४७२२३६ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२४३४५३५५

बाल-कहानी

वसंत-पंचमी

● शकुंतला शर्मा

सुपरिचित लेखिका। काव्य की छह पुस्तकें छत्तीसगढ़ी में तथा छह हिंदी में तथा अनुवाद की सात पुस्तकें प्रकाशित। छोटे-बड़े डेढ़ दर्जन पुरस्कार-सम्मान प्राप्त। संप्रति 'सरयू-द्विज' का संपादन।

'तेरी माँ बरतन धोती है, तू भी वही काम कर, यहाँ स्कूल में क्या करने आई है? पढ़-लिखकर मास्टरनी बनेगी क्या?' विद्या फूट-फूटकर रोने लगी। टीचर की डाँट के डर से वह जोर-जोर से नहीं रो रही थी, पर आँख से आँसू लगातार बह रहे थे और विद्या अपराधिनी की तरह सिर झुकाकर खड़ी थी। थोड़ी देर में नाश्ते की छुट्टी हुई। सभी बच्चे अपना-अपना टिफिन खोलकर खाने लगे, पर विद्या एक कोने में चुपचाप सिर झुकाकर बैठी रही। शाम को जब छुट्टी हुई तो वह अपना बस्ता उठाकर घर की ओर जाने लगी, तभी उसे रास्ते में उसी की कक्षा में पढनेवाली सहेली माया मिली। उसने विद्या से पूछा, 'तेरा घर कहाँ पर है?' विद्या ने उसे बताया कि वह पास की बस्ती में ही रहती है। माया ने कहा, 'मैं भी तो वहीं रहती हूँ, पर मैंने तुम्हें कभी नहीं देखा', तब विद्या ने उसे बताया कि वह अपनी नानी के साथ गाँव में रहती थी और अभी पढ़ने के लिए माँ के पास आ गई है। दोनों बच्चियों में दोस्ती हो गई और दोनों साथ-साथ रहने लगीं।

विद्या अभी तक समझ नहीं पाई थी कि टीचर ने उसे क्यों डाँटा था, पर जब माया ने बताया कि टीचर ने तुम्हें इसलिए डाँटा था कि तुम्हें न तो वर्णमाला लिखना आता है और न ही तुम गिनती जानती हो।

'पर टीचर ने कभी सिखाया ही नहीं तो मुझे आएगा कैसे? मैं सीखने के लिए ही तो स्कूल जाती हूँ?'

'ऐसा नहीं होता विद्या! हमें घर से सबकुछ सीखकर स्कूल जाना पड़ता है, नहीं तो टीचर इसी तरह अपमानित करते हैं। वे केवल मुँह से बोलते हैं, हाथ पकड़कर नहीं सिखाते।'

'पर मेरी माँ तो कहती है कि टीचर भगवान की तरह होते हैं। वे सभी बच्चों को अपने बच्चे की तरह समझते हैं और सबको बराबर प्यार करते हैं।'

'अच्छा देख, तेरा नाम विद्या है न! तो तू जरूर पढ़ेगी। चल, आज वर्णमाला से मैं तेरा परिचय करवाती हूँ।'

बस फिर क्या था, दोनों सहेलियाँ साथ-साथ पढ़ने लगीं और विद्या ने थोड़े ही दिनों में वर्णमाला तथा सौ तक गिनती सीख ली। टीचर का व्यवहार भी धीरे-धीरे बदलने लगा। रूखी बानी में मिठास आ गई।

आज वसंत-पंचमी है। विद्या के स्कूल में सरस्वती-पूजा हो रही है। बड़े गुरुजी के साथ-साथ सभी बच्चों ने सरस्वती माता की वंदना की, फिर बड़े गुरुजी के संग-संग सभी बच्चों ने गाया—

'जय सरस्वती की, जय सरस्वती
तोर माथे धरवँ बेल की पत्ती।
माँ तुम पहनो गज-मुक्ताहार
हमको दे दो विद्या-भंडार॥'

विद्या गाती रही, पर आँखों से झर-झर आँसू बहते रहे। बड़े गुरुजी ने देख लिया। उन्होंने विद्या को अपने पास बुलाया और फिर उससे पूछा, 'बेटा! तुम क्यों रो रही हो?'

विद्या ने बताया, 'गुरुजी! मेरी दो छोटी बहने हैं और मेरे पिताजी हम लोगों को छोड़कर कहीं चले गए हैं। हमारे पास न रहने की जगह है, न ही खाने-पीने के लिए कुछ है। मेरी माँ दो घरों में बरतन धोती है, पर उससे गुजारा नहीं हो रहा है। आप मुझे कुछ काम दिलवा दीजिए, मैं पूरे स्कूल में झाड़ू-पोंछा कर सकती हूँ।' कहते-कहते वह फूट-फूटकर रोने लगी। गुरुजी की आँखें भर आईं, उन्होंने विद्या के सिर पर हाथ रखकर कहा, 'आज से तुम मेरी बेटी हो! तुम्हारी किताबें, स्कूल-ड्रेस तुम्हें मैं दूँगा और तुम्हारी माँ को काम भी मिल जाएगा। तुम चिंता मत करो, तुम्हें काम करने की जरूरत नहीं है, अभी तुम्हें पढ़ना है और पढ़-लिखकर कुछ बनना है।'

बड़े गुरुजी विद्या और माया के साथ उसके घर गए। एक छोटे से सीलन भरे कमरे में उसकी दोनों बहनें फटी हुई चादर पर खेल रही थीं और उसकी माँ काम करने गई थी। बड़े गुरुजी बाहर खड़े रहे और जब उसकी माँ काम से लौटकर आई तो उन्होंने कहा, 'बच्चों को लेकर मेरे साथ चलिए, स्कूल में चौकीदार का कमरा खाली है, अपने बच्चों के साथ वहाँ रहिए। चपरासी का काम तुम्हें मिल जाएगा और तुम्हारा गुजारा हो जाएगा।'

बच्चियाँ खुश हो गईं, पर उनकी माँ लक्ष्मी के आँसू नहीं थम रहे थे, उसने बड़े गुरुजी के दोनों पैरों को पकड़कर प्रणाम किया और बोली, 'बड़े गुरुजी! आप मेरे लिए भगवान् की तरह हैं, आपने मेरी बच्चियों को नई जिंदगी दी है। लक्ष्मी अपनी छोटी बेटी रंभा को गोद में लेकर चल रही

थी और विद्या तथा सरस्वती बड़े गुरुजी की उँगली पकड़कर इस शान से चल रही थीं, जैसे उनको आसमान मिल गया हो।

विद्या ने आज खेल-खेल में सरस्वती माता की मिट्टी की मूरत बनाई है और उसे अपने सीने से लगाकर अपने नए घर में ले जा रही है। रास्ते भर वह सरस्वती माई से बात करती रही, 'हे सरस्वती माता! तुम मुझे विद्या का भंडार देना। वाणी का वरदान देना। मुझे अपने समान बनाना सरस्वती माई! हमारी रक्षा करना। मुझे इतनी विद्या देना कि हम इस संसार में सिर उठाकर जी सकें।'

हम सब काम करते-करते थक जाते हैं और थक कर सो जाते हैं। एक-एक दिन करते-करते कई बरस गुजर जाते हैं। कालचक्र कभी नहीं थमता, वह निरंतर चलता रहता है। बेटियाँ कब बड़ी हो जाती हैं, पता ही नहीं चलता। लक्ष्मी बड़ी हो गई है। वह आई.पी.एस. अफसर बन चुकी है और उसकी नियुक्ति मुंबई ठाणे में हो गई है। विद्या का घर हँस रहा है बहनें खिलखिला रही हैं और माँ की आँखें मुसकरा रही हैं। सरस्वती, मेडिकल कॉलेज में पढ़ रही है। रंभा आई.आई.टी. की तैयारी कर रही है।

अब विद्या को घर की याद आ रही है, वह अपनी खुशियों को अपनों से बाँटना चाहती है। उसे माँ की बहनों की और बड़े गुरुजी की याद आ रही है, पर आज सड़क-दुर्घटना में एक आदमी बुरी तरह घायल हो गया है, उसके दोनों पाँव टूट गए हैं, उससे मिलने जा रही है, वैसे तो इंस्पेक्टर उसका बयान लेकर आ गए हैं, पर विद्या स्वयं उससे मिलना चाहती है। उसका नाम प्रभाकर है। विद्या उससे मिली और उसने उससे पूछा, 'कहाँ रहते हो?'

'फुटपाथ पर।'

'कहाँ से आए हो?'

'भवतरा से।'

अरे! यह तो मेरा ही गाँव है।

'घर में और कौन-कौन हैं?'

'मैं अपनी पत्नी और तीन बेटियों को छोड़कर मुंबई आ गया था, पता नहीं वे कहाँ हैं और किस हाल में हैं?'

उसकी आँखें भर आईं, वह रोने लगा, अपने आपको कोसने लगा। उसने कहा, 'मेरी बेटी तुम्हारी उम्र की होगी, पर मैं बेटे की चाह में अपनी बेटियों को छोड़कर यहाँ भाग आया। क्या पता वे जिंदा हैं भी या नहीं?'

वह फूट-फूटकर रोने लगा।

अब विद्या पहचान चुकी थी कि वह उसका पिता है, पर उसने बताया नहीं। उसके पैरों का ऑपरेशन करवाया। जयपुरी पैर लगा दिए गए और प्रभाकर जब चलने-फिरने लायक हो गया तो विद्या ने उससे पूछा, 'क्या आप अपने गाँव जाना चाहेंगे?' उसने रोते हुए कहा, 'हाँ, जाऊँगा।'

आज वसंत-पंचमी है। विद्या प्रभाकर को लेकर माँ के पास पहुँचनेवाली है, माँ ने विद्या के सम्मान में पूरे गाँव को बुलाया है, बड़े गुरुजी नई धोती-कुरता पहनकर सोफे पर बैठे हुए हैं। वे सभी आगंतुकों का स्वागत कर रहे हैं, विद्या की माँ लक्ष्मी आरती का थाल सजाकर विद्या का इंतजार कर रही है। जैसे ही विद्या आई, उसकी दोनों बहनें उससे लिपट गईं। लक्ष्मी ने विद्या की आरती उतारी और विद्या ने माँ के चरण छुए, उसने बड़े गुरुजी को प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद लिया। प्रभाकर असहज होकर इधर-उधर देख रहा था, तभी विद्या ने कहा, 'माँ! यहाँ आओ, देखो तो ये कौन हैं?'

लक्ष्मी ने प्रभाकर को ध्यान से देखा, 'अरे! वही आँखें, वही चेहरा!' उसके होंठों ने स्वर फूटा, 'प्रभाकर!'

'माँ! तुम इन्हें जानती हो क्या?'

'मैं तुम्हारा अपराधी हूँ, लक्ष्मी!' कहकर प्रभाकर हाथ जोड़कर बोला, 'हो सके तो मुझे माफ कर देना, मैं तुम्हारे लायक नहीं हूँ।' वह रोने लगा, नारी तो धरती है, लक्ष्मी ने उसका हाथ पकड़कर उसे बिठाया, अपने बच्चों से मिलवाया और फिर सब गाँववालों के साथ माता सरस्वती की पूजा की। माता सरस्वती ने विद्या की प्रार्थना सुन ली थी।

२८८/७, मैत्री कुंज भिलाई-४९०००६ (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ९३०२८३००३०

मन कहता कुछ गीत लिखूँ...

कविता

● विजय रंजन

मन कहता कुछ गीत लिखूँ मैं,
गीत के नाम, अगीत के नाम।
जीवन का संगीत लिखूँ मैं,
हार के नाम या जीत के नाम।

दूर कहीं महुआ बन महके,
फिर पलाश के जंगल दहके।
रतनारे कजरारे नयना,
आज लगे कुछ बहके-बहके।
नयनों की अनुभूति लिखूँ मैं,
रीति के नाम, अरीति के नाम।

टूटे-जुड़े, जुड़े-टूटे से,
राह-ब-राह कहीं छूटे से।
अभिलाषा के कुवाँरे सपने,
मान-मनौवल में रूठे से।
सपनों से परतीति लिखूँ मैं,
प्रीति के नाम, प्रतीति के नाम।

सुख सब, बासी फूल हो गए,
नेह, गली की धूल हो गए।
बार-बार इतिहास चेताए,
रिश्ते बाँस बबूल हो गए।
रिश्तों को मनमीत लिखूँ मैं,
मीत के नाम, अतीत के नाम।

४/१४/४१ ए महताब बाग, अवधपुरी कॉलोनी, फेज-२
फैजाबाद-२२४००७ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०६४१५०५६४३८

मृग-तृष्णा

● राजेश सहाय

सवेरे-सवेरे ट्रेन स्टेशन पर आ लगी। मैं स्टेशन से बाहर आया तो सदा की भाँति राशिद अली मेरे इंतजार में खड़े थे। अपना कस्बा छोड़ जब मैं पढ़ाई के लिए दिल्ली आया था, तो हर छुट्टी में राशिद अली को स्टेशन पर मेरा इंतजार करता पाता था। मुझे बड़ा अटपटा लगता, पर मैं उन्हें कुछ कह नहीं पाता था। आज दस वर्षों के लंबे अंतराल के बाद भी वे मुझे लेने स्टेशन पर आएँगे, ऐसा मैंने सोचा भी नहीं था। दरअसल नौकरी में आने के बाद घर छूट सा गया था और फिर पिताजी के निधन के बाद तो मेरा गाँव आना-जाना लगभग समाप्त सा हो गया था। सच कहूँ तो नौकरी में आने के बाद से मैंने गाँव की ओर मुड़कर कभी देखा ही नहीं। सरकार का नौकर बन मैं इतना व्यस्त हो गया कि उन गलियों से मेरा नाता ही टूट गया, जहाँ की धूल-मिट्टी में लोटकर हम बड़े हुए थे। आज मुझे गाँव की इसी धूल-मिट्टी से भय सा होता है, कदाचित् मेरे बच्चों को संक्रमण न हो जाए या फिर मेरी पत्नी बीमार न पड़ जाए। मेरी पत्नी को तो गाँव से मानो सख्त नफरत है। सदा शहर में रहनेवाली और एक ऊँचे अधिकारी की बेटी होने के नाते यह स्वाभाविक भी था। मेरा बेटा क्षितिज पाँच वर्ष का हो रहा था और मेरी बेटी क्षिप्रा तीन वर्ष की। इधर मेरी पत्नी की तबीयत ठीक नहीं रहती थी। मेरा बेटा भी तंदरुस्त नहीं था और उसका निस्तेज चेहरा मेरी चिंता का सबब बना हुआ था। डॉक्टरों की राय में कदाचित् जलवायु परिवर्तन से मेरी पत्नी और बेटे के स्वास्थ्य में सुधार संभव था। पर जलवायु परिवर्तन के लिहाज से पहाड़ों पर जाना और महीने भर रहना हमारे बजट से बाहर था। जब माँ को यह बात पता चली तो उन्होंने गाँव आकर रहने का आग्रह किया, 'बेटा, पहाड़ों पर जाने से अच्छा है पठारों में बसे अपने पैतृक गाँव आ जाओ। ऐसे भी तुम लोग कई वर्षों से गाँव नहीं आए हो। यहाँ का प्रदूषण रहित वातावरण निश्चय ही बहू और क्षितिज के लिए स्वास्थ्यवर्धक सिद्ध होगा।'

जब मैंने डॉक्टर से सलाह की तो उन्होंने इसे बहुत ही अच्छा विकल्प मानते हुए गाँव जाकर रहने पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगा दी। डॉक्टर की सलाह पर ही सही, अंततः मैंने अपने पैतृक गाँव जाने का निश्चय किया, यह भी एक विडंबना ही थी, मानव स्वार्थवश किस कदर अंधा हो सकता है, मेरा गाँव जाना इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण था। जिस गाँव में मैंने पिछले दस वर्षों से कदम नहीं रखा था, वहाँ मैं पत्नी और बेटे के स्वास्थ्य लाभ की गरज से जाने को तैयार हो गया था, इसे

कई लेख, कहानी और यात्रा-संस्मरण आंचलिक पत्रिकाओं में प्रकाशित एवं आकाशवाणी जमशेदपुर से प्रसारित। कहानी विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस से 'विश्व हिंदी कहानी प्रतियोगिता २०१२' में पुरस्कृत। संप्रति भारत सरकार के कृषि मंत्रालय (कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग) में कार्यरत।

मेरा स्वार्थ ही कह सकते हैं। तथापि मैंने जाड़ा आने तक का इंतजार करना उचित समझा, क्योंकि गरमियों में तो बिना एयर कंडीशनर के गाँव में रहना पत्नी और बच्चों के लिए तो असंभव था। उनके लिए तो यह कल्पना से भी परे था कि गाँव में संभवतः उसे बिना बिजली अँधेरे में भी रहना पड़ सकता है। गाँव आने की एक और वजह भी थी। खैर, वो बाद में।

दस वर्षों के लंबे अंतराल के बाद भी राशिद अली को स्टेशन पर मेरा इंतजार करते देख मुझे लगा, मानो गाँव में समय थम सा गया है। इन दस वर्षों में जैसे कुछ भी नहीं बदला हो। गोरे-चिट्टे पठान राशिद अली की वही मुसकान, जो चेहरे पर लहराती सफेद दाढ़ी के बीच भी स्पष्ट दिखती थी और सर पर बँधा वही सफेद मुरेठा। बचपन में मैं उनके इस व्यक्तित्व का कायल था। वे ही मेरे 'काबुलीवाले', थे जिनके साथ मैं अपनी सारी बातें शेयर करता था। मैं उन्हें काकू अली कहकर पुकारा करता था। मेरे सिर्फ कहने भर की देर होती, काकू अली मुझे अपने रिक्शे पर पूरी गाँव की सैर कराते। इस मुक्त की सवारी की वजह से वे मेरे प्रिय थे। आज भी उनमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है, न पहनावे में और न ही व्यवहार में। यही वजह थी कि मुझे आज भी अपने काकू अली को पहचानने में कोई परेशानी नहीं हुई। चेहरे पर लहराती दाढ़ी तो वही थी, पर हाँ, चेहरा अब कांतिहीन हो चुका था। झुर्रियों ने अपना कमाल दिखा दिया था। हालाँकि इधर मैं स्थूल हो गया था। काकू अली ने मुझे तुरंत पहचान लिया था और स्टेशन से बाहर आते ही रिक्शा लेकर मेरे सामने हाजिर थे।

''काकू, क्या जरूरत थी सुबह-सुबह आने की? मैं खुद भी आ सकता था। तुम अभी भी मुझे बच्चा ही समझते हो, जबकि मैं दिल्ली जैसे शहर में नौकरी कर रहा हूँ।'' मैंने कहा।

''अरे बिटवा, इसमें परेशानी की कउनो बात नहीं है। ऐसे भी हम

भिंसरे (सुबह-सुबह) ही उठ जाते हैं। स्टेशन आने में कोइयो परेशानी नहीं है। कल ही माँजी को घर पहुँचाया तो उनसे पता चला कि तुम आनेवाले हो। इसलिए तुम्हें लेने चला आया।'' काकू ने आत्मीयता से कहा।

राशिद अली को यह रिक्शा कभी पिताजी ने ही दिलवाया था। राशिद अली के पास थोड़ी-बहुत जमीन थी किंतु यह उनके कुनबे के लिए नाकाफी थी। ऐसे भी पठारों में खेती कुछ माह का ही रोजगार है। बारिश अच्छी हुई तो धान की उपज हो जाती वरना वो भी मारी जाती। धान की एक फसल के बाद खेत यों ही बंजर पड़े रहते। टाड के खेत में धान सही-सलामत हो जाए, यही काफी है। साग-सब्जी उगा नहीं सकते थे, क्योंकि पटवन की कोई व्यवस्था नहीं थी। अलबत्ता कुछ मुरगियाँ और बकरियाँ उन्होंने जरूर पाल रखे थे, जिनकी देख-रेख उनकी बेगम और आधे दर्जन बच्चे करते थे। ऐसे में खाली बैठे राशिद अली जब रिक्शा चला अतिरिक्त आमदनी करने के गरज से पिताजी के पास आर्थिक मदद की उम्मीद से आए तो पिताजी ने उनकी तुरंत मदद कर रिक्शा दिलवा दिया था। रिक्शा के जितने रुपए पिताजी ने दिए थे, वो तो राशिद अली ने कब के चुका दिए, किंतु इसके बाद पिताजी के साथ उनके जो संबंध बने, वो उनकी मृत्यु के बाद भी ज्यों-की-त्यों बरकरार रहे, ऐसा स्टेशन पर उनको मेरा इंतजार करते देख मुझे लगा। वरना आज दुनिया में ऐसे कितने लोग हैं, जो एक छोटे से एहसान को ताजिंदगी याद रखते हैं?

जब तक मैं नहा-धोकर तरोताजा हुआ, माँ ने हम लोगों का नाश्ता लगा दिया था—मेथी के पराँठे, आलू-मटर की सब्जी और टमाटर की मीठी चटनी, जो मुझे बहुत पसंद थी। साथ ही गन्ने के रस की बनी खीर, जो क्षितिज के लिए तो अजूबा ही था। पर उसे यह खीर इतनी पसंद आई कि उसमें दादी से इसे और माँग-माँगकर खाया। रेनू क्षितिज में आए इस अकस्मात् परिवर्तन को देख विस्मित हो रही थी और उधर क्षितिज नाश्ता कर दादी के साथ बागान में चला गया।

घर पर हमने माँ को इंतजार करते पाया। घर पहुँचते ही गरम-गरम चाय से जो ताजगी मिली, उसे बयान कर पाना संभव नहीं था। क्षितिज और क्षिप्रा के लिए माँ ने गाय के ताजा दूध का इंतजाम कर रखा था।

''पर माँ, बच्चों ने कभी गाय का दूध नहीं पिया है। दिल्ली में हम उन्हें पैकेटवाला दूध ही देते हैं। और पता नहीं गाय का दूध उनके लिए हाईजेनिक होगा या नहीं। मालूम नहीं दूध साफ-सुथरे बरतन में छाना भी गया है या नहीं।'' मेरी पत्नी ने आशंका जताई।

मुझे पत्नी का विरोध अच्छा नहीं लगा। मैंने उसे इशारे से चुप रहने को कहा। माँ की ओर मुखातिब हो कहा, ''माँ, तुम्हें इतना परेशान होने की क्या जरूरत थी?''

''इसमें परेशानी की क्या बात है। रमेशर को जब पता चला कि छोटे बाबू, यानी तुम आने वाले हो और वो भी मेरे पोता-पोती के साथ, तो वह खुद कल आकर कह गया कि जब तक छोटे सरकार यहाँ हैं, तब तक वो उनके लिए ताजा दूध पहुँचाता रहेगा। और हाँ, बहू तुम बरतन की सफाई और दूध की शुद्धता के प्रति कोई आशंका मत रखना। रमेशर मेरे बच्चों को कभी खराब दूध दे ही नहीं सकता। माँ के चेहरे पर मुझे दृढ़ता की वही झलक नजर आई, जो मैं तब देखा करता था, जब वो प्रधान अध्यापिका हुआ करती थी।

''मम्मी, दूध किस रेट से देगा?'' मेरी पत्नी ने पूछा। संभवत: उसने सोचा कि महँगाई के नाम पर गाय का दूध लेने से मना किया जा सकता हो। मैं मन-ही-मन मुसकराया।

''बेटी, दूध की रेट के बारे में तुम क्यों चिंता करती हो। फिर भी तुम जानना चाहती हो तो सुनो, रमेशर इसके कोई पैसे नहीं लेगा। तुम्हारे दिवंगत श्वसुर के उस पर बहुत एहसान हैं। सबसे पहली गाय खरीदने के लिए उन्होंने ही उसे पैसे दिए थे।''

मेरी पत्नी को चुप होना पड़ा। रेनू के लिए यह आश्चर्य से कम नहीं था कि बिना मोल भी लोग निस्स्वार्थ सेवा को तत्पर रह सकते हैं।

इधर क्षितिज सारा दूध एक ही साँस में पीकर खत्म कर चुका था। यह मेरे लिए घोर आश्चर्य की बात थी, क्योंकि क्षितिज को मैंने दूध पीने में सदा आना-कानी करते देखा है, यह कहना मुश्किल था कि उसे दूध का स्वाद अच्छा लगा या फिर दादी के डर से वो दूध पी गया था। वजह चाहे जो भी रही हो, यह मेरे लिए बहुत ही सुकून की बात थी।

जब तक मैं नहा-धोकर तरोताजा हुआ, माँ ने हम लोगों का नाश्ता लगा दिया था—मेथी के पराँठे, आलू-मटर की सब्जी और टमाटर की मीठी चटनी, जो मुझे बहुत पसंद थी। साथ ही गन्ने के रस की बनी खीर, जो क्षितिज के लिए तो अजूबा ही था। पर उसे यह खीर इतनी पसंद आई कि उसमें दादी से इसे और माँग-माँगकर खाया। रेनू क्षितिज में आए इस अकस्मात् परिवर्तन को देख विस्मित हो रही थी और उधर क्षितिज नाश्ता कर दादी के साथ बागान में चला गया।

इधर गाँव के वे लोग, जो पिताजी से आत्मिक रूप से जुड़े थे, मुझसे मिलने आने लगे। शाहपुर एक छोटा गाँव है और यही वजह है कि यहाँ लोगों में आपसी मेल-मिलाप अधिक है। माँ ने दालान में लोगों के बैठने का इंतजाम करवा रखा था। पिताजी के समय के कितने ही बुजुर्ग तो अब इस दुनिया में नहीं थे, पर जो थे, उनमें मुझे और मेरे बच्चों को देखने की जैसी ललक मैंने देखी, लगता था मानो वे अपने बच्चों को देखने की इच्छा से आए हैं। एक बार लोगों की जो मजलिस जम गई तो फिर गपशप का वो दौर चला कि समय का पता ही नहीं चला। हर किस्से के नायक पिताजी ही थे, कैसे वे प्रतिवर्ष दुर्गा पूजा के दौरान स्थानीय दुर्गा मंडप में अपनी नाटक मंडली कला मंदिर द्वारा अभिनीत नाटकों का मंचन किया करते थे, सिर्फ इसलिए, क्योंकि उनका मानना था कि सालभर बाद अपने पीहर आई दुर्गा माँ को रात अकेले वीराने में कैसे छोड़ा जा सकता है? रात भर नाटक होता और गाँववालों की

मजलिस मंडप में जमी रहती, कभी सलीम-अनारकली तो कभी हल्दीघाटी का शेर, कभी लैला-मजनूँ तो कभी समाट् अशोक या फिर मुगल-ए-आजम गरज सिर्फ यह कि मंडप वीरान न हो। सुबह हो जाती और फिर जब पूजा की तैयारी शुरू होती, तभी वे घर का रुख करते। नाटक पर होनेवाले हर खर्च को वे स्वयं वहन करते थे, क्योंकि उन्हें मालूम था कि गाँववालों की हैसियत नाटक के खर्च के लिए अलग से चंदा देने की नहीं थी। इसी तरह मुहर्रम के ताजिये में भी वे बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते। घर के सामनेवाले मैदान में ही जंग का माहौल बन जाता, जहाँ पैक तलवारों और बरछों के करतब दिखाते। दूसरी ओर महावीरी झंडा के जुलूस में भी वे सबसे आगे रहते और जमकर भाग लेते। हर त्योहार पर उनका जोश और जज्बा देखने लायक होता, पर क्या मजाल थी कि किसी भी पर्व पर कोई गड़बड़ हो जाए। उनकी पैनी दृष्टि सदा ऐसे लोग पर रहती, जिन्हें उन्होंने गाँव में पहले नहीं देखा हो और ऐसे लोगों से वे निपटना खूब जानते थे।

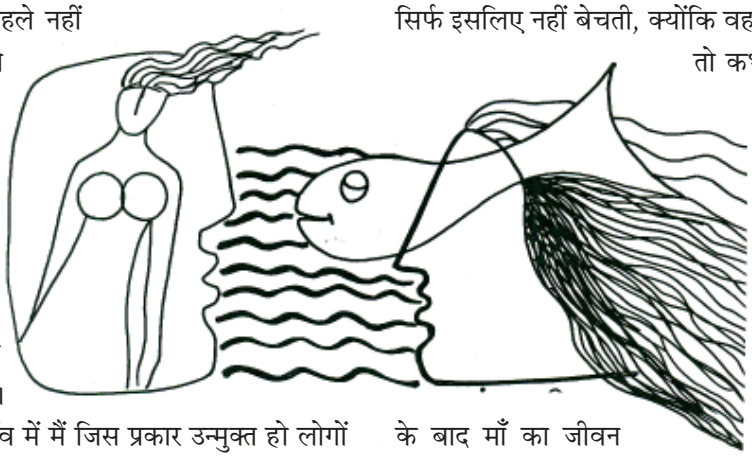

शाम इसी दालान में बच्चों की मजलिस जम गई। इन्हें माँ नित्य दो घंटे पढ़ाती हैं। पूरा दिन लोगों से मिलने-जुलने में ही बीत गया था। मैं दालान से भीतर आया तो रेनू को इंतजार करते पाया। रेनू के लिए मेरा यह रूप भी नया ही था। मैं गंभीर प्रकृति का हूँ, पर यहाँ गाँव में मैं जिस प्रकार उन्मुक्त हो लोगों से मिल अपने दिल की बात कह-सुन रहा था, वह उसके लिए सर्वथा नया अनुभव था। लोगों को विदा कर और रात का भोजन करने के बाद मैं माँ के पास रेनू और बच्चों को लेकर बातचीत करने बैठ गया। रेनू माँ के पाँव दबाने लगी और क्षितिज अपनी बातों से दादी को मंत्रमुग्ध कर रहा था। थोड़ी ही देर में बच्चे सो गए। हम उन्हें उठाने लगे तो माँ ने उन्हें वहीं सोने देने का आग्रह किया।

''पर माँ, ये दोनों बिस्तर गीला कर देंगे।'' रेनू ने कहा, ''आपको परेशानी होगी।''

''तो क्या राजेंदर बचपन में बिस्तर गीला नहीं करता था? बच्चों को यहीं रहने दो, यदि कोई और बात न हो तो।'' माँ ने जोर दिया।

मैंने स्वीकृति में सिर हिलाया और हम दोनों वहाँ से अपने कमरे में चले आए। हमारी शादी के बाद यह पहला अवसर था, जब रेनू को पूरे दिन मुझसे कुछ बात करने का मौका नहीं मिला था। एकल परिवार में पुरुष और नारी तो जैसे चौबीसों घंटे एक-दूसरे को देखते ही बिता देते हैं। पर यहाँ उसे पति-पत्नी के रिश्ते की कशिश का जैसे अंदाजा हुआ। कमरे में आते ही रेनू मुझसे लिपट गई।

''ये आपको क्या हो गया है? गाँव आते ही आपके पास अपनी पत्नी के लिए समय ही नहीं है। और जिस प्रकार आप गाँव में लोगों से हँस-हँसकर मिल रहे हैं, लगता ही नहीं कि आप वही धीर-गंभीर राजेंद्र प्रसाद हैं, जिनकी ऑफिस की गंभीरता घर आने पर भी नहीं उतरती।'' रेनू ने उलाहने भरे स्वर में कहा।

मैं मुसकराकर रह गया। ''पति के गुण-अवगुण धीरे-धीरे ही पता चले तो जीवन का मजा और भी बढ़ जाता है।'' मैंने टालने के लिए कहा।

''मैं सोच रही थी कि जब माँ के पास बैठेंगे तो उन्हें हमारे यहाँ आने के मकसद के बारे में भी बताएँगे। पर आपने माँ से तो कुछ कहा ही नहीं।'' रेनू ने कहा।

''दरअसल माँ की खुशी देखकर बात उठाने की मेरी हिम्मत ही नहीं हुई। तुम ही सोचो, माँ यह सुनकर कितना दुःखी होगी। माँ ने अब तक पिताजी की सारी निशानियों को ज्यों-का-त्यों सुरक्षित रखा है, यहाँ तक कि उनकी पुरानी विल्लीस जीप, जिसे वो चलाना भी नहीं जानती, सिर्फ इसलिए नहीं बेचती, क्योंकि वह पिताजी की प्रिय सवारी थी। मुझे तो कभी-कभी आश्चर्य होता है कि वो इसे अब भी चालू अवस्था में रखने में कैसे सफल रही है। रोज चिमटू आकर इसे स्टार्ट कर जाता है। माँ को कहीं जाना हुआ तो उन्हें घुमा लाता है, वरना यह जीप यहीं खड़ी रहती है। लगता है माँ कभी पिताजी की यादों से बाहर नहीं आ पाएँगी। पिताजी के जाने के बाद माँ का जीवन जैसे ठहर सा गया है। माँ को देखकर यह कभी नहीं लगता कि अपने पति का साथ उन्हें अब मयस्सर नहीं है। वो आज भी अपना जीवन उसी प्रकार जी रही हैं, जैसा उन्होंने पिताजी के साथ जिया है। रोज सुबह माँ उसी प्रकार पिताजी के कमरे की साफ-सफाई करती हैं और फिर उनके चित्र पर नित्य माल्यार्पण करती हैं जैसे पिताजी अब भी उसके साथ हैं। पिताजी की सभी निशानियों की हिफाजत करना माँ के जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है। यह मैं यहाँ आकर देख रहा हूँ। और पिताजी ही क्यों, वो तो अब क्षितिज और शिप्रा में अपने राजेंदर को भी देख रही हैं। अपने मन में कितने ही झंझावातों को समेटे माँ अपना जीवन सहज निर्मल झरने सा जी रही हैं, जिसका सामीप्य झरने का शीतल जल सा शुद्ध और मन को ठंडक पहुँचाने वाला है। यह मैं मान ही नहीं सकता कि माँ के मन में पति को खोने की व्यथा नहीं है, पर वह यह व्यथा किसी पर स्पष्ट नहीं करतीं, जो व्यक्त करती हैं, वह है केवल ममता और दुलार। ऐसी जीवंतता मैंने किसी में नहीं देखी है। ऐसे में मैं उन्हें अपने साथ शहर चलने को कैसे कहूँ।'' मैंने अपने मन की दुविधा के सामने स्पष्ट किया।

''फिर भी मैं उचित समय पर माँ से अवश्य बात करूँगा।'' यह कह मैं सोने का उपक्रम करने लगा।

''यदि आप कहें तो मैं माँ से बात करूँ?'' रेनू ने पूछा।

''तुम जैसा उचित समझती हो, करो।'' मैं बात खत्म करने की

गरज से कह करवट बदलकर सो गया।

सुबह क्षितिज और क्षिप्रा के शोर-गुल से मेरी नींद खुली। उन्हें मुझे यह समाचार देना था कि रात उन दोनों ने ही बिस्तर गीला नहीं किया था। जानते हैं पापा, दादी हम दोनों को रात में दो बार उठा-उठाकर वापस ले गई थीं, इसलिए आज हमारा बिस्तर गीला नहीं हुआ।'' क्षितिज ने सूचित किया। मैं उनकी इस सरल सहज समाचार पर हँसे बिना नहीं रह सका।

''पापा आज मैंने भी गन्ने का रस पिया है।'' क्षिप्रा ने तोतली बोली में बताया। ''पापा, आज हम दोनों दादी के साथ बागान से बहुत सारी सब्जियाँ लाए हैं। पापा, आपको पता है, सब्जियों के पेड़ छोटे-छोटे होते हैं।''

क्षितिज के पैर का उन्होंने मुआयना किया और अपने हाथों की कला का ऐसा नमूना पेश किया कि एक हल्की सी टक की आवाज के साथ क्षितिज का मोच सही हो गया। रेनू को एक पल तो ऐसा लगा कि दिलावर से क्षितिज की हड्डी टूट गई है; किंतु अगले ही पल जब क्षितिज ठीक से खडा हो गया और बिना दर्द के चलने लगा तो हमारे आश्चर्य की सीमा न रही।

''बुद्धू उसे पेड़ नहीं पौधे कहते हैं, दादी ने बताया था।'' क्षितिज ने उसे सुधारा।

''पापा आज हम एक पपीता भी लाए हैं। बिशुन काका ने बहुत ही मुश्किल से उसे तोड़ा। पपीता का पेड़ सीधा होता है और उसमें कोई डाली भी नहीं होती, बिल्कुल वैसा ही जैसा किताबों में देखा था।'' क्षिप्रा ने मुझे पपीते के पेड़ के बारे में जानकारी देते हुए कहा।

ग्रामीण जीवन से मेरे बच्चों का यह पहला साक्षात्कार था। बच्चों का उमंग और जोश देख उन्हें गाँव लाने का निर्णय मुझे सही लगा। मैंने महसूस किया कि ग्रामीण जीवन से परिचित कराकर मैं उनके बचपन में एक स्वर्णिम अध्याय जोड़ने में सफल रहा हूँ।

अगले कुछ दिनों तक घर पर ऐसे लोगों का ताँता लगा रहा, जो मेरे मरहूम पिता से जुड़े थे। कदाचित् मैं अपने ही घर में मेहमान बन गया था। और समस्त गाँववाले मेरे आतिथेय। उनके लिए यह किसी समाचार से कम नहीं था कि गोविंद बल्लभ बाबू के बेटे राजेंद्र बाबू और उनका परिवार वर्षों बाद गाँव आया है। मेरे पिताजी ने गाँव में रहते हुए इन सबका कभी-न-कभी कोई भला किया था। अत: आज जब वे नहीं हैं तो गाँववाले मुझसे मिलकर मुझे और मेरे बच्चों को आशीष देने को तत्पर थे। संभवत: माँ से इन ग्रामीणों को जानकारी हुई थी कि गोविंद बल्लभ बाबू के बेटे का परिवार स्वास्थ्य लाभ के लिए गाँव आया है। यह समाचार ही काफी था, उनके प्यार और सहयोग का समंदर उमड़ पड़ा था। हर कोई पिताजी की मदद के प्रतिदान स्वरूप कुछ-न-कुछ लेकर हाजिर हो जाता, जो स्वास्थ्य के लिए गुणकारी माना जाता था। ऐसा नहीं था कि मुझे मेरे पिताजी की हस्ती का अंदाजा नहीं था। यह तो मैंने भी देखा था कि वे गाँववालों की मदद को सदा तत्पर रहते थे और गाँववाले उनकी हर बात मानते थे, किंतु गाँववालों के दिलों में उनके प्रति आज भी इतनी श्रद्धा, इज्जत और सम्मान बरकरार है, यह मैं उनकी मृत्यु के इतने वर्षों बाद देखकर अभिभूत था।

मुझसे मिलने आनेवालों में दशरथ पासी भी हैं, जो कभी पिताजी की मदद से ब्लॉक ऑफिस में खजूर के रस का ठेका पाने में सफल रहे थे। आज भी वे इसी धंधे में हैं और अच्छा कमा रहे हैं। दशरथ चाचा प्रतिदिन खजूर के रस का बना नोलिन (नया, नूतन) गुड़ लेकर स्वयं आते। इस मौसम में खजूर के रस का सेवन और उस रस से बना नोलिन गुड़ का उपयोग स्वास्थ्यकारक माना जाता है।

हीरा कोइरी ने अपने खेत में गन्ना लगाया है और इस साल गन्ने की भरपूर पैदाइश हुई है। वो रोज ही गन्ने का ताजा रस लेकर हाजिर हो जाते। मेरे बच्चों के मुँह में तो गन्ने के रस का मानो स्वाद लग गया है। कोका-कोला और फैंटा पीनेवाले क्षितिज और क्षिप्रा को गन्ने का रस पीता देख मुझे सुखद आश्चर्य होता। बच्चों को प्रतिदिन सुबह गन्ने का रस पीने की जैसे आदत सी हो गई। मेरी पत्नी रेनू को तो विश्वास ही नहीं होता कि शहर में हर समय बर्गर और पिज्जा के लिए जिद्द करनेवाला क्षितिज टमाटर और नोलिन गुड़ से बनी मीठी चटनी वैसे ही स्वाद लेकर चट कर जाता है, जैसे उसे बर्गर और पिज्जा प्रिय थे। यहाँ तक कि मौसमी सब्जियों की बनी तरकारी भी वह स्वाद लेकर खाता, जबकि इन्हीं सब्जियों को शहर में वो हाथ तक नहीं लगाता था। यह तो मैं भी समझता हूँ कि रसायन और कीटनाशक से सनी सब्जियों में स्वाद नहीं होता किंतु केवल इसी वजह से बच्चे सब्जियों से मुँह फेर सकते हैं, इसका प्रमाण मुझे गाँव आकर मिला। दिन भर वह या तो अपनी दादी के साथ बागान में समय बिताता या फिर राशिद अली के रिक्शे पर बैठ गाँव की सैर करता।

कोई अपने बगान से ताजी सब्जी लिये आता तो कोई मौसमी फल। इसी प्रकार कोई अपने पोखर की ताजी मछली ले आता तो कोई केले का घौद। मेरे बच्चों के लिए ये सारी चीजें अजूबा हैं। भाव कम होने के इंतजार में जिन सब्जियों का सेवन दिल्ली में हम महीनों नहीं कर पाते थे, वे हमें यहाँ गाँववाले स्वयं आकर दे जाया करते हैं। शहरों में जो चीजें पैसे खर्च करने पर भी मयस्सर नहीं थी, वो यहाँ लोग बतौर तोहफा देकर जा रहे थे। रेनू के लिए तो यह हैरत करनेवाली बातें थीं। शादी के बाद उसे गाँव अपने ससुराल में रहने का बहुत कम मौका मिला था। इसकी दो वजहें थीं, एक तो मेरी नौकरी और दूसरा मेरा संकोच कि एक ऊँचे अधिकारी की बेटी शायद गाँव में सामंजस्य नहीं बिठा पाए। किंतु रेनू के चेहरे पर बेटे के स्वास्थ्य लाभ को देखकर असीम संतोष के जो भाव आते, वो मुझसे छिपे नहीं थे। और क्षितिज ही क्यों, इन दस दिनों में ही रेनू के चेहरे पर उभरी चमक और लालिमा देख मैं चकित था, क्योंकि शादी के बाद तरुणाई की वह लालिमा जो इतने वर्षों में कहीं विलुप्त हो गई थी, वह मैं पुन: उसके चेहरे पर देख रहा था। गाँव का माहौल, यहाँ की जलवायु और यहाँ का शुद्ध खान-पान माँ-बेटे को इतना माफिक लगेगा, इसकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। अत: एक

रात जब रेनू ने कुछ दिन और रुकने का आग्रह किया तो मैंने इसे तुरंत स्वीकार कर लिया।

गाँव आने के बाद से क्षितिज को पेड़ों पर चढ़ने का शौक हो गया था। एक दिन वह अमरूद के पेड़ पर चढ़ गया। डाली नीची थी, अत: उसे पेड़ पर चढ़ने में कोई दिक्कत नहीं हुई। पर पेड़ से उतरना उसे ठीक तरह से नहीं आता था। उतरने के क्रम में वह जमीन पर आ गिरा और उसका बायाँ पैर मोचिल हो गया। दर्द से वह कराहने लगा। हम उसे देखकर घबड़ा गए। यहाँ उसका इलाज कैसे होगा, यह सोचकर चिंतित हो गए। माँ देवी स्थान गई हुई थी। लौटकर आने पर माँ ने जब क्षितिज को देखा तो बिशुन को तुरंत दिलावर खान को बुला लाने भेजा। दिलावर के अब्बा कभी पिताजी की खेती की देख-रेख किया करते थे। कुछ ही देर में दिलावर हाजिर थे। क्षितिज के पैर का उन्होंने मुआयना किया और अपने हाथों की कला का ऐसा नमूना पेश किया कि एक हल्की सी टक की आवाज के साथ क्षितिज का मोच सही हो गया। रेनू को एक पल तो ऐसा लगा कि दिलावर से क्षितिज की हड्डी टूट गई है; किंतु अगले ही पल जब क्षितिज ठीक से खडा हो गया और बिना दर्द के चलने लगा तो हमारे आश्चर्य की सीमा न रही।

''माँजी, सरसों के तेल से सुबह-शाम दो बार मालिश करेंगे। जो थोड़ा-बहुत दर्द है, वो भी जाता रहेगा।'' दिलावर ने हमसे विदा लेते हुए माँ से कहा। जैसा कि दस्तूर था, उसने भी माँ से कोई पैसा नहीं लिया।

रात का खाना-पीना समाप्त कर जब हम माँ के पास बैठे थे, तो माँ के पैर दबाते हुए रेनू ने बात छेड़ी।

''माँ, पिताजी के जाने के बाद आप यहाँ अकेली रहती हैं। हमें वहाँ शहर में आपका ध्यान लगा रहता है। हम चाहते हैं कि आप हमारे साथ शहर में आकर रहे। हमें भी आपका आशीर्वाद और स्नेह मिलता रहेगा।'' रेनू ने संक्षिप्त में अपनी बात रखी।

माँ कुछ नहीं बोली। केवल मेरी ओर देखा, संभवत: यह जानने के लिए कि यह केवल रेनू के विचार हैं या रेनू के आग्रह को मेरी भी स्वीकृति प्राप्त है।

अत: मुझे बोलना ही पड़ा, ''माँ मुझे रेनू के आग्रह में कोई गलती नजर नहीं आती। मेरा भी विचार है कि अब आप हमारे साथ शहर में रहें। मुझे लगता है, पिताजी के जाने के बाद आपका जीवन ठहर सा गया है। आप अब भी उनके इंतजार में वहीं खड़ी हैं। मैंने यह लक्ष्य किया है कि आप आज भी पिताजी की यादों के सहारे जीने की कोशिश कर रही हैं। यह एक तरह की मगतृष्णा है, जो वास्तव में हकीकत से अलग है। हकीकत यह है कि पिताजी हमारे अतीत हैं, भविष्य के लिए जीना चाहिए न कि अतीत की खातिर भविष्य से मुख मोड़ लेना चाहिए। अब आप अपने पोते-पोती की खातिर जीएँ और शहर में हम लोग के साथ आकर रहें तो हमें बहुत खुशी और संतोष होगा। आखिर पिताजी के जाने के बाद अब इस गाँव में रखा क्या है?'' कहने को तो मैं कह गया, पर तत्काल अपनी कही बात के अंतिम वाक्य के थोथेपन का आभास हुआ। परंतु माँ ने मेरी बात का बुरा नहीं माना।

मुसकराते हुए बोली, ''बेटा, हमारा यह संपूर्ण जीवन ही मृगतृष्णा है। पृथ्वी पर हमारा वजूद एक मेहमान सा है। कुछ वर्षों के लिए ही हम यहाँ आते हैं किंतु जीवन रूपी मृग की इस तृष्णा में ऐसे उलझते हैं कि खुद को मेहमान नहीं बल्कि मेजबान समझने की भूल कर बैठते हैं। जब इस पृथ्वी पर हमारा वजूद ही एक मेहमान से अधिक नहीं है, तो फिर क्या अतीत को सँवारने की सनक और क्या भविष्य को सुधारने की जिद। पर बावजूद इसके हम जहाँ अपने बच्चों के भविष्य को सँवारने में एड़ी-चोटी का जोर लगा देते हैं और उनकी राह प्रशस्त करने में लगे रहते हैं, बहुदा वैसी शिद्दत और लगन से हम अपने अतीत को संरक्षित करने का प्रयास नहीं करते। यह हमारा दायित्व है कि हम अपने बच्चों में अपने पूर्वजों की थाली को सम्मान और संरक्षित करने के संस्कार दें। यदि हम ऐसा कर पाने में सफल हो पाते हैं तो निश्चय ही हमारे बच्चे अभिभावकों के प्रति अपनी जिम्मेवारियों को लेकर और संवेदनशील होंगे। यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी जड़ों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी और मजबूती प्रदान करें, न कि हर पीढ़ी हम उन्हें उखाड़कर एक नया पेड़ लगाए। यदि हम अपनी जड़ों को मजबूती नहीं देंगे तो समय का पवन हमारे बच्चों को बहाकर कहीं और ले जाएगा और बुढ़ापे में हम अकेले खड़े हाथ मलते रह जाएँगे। इस हवेली और इस गाँव से मेरी लगाव की वजह भी यही है। यह तुम्हारे पूर्वजों का, खासकर तुम्हारे पिता का ही प्रताप है कि इस गाँव में अकेली रहने के बावजूद मुझे कभी अकेलापन महसूस नहीं हुआ। ग्रामीणों की निस्स्वार्थ मदद करने की जिस बीज को तुम्हारे पूर्वजों ने खासकर तुम्हारे पिताजी ने पानी दिया, उसकी फसल आज लहलहा रही है, जिसका फल मुझे मिल रहा है। यह तुम तो देख ही रहे हो। और एक पतिव्रता स्त्री के लिए तो उसके पति का घर ही उसका स्वर्ग है, अवध तहँ जहाँ राम निवास; ताहँ दिवस जहाँ भानु प्रकास। जहाँ श्रीराम का निवास हो वहीं अयोध्या है और जहाँ सूर्य का प्रकाश हो, वहीं दिन है। अत: मेरा शहर जाना संभव नहीं है। अपने जीवन के बचे दिन भी मैं यहीं इन ग्रामीणों के बीच गुजार दूँगी। हाँ, यह अवश्य चाहूँगी कि मेरे जाने के बाद तुम भी अपने पूर्वजों की इस पूँजी का सदा खयाल रखोगे।'' कहते हुए माँ ने अपनी बात समाप्त की।

माँ की बातों का मर्म मुझे और रेनू को समझ आ गया था।

''माँ, मुझे माफ करना। मैं अपनी गलती मानता हूँ कि मैं इतने वर्षों तक अपने गाँव, अपने घर और अपनी जड़ों से विमुख रहा। मैं हर प्रयास करूँगा कि पूर्वजों को सम्मान देने का जो पाठ तुमने मुझे पढ़ाया, है, वही संस्कार मैं क्षितिज और क्षिप्रा में भी डालूँ।'' मैंने माँ को आश्वस्त किया।

माँ ने हम दोनों को ही अपने प्रयास में सफल होने का आशीर्वाद दिया और हमें गले लगा लिया।

वरिष्ठ वित्त एवं लेखाधिकारी
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्
कृषि मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली-११००८५
दूरभाष : ९८१८९६९८८१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का जनवरी अंक लघुकथा विशेषांक के रूप में पढ़ने से मन खुशी से गद्‌गद हो गया। लघुकथा पर साहित्य अमृत का यह विशेषांक गागर में सागर के समान लगा। लघुकथाएँ ज्ञानवर्धक, शिक्षाप्रद और रोचक लगीं। हमें विश्वास है कि इसकी याद पाठकों के दिल में वर्षों-वर्षों तक बनी रहेगी।

—बद्री प्रसाद वर्मा 'अनजान', गोरखपुर

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक प्राप्त हुआ। पहली नजर में देखते ही इतना प्रभावित हुआ कि तुरंत पत्र लिखने का मोह संवरण न कर सका। इस विशेषांक के द्वारा आपने न केवल एक हाशिए की विधा को साहित्य सागर की मध्य धारा में लाने का सफलतम प्रयास किया है, वरन् शानदार हिंदी, हिंदीतर भाषाओं की रचनाओं, प्रभावी आलेखों को प्रकाशित कर संपूर्ण अंक को चिर स्मरणीय, चिर संग्रहणीय बना डाला है। आपका यह प्रयास लघुकथा जगत् की राह में निश्चय ही मील का पत्थर सिद्ध होगा। ***—संतोष सुपेकर, उज्जैन***

'साहित्य अमृत' लघुकथा विशेषांक की प्रत्येक कथा सटीक, समयोचित और सम्यक् है। बस अवसर पर याद आ जाए तो।

—डॉ. रुद्रदत्त चतुर्वेदी, लखनऊ

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक पढ़कर मन प्रसन्न हुआ। लगभग सभी कथाएँ अपने लघु कलेवर में कथ्य को, सामाजिक सरोकारों, पारिवारिक संदर्भों को, मानव मन के हर्ष-उल्लास को, त्रास-पीड़ा को प्रभावी ढंग से संप्रेषित करने में पूर्ण सक्षम हैं। भाषा भी सहज-सरल व पाठक की संवेदना को झकझोरने में समर्थ है। इस अंक में हम पाठकों ने न केवल लघुकथाओं को पढ़ने का आनंद लिया, वरन् इसका इतिहास, क्रमिक विकास, आज के संदर्भ में उसकी प्रगति, सभी से अवगत हुए, आप सभी को धन्यवाद। प्रतिस्मृति में वृंदावनलाल वर्माजी की 'पहले कौन, लुटेरे का विवेक, इंद्र का अचूक हथियार' सभी अच्छी लगीं। रमेश बतराजी की 'खोज' अभिव्यंजना की दृष्टि से मन में गूँजती रही। प्रभात दूबेजी की 'अंतर', सुकेश साहनीजी की 'लाफिंग क्लब', मीना पांडेयजी का 'मन तो होता ही है' मन को गहरे तक छू जाती हैं।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का जनवरी का लघुकथा विशेषांक अद्‌भुत है। दरअसल यह अंक लघुकथा विधा के संपूर्ण विकास की दिशा का बोध कराता है। बहुत पहले रमेश बतरा के संपादन में लघुकथा विशेषांक निकला था, 'साहित्य अमृत' का यह अंक उसके समकक्ष ही है। ***—प्रतापसिंह सोढ़ी, इंदौर (म.प्र.)***

'साहित्य अमृत' का लघुकथा अंक प्राप्त हुआ। यों तो लघुकथा विधा को केंद्र में रखकर इधर कई विशेषांक प्रकाशित हुए हैं, पर 'साहित्य अमृत' का यह अंक कई मायनों में लीक से हटकर है। इसमें वर्तमान में सृजनरत मुख्यधारा के महत्त्वपूर्ण रचनाकारों की चुनिंदा लघुकथाएँ तो शामिल हैं ही, विधा के इतिहास में वैसे अविस्मरणीय रचनाकारों के अवदान और लघुकथाओं की भी विश्वसनीय प्रस्तुति की गई है, जिन्होंने अनवरत संघर्ष कर मिशनरी भाव से विधा के रूप में इसे प्रतिष्ठा दिलवाई है। आलेख भी बहुआयामी और मूल्यांकनपरक हैं। इसके संपादन में भाई बलरामजी तथा बलराम अग्रवालजी की संपादन दृष्टि व मेहनत की जितनी भी तारीफ की जाए, कम है।

—भगवती प्रसाद द्विवेदी, पटना

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक प्राप्त हुआ। यह देखकर अच्छा लगा कि सारिका के मेरे सहकर्मी और लघुकथा आंदोलन की शुरुआत करनेवालों में से एक रमेश बतरा की लघुकथा भी मौजूद है। दिवंगत मित्रों में पृथ्वीराज अरोड़ा भी यहाँ हैं। सारिका परिवार के मेरे साथियों में बलराम और महेश दर्पण की लघुकथाएँ भी यहाँ मौजूद हैं। सबको एक साथ देखकर बहुत अच्छा लग रहा है। ***—सुरेश उनियाल, दिल्ली***

साल के प्रारंभ में ही 'साहित्य अमृत' मासिक पत्रिका का 'शब्दातीत अवदान' साहित्य जगत् को अचंभित, चमत्कृत और अभिभूत कर गया है। बेशक 'साहित्य अमृत' का १५४ पृष्ठों वाला यह बृहद विशेषांक एक 'रचनात्मक विस्फोट' है। विस्फोट की गूँज की आयु प्रलय तक अक्षुण्ण रहेगी, ऐसा मेरा दावा है। 'साहित्य अमृत' के लगभग सभी अंकों में लघुकथा को समुचित स्थान दिया जाना, इस विधा के प्रति उसके सम्मानीय दृष्टिकोण का पुख्ता प्रमाण है।

—मार्टिन जॉन, पुरुलिया (प. बंगाल)

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक अप्रतिम बन पड़ा है। आदरणीय बलराम अग्रवालजी के कुशल संपादन ने इस अंक को विशेष रूप से सहजनीय बना दिया है। विभिन्न रचनात्मक आलेख, वरिष्ठ-कनिष्ठ लघुकथाकारों की रचनाओं से सज्जित अंक का आवरण चित्र भी सुंदर और प्रतीकात्मक है।

—शोभा रस्तोगी

'साहित्य अमृत' का बहुप्रतीक्षित लघुकथा विशेषांक प्राप्त हुआ। विविध लेखों व विचारपरक प्रस्तुतियों को पढ़कर अनेक नवीन जानकारियाँ मिलीं। ज्यादा अच्छा यह लगा कि अब तक लघुकथा के रक्षण, स्थापना, स्वीकृति इत्यादि को लेकर तथ्य सामने आते थे और इस विशेषांक में लघुकथा के पोषण, बेहतर अस्तित्व और प्रगति को लेकर विवेचना सामने आई है। यह सकारात्मक है। समकालीन लघुकथाकारों की विविध रचनाओं के साथ ही विविध क्षेत्रीय व विदेशी भाषाओं की लघुकथाएँ सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न हैं।

—अंतरा करवड़े, इंदौर (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक मिला। एक छोटी सी लघुकथा कितनी सशक्त हो सकती है और उसमें जो अनकहा तत्त्व है, वह कितना कुछ कह जाता है, उसका बेहतरीन उदाहरण लगी यह लघुकथा। मात्र चार पंक्तियों की घनश्याम अग्रवाल की लघुकथा 'फैसला' में लेखक ने बहुत कुछ कह दिया।

—कुणाल शर्मा, अंबाला सिटी (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' के लघुकथा विशेषांक की समग्रता इस बात में है कि उसमें हमारे जो पुरखे लघुकथा से जुड़े रहे, उनकी लघुकथाएँ, कुछ दिवगंत लघुकथाकारों की लघुकथाएँ, लघुकथा के विविध दृष्टिकोणों पर महत्त्वपूर्ण आलेख और पुरानी पीढ़ी के लघुकथाकारों के साथ सातवें, आठवें, नौवें दशक के लघुकथाकार एवं जो लघुकथा की नई पीढ़ी आज उसे पुष्पित-पल्लवित कर रही है, उनकी लघुकथाएँ; इस सबके साथ विश्व लघुकथाओं का चुनिंदा चयन। कुल मिलाकर एक समग्र दृष्टि के साथ, एक महत्त्वपूर्ण आयोजन, जिसमें तकरीबन लघुकथा के सभी महत्त्वपूर्ण नाम शामिल हैं। 'साहित्य अमृत' पत्रिका के संपादन मंडल को इस महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए हार्दिक बधाई।

—सतीश राठी, इंदौर (म.प्र.)

'साहित्य अमृत' का लघुकथा विशेषांक प्राप्त हुआ। पलकें बिछाए बैठी थी इसके इंतजार में। जैसा सोचा था, वैसा ही है ये; विशिष्ट पठनीय साहित्य सामग्री से लबरेज। पत्रिका दिवंगत सात लघुकथाकारों की लघुकथाएँ समेटे है, जो हमारे बीच नहीं हैं। प्रतिस्मृति के अंतर्गत महान् कथाकारों को पढ़ना हमारी स्मरणांजलि है। श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदीजी ने उम्दा संपादकीय लिखा है। इस सुंदर लघुकथा विशेषांक से रूबरू होना बहुत अद्‌भुत अनुभव दे गया।

—विभा रश्मि, गुरुग्राम (हरि.)

वर्ग पहेली (१३७)

अगस्त २००५ अंक से हमने **'वर्ग पहेली'** प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान–विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा–

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ २८ फरवरी, २०१७ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम–पते अप्रैल २०१७ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर **'वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१३५) का शुद्ध हल

१ दु	२ का	न	दा	३ र	■	४ ब	५ ह	स
६ म	ल	■	■	७ ज	टि	ल	ता	■
■	८ पा	९ रं	१० ग	त	■	११ क	ह	१२ ना
१३ ल	श	क	र	■	१४ क	र	त	ब
ज्जा	■	■	१५ द	हा	ड़	■	■	दा
१६ प्र	१७ च	१८ ल	न	■	१९ क	२० म	२१ सि	न
२२ द	ह	ल	■	२३ अ	ना	द	र	■
■	२४ च	का	चौं	ध	■	■	२५ मौ	२६ सी
२७ क	हा	र	■	२८ र	फू	क	र	ना

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्रीमती कमला पंत**
म.नं. १०८, शिव देवालय
विवेकानंद ग्राम, फेज-१, लेन-१
जोगीवाला, हरिद्वार रोड
देहरादून-२४८००१ (उ.खं.)

२. **श्री माणक तुलसीराम गौड़**
२४७ द्वितीय तल, नवी मैन
शांति निकेतन ले आउट, अरेकेरे
बेंगलुरु-५६००७६ (कर्नाटक)

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई !

वर्ग-पहेली १३५ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री देवकीनंदन कांडपाल (अल्मोड़ा), आलोक सिंह चौहान (देहरादून), आरती शैलेष सुभेदार (बेलगाम), राजा चौरसिया (कटनी), पुखराज वार्ष्णेय, सुभाष शर्मा, दिनकर सहल, बी.डी. बजाज, निर्मला गुजराती (दिल्ली), सी.आर. नाहड़िया, ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), फकीरचंद ढुल (कैथल), मोहन उपाध्याय (अजमेर), अनुराग नागर (सीकर), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), गिरधारी लाल अग्रवाल (यवतमाल), विनीता सहल (मुंबई)।

बाएँ से दाएँ—

१. मार डालनेवाला (५)
४. पंजाब की एक नदी (३)
७. प्रतीक्षा करना (२,३)
९. दोस्त (२)
१०. सारा (३)
११. वह जो किया जाए (२)
१३. शीतलता (४)
१५. अपने अधिकारों का मनमाने ढंग से दुरुपयोग करनेवाला (४)
१८. आनंद-सूचक घोष (४)
२०. तात्पर्य (४)
२२. तंग (२)
२३. पक्षियों का कलरव (३)
२४. औषधि (२)
२५. प्राण लेना (२,३)
२८. गिननेवाला (३)
२९. पढ़ाई की किताब (५)

ऊपर से नीचे—

१. किसी को औरों से पहले अवसर देना (५)
२. तृण (२)
३. करिश्मा (४)
४. लकड़ियों का ढेर, जिस पर शव जलाया जाता है (२)
५. प्रतिष्ठा नष्ट करना (२,३)
६. के नाम (३)
८. संग (४)
१२. चमकाया हुआ (३)
१४. बरसना (३)
१६. नाम रखने (५)
१७. खलबली (४)
१९. दस-साला (५)
२१. बहन के समान आत्मीयता (४)
२२. बुद्धि (३)
२६. पत्र आने-जाने का सरकारी प्रबंध (२)
२७. बैरी (२)

वर्ग पहेली (१३६) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१३७)

१		२		३	■	४	५	६
	■		■	७	८			
९		■	१०			■	११	
	■	१२	■	१३		१४		■
१५	१६		१७	■	१८			१९
■	२०			२१	■		■	
२२		■	२३			■	२४	
२५		२६			■	२७	■	
२८			■	२९				

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' लोकार्पित

२९ दिसंबर को लखनऊ के इंदिरा गांधी प्रतिष्ठान के सभागार में पं. दीनदयाल उपाध्याय जन्म शताब्दी के अवसर पर एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान तथा प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' के पंद्रह खंडों का लोकार्पण उत्तर प्रदेश के राज्यपाल मान. श्री राम नाईक की अध्यक्षता में किया गया। मुख्य अतिथि भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अमित शाह एवं विशिष्ट अतिथि स्तंभकार एवं लेखक श्री हृदय नारायण दीक्षित थे। प्रस्तावना दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय के संपादक डॉ. महेश चंद्र शर्मा ने दी। □

'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' लोकार्पित

१० जनवरी को पटना के श्री कृष्ण मेमोरियल सभागार में पं. दीनदयाल उपाध्याय जन्म शताब्दी के अवसर पर एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान तथा चिति (प्रज्ञा प्रवाह) और प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित 'दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय' के पंद्रह खंडों का लोकार्पण भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अमित शाह के मुख्य आतिथ्य एवं इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष श्री राम-बहादुर राय व दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय के संपादक डॉ. महेश चंद्र शर्मा के विशिष्ट आतिथ्य में किया गया। स्वागत चिति के संरक्षक श्री रामाशीष ने किया; संचालन श्री कृष्णकांत ओझा ने व धन्यवाद श्री संजीव चौरसिया ने दिया। □

साहित्य अमृत का 'लघुकथा विशेषांक' लोकार्पित

१३ जनवरी को नई दिल्ली के प्रगति मैदान में आयोजित विश्व पुस्तक मेले में 'साहित्य अमृत' के संपादक श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी की उपस्थिति में प्रभात प्रकाशन की मासिक पत्रिका 'साहित्य अमृत' के 'लघुकथा विशेषांक' का लोकार्पण गोवा की राज्यपाल मान. श्रीमती मृदुला सिन्हा, प्रसिद्ध लघुकथाकार श्री बलराम व केंद्रीय हिंदी संस्थान के उपाध्यक्ष डॉ. कमल किशोर गोयनका के करकमलों से संपन्न हुआ। इस बृहद् विशेषांक में हिंदी के प्रसिद्ध लघुकथाकारों की रचनाएँ संकलित हैं। श्री बलराम अग्रवाल ने इसमें विशेष सहयोग दिया है। समारोह में अनेक लघुकथाकार उपस्थित थे। □

'देशभक्ति के पावन तीर्थ' कृति लोकार्पित

१४ जनवरी को नई दिल्ली के प्रगति मैदान में आयोजित विश्व पुस्तक मेले के लेखक मंच पर यात्रा-लेखक एवं ब्लॉगर श्री ऋषि राज की प्रभात प्रकाशन द्वारा सद्य:प्रकाशित कृति 'देशभक्ति के पावन तीर्थ' का लोकार्पण नेशनल बुक ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा की अध्यक्षता में परमवीर चक्र विजेता श्री योगेंद्र सिंह यादव के करकमलों से संपन्न हुआ। मुख्य अतिथि दिल्ली मेट्रो के जनसंपर्क निदेशक श्री अनुज दयाल एवं विशिष्ट अतिथि कारगिल युद्ध में शहीद कैप्टन विजयंत थापर के माता-पिता श्रीमती तृप्ता थापर एवं कर्नल श्री वी.एन. थापर तथा परमवीर चक्र विजेता सेकेंड लेफ्टिनेंट श्री अरुण खेत्रपाल के भाई श्री मुकेश खेत्रपाल थे। संचालन श्री राकेश निखज ने किया। □

'सुरंग में लड़की' कृति लोकार्पित

२५ दिसंबर को भोपाल में अंबिकाप्रसाद दिव्य साहित्य समिति के तत्त्वावधान में श्री संतोष चौबे की अध्यक्षता, श्री बलराम गुमाश्ता के मुख्य आतिथ्य, डॉ. विवेक मिश्र व डॉ. मणिमोहन के विशिष्ट आतिथ्य में श्री राजेंद्र नागदेव की दसवीं काव्यकृति 'सुरंग की लड़की' का लोकार्पण किया गया, जिसमें मंचासीन अतिथियों ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री आनंद कृष्ण ने किया तथा आभार श्री जगदीश किंजल्क ने ज्ञापित किया। □

लोकार्पण तथा सम्मान समारोह संपन्न

२९ दिसंबर को बनारस के पराड़कर स्मृति भवन में आयोजित समारोह में अध्यक्षता कर रहे श्री मिथिलेश्वर, मुख्य अतिथि डॉ. नीरजा माधव, विशिष्ट अतिथि श्री जगदीश पिल्लई एवं श्री संजय पंकज ने 'सोच विचार' पत्रिका के ग्राम्य कथा अंकों का लोकार्पण किया। पत्रिका द्वारा आयोजित अखिल भारतीय ग्राम्य कथा प्रतियोगिता में ५००० रुपए के प्रथम पुरस्कार से श्री एम.डी. मिश्रा 'आनंद', २५०० रुपए के द्वितीय पुरस्कार से श्री भगवती प्रसाद द्विवेदी, १५०० रुपए के तृतीय पुरस्कार से श्री अरविंद अवस्थी व श्री मोर्टिन जॉन को तथा ५०० रुपए के प्रोत्साहन पुरस्कार से सर्वश्री राजेंद्र सिंह गहलौत, शोभनाथ शुक्ल, महेश शर्मा को सम्मानित किया गया। संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने किया तथा धन्यवाद श्री वासदेव ओबेरॉय ने ज्ञापित किया। □

'एक बह्र पर एक गजल' का लोकार्पण-विमर्श

११ दिसंबर को भोपाल के स्वराज भवन में श्री चंद्रसेन विराट की अध्यक्षता एवं श्री विजय वाते के मुख्य आतिथ्य में वरिष्ठ कवि डॉ. ब्रह्मजीत गौतम के सद्य:प्रकाशित गजल-संग्रह 'एक बह्र पर एक गजल' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री जहीर कुरैशी, अरूजी, शायर आजम ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सलीम ने किया। □

'धूप छाँव के बीच' काव्य-संग्रह लोकार्पित

विगत दिनों जयपुर के रोटरी क्लब में श्रीमती राज चतुर्वेदी के काव्य-संग्रह 'धूप छाँव के बीच' का लोकार्पण सर्वश्री सुमित्रा सिंह, कलानाथ शास्त्री, राजेंद्र उपाध्याय, हेतु भारद्वाज व सुदेश बत्रा ने किया। इस अवसर पर सर्वश्री सुषमा शर्मा, रंजना त्रिखा, नलिनी शर्मा, विजय लक्ष्मी, रितु वर्मा व संगीता सक्सेना ने अपने विचार व्यक्त किए। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

१८ जनवरी को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशनल क्लब में आर्यावर्त साहित्य-संस्कृति न्यास द्वारा आयोजित कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष श्री बल्देव भाई शर्मा की दो पुस्तकों 'मेरे समय का भारत' और 'आध्यात्मिक चेतना और सुगंधित जीवन' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह सरकार्यवाह श्री दत्तात्रेय होसबाले द्वारा किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा, सर्वश्री कमल किशोर गोयनका, राजीव रंजन गिरि, विजय कौशल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. अरुण कुमार भगत ने किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

१८ दिसंबर को इंदौर में वसंत राशिनकर स्मृति अखिल भारतीय सम्मान समारोह में श्री अरुण डिके की अध्यक्षता एवं श्री अश्विन खरे के मुख्य आतिथ्य में श्री रवीचंद्र हडसनकर की कृति को 'कविवर्य वसंत राशिनकर स्मृति अ.भा. सम्मान'; सर्वश्री गणेश भाकरे, दर्शना देशमुख, कल्पना शुद्ध वैशाख व विश्वनाथ शिरढोकर की कृतियों को 'वसंत काव्य साधना सम्मान' एवं कु.

शुभ्रा अग्निहोत्री को 'श्री अच्युत पोतदार प्रदत्त राम भैया दाते स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। संचालन सुश्री अलकनंदा साने ने किया। सुश्री अरुणा खरगोणकर की अध्यक्षता में कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री मनीष खरगोणकर, सुषमा अवधूत, वैशाली पिंगके, जयश्री करजगी, कल्पना शुद्ध वैशाख, श्रीति राशिनकर, राधिका इंगके, विश्वनाथ शिरढोणकर, अनंत काईतवाडे ने काव्य पाठ किया। सत्र का संचालन एवं आभार श्रीमती श्रीति राशिनकर ने किया। □

डॉ. सुनील परीट सम्मानित

विगत दिनों उज्जैन में मौनीबाबा आश्रम में आयोजित २१वें वार्षिक अधिवेशन में विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ द्वारा डॉ. सुनील परीट को राष्ट्रभाषा प्रचार-प्रसार एवं साहित्यिक देन के लिए 'राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान २०१६' सर्वश्री योगेंद्रनाथ शर्मा अरुण, देवेंद्रनाथ साह, के.बी. मिश्रा द्वारा प्रदान किया गया। □

श्री सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' सम्मानित

विगत दिनों ओस्लो, नॉर्वे में मध्य प्रदेश के सांस्कृतिक विभाग द्वारा भाषा के लिए दिया जानेवाला 'निर्मल वर्मा पुरस्कार' सर्वश्री मनोज श्रीवास्तव, राजेश मिश्र एवं संस्कृति मंत्री श्री सुरेंद्र पटवा द्वारा श्री सुरेशचंद्र शुक्ल 'शरद आलोक' को प्रदान किया गया। □

संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों नई दिल्ली के आर्य समाज मंदिर में प्रो. नित्यानंद तिवारी की अध्यक्षता में डॉ. ओम्प्रकाश शर्मा 'प्रकाश' की कृति 'आधुनिक हिंदी साहित्य : आलोचना प्रसंग' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री हरीश नवल, राजेंद्र गौतम, हरीश अरोड़ा, काशीराम शर्मा, पृथ्वीराज साहनी, वीरेंद्र अग्रवाल, विक्रम चोपड़ा ने अपने विचार व्यक्त किए। संयोजन तथा संचालन डॉ. कैलाश प्रकाश ने किया। धन्यवाद डॉ. सतीश कुमार ने ज्ञापित किया। □

साहित्यकार श्री यतींद्र मिश्र पुरस्कृत

२१ जनवरी को जयपुर के लिटरेचर फेस्टिवल में दैनिक भास्कर की ओर से दिया जानेवाला प्रतिष्ठित 'द्वारका प्रसाद अग्रवाल अवार्ड' इस बार साहित्यकार श्री यतींद्र मिश्र को दिया गया। युवा लेखकों को प्रोत्साहन देनेवाला यह पुरस्कार मिश्र को स्वर साम्राज्ञी लता मंगेशकर पर लिखी गई उनकी पुस्तक 'लता सुर गाथा' के लिए दिया गया है। यतींद्र मिश्र के कई काव्य-संग्रह आ चुके हैं। इनमें काव्य-संग्रह 'ड्योढ़ी पर आलाप' की खासी चर्चा होती रही है। □

सम्मान समारोह संपन्न

३१ दिसंबर को नई दिल्ली में गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा के प्रांगण में काका साहेब कालेलकर के जन्मदिवस पर वरिष्ठ लेखक श्री प्रेमपाल शर्मा की अध्यक्षता तथा सर्वश्री अमरनाथ अमर व रमेश शर्मा के विशिष्ट आतिथ्य में श्रीमती ममता कालिया द्वारा शिक्षा के लिए डॉ. साधना साह, कला के लिए सुश्री हेना चक्रवर्ती, संगीत के लिए पं. देवेंद्र प्रसाद वर्मा, पत्रकारिता के लिए श्री केतन रूपेरा एवं साहित्य के लिए सुश्री रोचिका शर्मा को सम्मानित किया गया। संचालन श्री प्रसून लतांत और श्रीमती किरण आर्या ने किया। □

'याद-ए-बेकल उत्साही' कार्यक्रम संपन्न

विगत दिनों इलाहाबाद में साहित्यिक संस्था 'गुफ्तगू' की ओर से बाल भारती स्कूल में श्री बुद्धिसेन शर्मा की अध्यक्षता एवं श्री सुलेमान अजीजी के मुख्य आतिथ्य में 'याद-ए-बेकल उत्साही' कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री नरेश कुमार महरानी, पेशइमाम इकरामुल हक, पीयूष दीक्षित, असरार गांधी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री इम्तियाज अहमद गाजी ने किया। दूसरे सत्र में मुशायरे का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री रितंधरा मिश्रा, फरमूद इलाहाबादी, प्रभाशंकर शर्मा, विनय श्रीवास्तव, भोलानाथ कुशवाहा, सागर होशियारपुरी, अजीत शर्मा आकाश, सीमा वर्मा 'अपराजिता', शिबली सना, विपिन विक्रम सिंह, शादमा जैदी शाद, शुभम श्रीवास्तव, महेश मनमीत, राम आशीष ने कलाम पेश किए। संचालन श्री शैलेंद्र जय ने किया तथा आभार श्री प्रभाशंकर शर्मा ने व्यक्त किया। □

जयंती समारोह संपन्न

२८ दिसंबर को कानपुर में आचार्य गोरेलालजी की ९२वीं जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में सर्वश्री योगेंद्रकुमार अवस्थी 'लल्लन', राजेंद्र प्रसाद त्रिपाठी, कृष्ण स्वरूप वाजपेयी, नीरज चतुर्वेदी, पुरुषोत्तम वाजपेयी ने अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री राधेश्याम चतुर्वेदी, रामशंकर वाजपेयी, दीप कुमार शुक्ल, शशि सचान, विजय तिवारी 'रज्जन', हरि नारायण तिवारी, अभिमन्यु सिंह, अंजनी निगम, हेत नारायण त्रिवेदी को सम्मानित किया गया। साथ ही 'पुष्पांजलि' पत्रिका का लोकार्पण किया गया। सर्वश्री जयराम सिंह 'जय', अखिलेश चंद्र शुक्ल, कुमार सूरज, रामनरेश चौहान, जे.एन. द्विवेदी, दयानंद सिंह अटल, दिनेश त्रिपाठी, वेदप्रकाश शुक्ल 'संजर' ने काव्य पाठ किया। सर्वश्री विनोद शुक्ल, दीपक सक्सेना, वीरेंद्र कुमार त्रिपाठी, प्रवीण पांडेय, विनता पांडेय, सविता वाजपेयी, मिथलेश त्रिपाठी, शेखरशरण मिश्र, सुभाष मिश्र, प्रदीप पांडेय ने पुष्पांजलि अर्पित की। धन्यवाद डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी ने ज्ञापित किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

१८ दिसंबर को लखनऊ की साहित्यिक संस्था 'युवा रचनाकार मंच' के तत्त्वावधान में यू.पी. प्रेस क्लब सभागार में प्रो. हरिशंकर मिश्र की अध्यक्षता में सर्वश्री रश्मिशील शुक्ला, मधुकर अष्ठाना एवं सुरेश चंद्र सक्सेना द्वारा श्री योगेंद्र वर्मा 'व्योम' को उनकी गीत कृति 'रिश्ते बने रहें' के लिए 'डॉ. हुकुमपाल सिंह विकल स्मृति नवगीत सम्मान' के अंतर्गत प्रतीक चिह्न, सम्मान-पत्र, अंगवस्त्र, श्रीफल एवं सम्मान राशि भेंट की गई। □

'डॉ. शंकर दयाल सिंह' की जयंती मनाई गई

२७ दिसंबर को पटना में पारिजात साहित्य परिषद् के तत्त्वावधान में डॉ. शंकर दयाल सिंह स्मृति पुस्तकालय के प्रांगण में डॉ. शंकर दयाल सिंह की जयंती मनाई गई। इस अवसर पर सर्वश्री श्रीकांत व्यास, मनोज गोवर्धन पुरी, रूपेश दिग्विजय, आनंद किशोर शास्त्री, कुणाल कुमार, राम उपदेश सिंह 'विदेह', भावना शेखर, संजय राही ने श्रद्धा-सुमन अर्पित किए। □

सम्मान समारोह संपन्न

१ जनवरी को अलीगढ़ में डॉ. नरेंद्र तिवारी की अध्यक्षता एवं डॉ. प्रेम कुमार के विशिष्ट आतिथ्य में स्व. श्री राकेश गुप्ता द्वारा अपनी सहधर्मिणी स्व. श्रीमती तारावली गुप्त की स्मृति में स्थापित 'साहित्यश्री सम्मान' इस वर्ष श्रीमती मंजु शर्मा 'वनिता' को दिया गया। श्री अभयकुमार गुप्त ने १०,००० रुपए की राशि देकर, श्रीमती कपिला गुप्त ने शॉल ओढ़ाकर, श्री अनुभव गुप्त

ने स्मृति-चिह्न देकर सम्मानित किया। इस अवसर पर सर्वश्री भगत सिंह, मधुसूदन शर्मा, मुरारीलाल शर्मा मयंक, राजीव कुमार, शंभूदयाल रावत, राजीव प्रचंडिया, अशोक सक्सेना, आर.के. अग्रवाल, अशोक अंजुम, यादराम शर्मा, रमेश राज, वेदप्रकाश अमिताभ ने अपने विचार व्यक्त किए। धन्यवाद श्री अभयकुमार गुप्त ने ज्ञापित किया। □

सम्मान समारोह संपन्न

२४ दिसंबर को मुंबई में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के जन्मदिवस की पूर्व संध्या पर आयोजित समारोह में श्री बालकवि बैरागी को गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा द्वारा 'अटल बिहारी वाजपेयी भारत श्रेष्ठ कवि सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपए की राशि भेंट की गई। सम्मेलन में सर्वश्री सत्यनारायण सत्तन, कीर्ति काले, अरुण जेमिनी, विनीत चौहान, शैलेश लोढ़ा एवं अन्य कवियों ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री सत्यनारायण सत्तन ने किया। □

सम्मान घोषित

विगत दिनों भोपाल के हिंदी भवन में मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा श्री प्रयाग शुक्ल को 'नरेश मेहता सम्मान' से सम्मानित करने की घोषणा की गई। इसके अंतर्गत उन्हें शॉल, श्रीफल, प्रशस्ति-पत्र एवं इक्यावन हजार रुपए की राशि भेंट की जाएगी। साथ ही श्री संतोष चौबे के उपन्यास 'जलतरंग' को 'स्व. शैलेश मटियानी कथा पुरस्कार' से सम्मानित किया जाएगा, जिसके अंतर्गत उन्हें प्रशस्ति-पत्र एवं इक्कीस हजार रुपए की राशि प्रदान की जाएगी। □

डॉ. सुशील कुमार पांडेय सम्मानित

१९ नवंबर को नई दिल्ली के गांधी शांति प्रतिष्ठान में हिंदी साहित्य की समकालीन सृजन-यात्रा की समीक्षा विधा में रचनात्मक योगदान के लिए डॉ. सुशील कुमार पांडेय को 'हिंदुस्तानी भाषा साहित्य सम्मान २०१५' से सम्मानित किया गया। □

संगोष्ठी संपन्न

१६ दिसंबर को किताबघर प्रकाशन के संस्थापक 'पं. जगतराम आर्य' के जन्मदिवस को डॉ. भगवान् सिंह की अध्यक्षता में 'स्थापना दिवस' के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर 'अपना देश और मीडिया' विषय पर संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री तरुण विजय, महेश दर्पण, अवनिजेश अवस्थी व नवीन कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सुशील सिद्धार्थ ने किया। □

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

डॉ. विजयमोहन सिंह स्मृति ट्रस्ट द्वारा डॉ. विजयमोहन सिंह की स्मृति में प्रतिवर्ष हिंदी कथा लेखन के लिए युवा कथा पुरस्कार प्रदान किया जाएगा। 'डॉ. विजयमोहन सिंह स्मृति युवा कथा पुरस्कार' के लिए हिंदी में कथा लेखन कर रहे ४५ वर्ष के कथाकार अपनी रचना की तीन प्रतियाँ अपने जीवनवृत्त के साथ श्री वर्तुल सिंह, ४/बी २डी/सेक्टर ए, बरखेड़ा, भोपाल-४६२०२२ (म.प्र.) के पते पर १५ फरवरी, २०१७ तक भेज सकते हैं। □

सम्मान समारोह संपन्न

१३ जनवरी को नई दिल्ली के राष्ट्रभाषा स्वाभिमान न्यास और यू.एस.एम. पत्रिका के संयुक्त तत्त्वावधान में गांधी शांति प्रतिष्ठान सभागार में आयोजित '२३वें राजभाषा विकास एवं सम्मान समारोह' में सर्वश्री थावरचंद गहलोत, भीष्मनारायण सिंह, श्यामसिंह शशि, महेश शर्मा, जयनारायण कौशिक, प्रदीप दीक्षित, हरिसिंह पाल, उमाशंकर मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री ओमप्रकाश पांडेय, शैलेंद्र कुमार शर्मा, चेतना उपाध्याय, सरोज गुप्ता, भावना शुक्ला, कविता पंत, नरेश कुमार, निधि वर्मा, ईभा प्रसाद ने अपने आलेख प्रस्तुत किए। द्वितीय सत्र में मंचस्थ अतिथियों द्वारा लोकार्पण तथा सर्वश्री रामहरि शर्मा, अनीता पांडेय, सोनल बंसल, कार्तिक वारियर, श्रवण कुमार को राजभाषा के विकास में उत्कृष्ट योगदान करने के लिए 'राजभाषा सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें स्मृति-चिह्न, शॉल व पुस्तकें भेंट की गईं। □

अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

१३-१४ जनवरी को साहित्य अकादेमी, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा एवं विद्याश्री न्यास के संयुक्त तत्त्वावधान में 'कथेतर हिंदी गद्य : परंपरा और प्रयोग' विषय पर अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री माता प्रसाद, टी.वी. कट्टीमनी, तातियाना, श्याम सुंदर दुबे, अरुणेश नीरन, दयानिधि मिश्र, उमापति दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त किए तथा 'धर्म की अवधारणा : परंपरा और प्रासंगिकता', 'छितवन की छाँह' व 'कदम की फूली डाल' का लोकार्पण किया। प्रथम सत्र में 'कथेतर हिंदी गद्य : विधाएँ और संभावनाएँ' विषय पर सर्वश्री हरीश रावत, विद्याबिंदु सिंह, राजीव रंजन झा, सुभद्रा राठौर, श्रीराम परिहार, भारती गोरे, कृपाशंकर चौबे, भारती सिंह, राजेंद्र प्रसाद पांडेय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. सत्यदेव त्रिपाठी ने किया। द्वितीय सत्र में 'कथेतर हिंदी गद्य की आलोचना : प्रयोजन और निकष' विषय पर सर्वश्री रमेश ऋतंभर, दिलीप सिंह, जयप्रकाश, रेवती रमण, अनिल राय, सूर्यप्रसाद दीक्षित ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. वशिष्ठ अनूप ने किया। प्रो. हरिराम द्विवेदी की अध्यक्षता में आयोजित काव्य गोष्ठी में अनेक कवियों ने काव्य पाठ किया। संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ मिश्र ने किया।

द्वितीय दिवस के प्रारंभ में आगरा की पत्रिका 'गवेषणा' के पं. विद्यानिवास मिश्र पर केंद्रित विशेषांक का लोकार्पण हुआ। इसके बाद सर्वश्री श्यामसुंदर दुबे को 'विद्यानिवास मिश्र स्मृति सम्मान', आनंद संधिदूत को 'लोककवि सम्मान', अजय कुमार सिंह को 'राधिका देवी सम्मान' एवं शिव कुमार पराग को 'श्रीकृष्ण तिवारी स्मृति गीतकार सम्मान' से सम्मानित किया गया। संचालन प्रो. राम सुधार सिंह ने किया। तृतीय सत्र में 'कथेतर हिंदी गद्य का विकास और अवदान' विषय पर सर्वश्री सत्येंद्र शर्मा, प्रभाकर मिश्र, अवधेश प्रधान, चंद्रकला त्रिपाठी, अनंत मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन प्रो. वशिष्ठ नारायण त्रिपाठी ने किया। अंतिम सत्र में कहानी के लिए सुश्री सपना सिंह को प्रथम पुरस्कार से; आलेख के लिए पूजा यादव को प्रथम, संतोष कुमार को द्वितीय व अनुराधा को तृतीय पुरस्कार से; कविता के लिए अनिल कुमार यादव को प्रथम, सुरभि श्रीवास्तव को द्वितीय एवं प्रमोद कुमार की तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इस सत्र में सर्वश्री सुशील कुमार पांडेय, वशिष्ठ मुनि ओझा, श्रीनिवास पांडेय व काशीनाथ सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री बिजेंद्र पांडेय ने किया तथा आभार डॉ. दयानिधि मिश्र ने ज्ञापित किया। □

अखिल भारतीय ब्रजभाषा साहित्यकार संगोष्ठी संपन्न

६-७ जनवरी को श्रीनाथद्वारा साहित्य मंडल एवं राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी, जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में 'अखिल भारतीय ब्रजभाषा साहित्यकार संगोष्ठी' के प्रथम दिवस के प्रथम सत्र में वाचनालय, पत्र-पत्रिकाएँ एवं संस्था प्रकाशन प्रदर्शनी लगाई गई। द्वितीय सत्र में उद्घाटन, प्रतिमाओं की प्रस्तुति, पारितोषिक वितरण एवं विदाई समारोह हुआ। तृतीय सत्र में सुश्री आस्था सक्सेना ने अपनी प्रस्तुति दी। चतुर्थ सत्र में सर्वश्री गोपीनाथ पारीक 'गोपेश', अरुण कुमार जैन, गोपाल प्रसाद मुद्गल, इंद्रप्रकाश श्रीमाली, अंजीव 'अंजुम', रामेश्वर शर्मा 'रामूभैया' ने स्व. श्री भगवतीप्रसाद देवपुरा को साहित्यार्चन एवं पंचम सत्र में सर्वश्री दाऊदयाल गुप्ता 'दयाल', राधागोविंद पाठक, सुरेंद्र सार्थक, अब्दुल जस्वार, शिवसागर शर्मा, प्रमोद सनाढ्य, ब्रजभूषण चतुर्वेदी ने काव्यार्चन किया। षष्ठ सत्र में डॉ. महेंद्र भाणावत को पंद्रह हजार एक सौ रुपए के 'श्री भगवतीप्रसाद देवपुरा स्मृति सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। सप्तम सत्र में ब्रजभाषा साहित्यकार संगोष्ठी का प्रथम भाग आयोजित किया गया। अष्ठम सत्र में पाँच हजार एक सौ रुपए की राशि वाले सम्मानों से सर्वश्री ओमानंद सरस्वती, इंद्रप्रकाश श्रीमाली, बशीर अहमद 'मयूख', उषा यादव एवं हीरालाल श्रीमाली को सम्मानित किया गया। नवम सत्र में अखिल भारतीय कवि सम्मेलन हुआ। दशम सत्र में सर्वश्री ज्योत्स्ना शर्मा, आशा शर्मा, रामदयाल मेहरा, नलिन, मधुसूदन पांड्या, माताप्रसाद शुक्ल, सुरेंद्र 'सार्थक', अब्दुल समद 'राही' एवं शेख अब्दुल हमीद को 'काव्य कलाधर' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया। एकादश सत्र में सर्वश्री आशा पांडे ओझा, कृष्णा जैमिनी, कृष्णलता यादव, हेमलता, पूनम माटिया, रेखा लोढ़ा 'स्मित' को 'काव्य कौस्तुभ' की मानद उपाधि से समर्हित किया गया। दूसरे दिन के प्रथम सत्र में अष्टछाप, पत्रिका, काल-कवलित पत्र-पत्रिका, साहित्यकार, पुस्तकालय एवं प्रकाशन कक्ष का अवलोकन किया गया। द्वितीय सत्र में ब्रजभाषा साहित्यकार संगोष्ठी संपन्न हुई। तृतीय सत्र में सर्वश्री अनिल 'अनवर', अविनाश शर्मा, आनंद शर्मा, धर्मेंद्र कुमार सूर्या, शकुंतला सरपरिया, रंजना भाणावत को 'संपादक श्री' की मानद उपाधि से पुरस्कृत किया गया। चतुर्थ सत्र में सर्वश्री नंदकिशोर 'निर्झर', कमलेश कटारिया, मधुर, कृपाशंकर शर्मा 'अचूक', एकता सारडा, साबिर 'शुक्रिया', प्रिया महेश बच्छानी, कासिम 'बीकानेरी', चिरंजीवलाल टांक 'देशप्रेमी' को 'काव्य भूषण' की मानद उपाधि से समादृत किया गया। पंचम सत्र में ब्रजभाषा साहित्यकार गोष्ठी संपन्न हुई। षष्ठ सत्र में सर्वश्री शेषपाल सिंह 'शेष', भगवानदास जैन, राकेश कुमार सिंह, महेंद्रप्रताप तिवारी, कृष्णमुरारी शर्मा, संतोष कुमार सिंह, मातादीन मिश्रा 'आनंद', जयसिंह 'नीरद' व अशोक पंड्या को 'साहित्य सुधाकर' की मानद उपाधि से समलंकृत किया गया। सप्तम सत्र में सर्वश्री राधेश्याम भारतीय, राधेश्याम 'शाक्य', गोविंद भारद्वाज, हीरालाल लुहार 'हिंद', प्रकाश तातेड़, सावित्री चौधरी, संतोष सांधी, राहिला रईस, इंद्रदेव गुलाटी को 'साहित्य कुसुमाकर' की मानद उपाधि से विभूषित किया गया। अष्टम सत्र में श्री काशीलाल शर्मा को 'श्री कन्हैयालाल राठी स्मृति सम्मान-२०१७' एवं सुश्री आस्था सक्सेना को 'श्रीमती कंचनबाई राठी स्मृति सम्मान-२०१७' से सम्मानित किया गया। नवम सत्र में दो हजार एक सौ राशि के सम्मानों से सर्वश्री हरेराम वाजपेयी, करतार योगी, अनिल कुमार, कोमल वाधवानी 'प्रेरणा' एवं श्री शांतिलाल जोशी को सम्मानित किया गया। दशम सत्र में सर्वश्री रामचंद्र दवे, नंदलाल चैथाणी, गोपाललाल त्रिपाठी एवं रमेशचंद्र पारिख को 'श्रीनाथद्वारा रत्न' की मानद उपाधि से अभिनंदित किया गया। साहित्य मंडल के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुरा ने कार्यक्रम में आए सभी अतिथियों एवं सहयोगियों का धन्यवाद ज्ञापन किया। ☐

क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन संपन्न

२७ दिसंबर को औरंगाबाद में दूरदर्शन महानिदेशालय, नई दिल्ली एवं दूरदर्शन अनुरक्षण केंद्र के संयुक्त तत्त्वावधान में श्री सत्य प्रकाश की अध्यक्षता में क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री शिवाजी फुलसुंदर, शहाबुद्दीन शेख, कल्पना गोखे, दिनेश कुमार सहित लगभग चालीस अधिकारियों ने सहभागिता की। संचालन श्री महेश अंचितलवार ने किया तथा धन्यवाद श्री दिनेश कुमार बागुल ने ज्ञापित किया। ☐

बाबू वृंदावनलाल वर्मा पर स्मृति व्याख्यान

विगत दिनों झाँसी में राजकीय संग्रहालय एवं बाबू वृंदावनलाल वर्मा स्मृति समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में पद्मभूषण बाबू वृंदावनलाल वर्मा के जन्मदिवस पर स्मृति व्याख्यान प्रो. सुरेंद्र दुबे के मुख्य आतिथ्य में शुरू हुआ, जिसमें सर्वश्री जानकीशरण वर्मा, जगदीश खरे, राजनारायण शुक्ल, मनमोहन मनु, हरगोविंद कुशवाहा ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर 'बाबू वृंदावन लाल वर्मा : प्रेम एवं इतिहास को पुनर्सृजित करता साधक' विषय पर निबंध प्रतियोगिता के विजेताओं को शील्ड एवं प्रमाण-पत्र देकर पुरस्कृत किया गया। कार्यक्रम में निरुपमा मोहन द्वारा मराठी से हिंदी में अनुवादित उपन्यास 'ययाति कन्या माधवी' का विमोचन किया गया। इस अवसर पर सभी आगतों ने स्व. बाबू वृंदावनलाल वर्मा को श्रद्धांजलि अर्पित की। संचालन डॉ. नीति शास्त्री एवं आभार डॉ. उमा पाराशर ने व्यक्त किया। ☐

सम्मान घोषित

१८ जनवरी को भोपाल में 'पं. बृजलाल द्विवेदी भारतीय साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान' श्री कैलाश चंद्र पंत को दिए जाने की घोषणा की गई। यह सम्मान ११ फरवरी को भोपाल के गांधी भवन में पं. दीनदयाल उपाध्याय की पुण्यतिथि के अवसर पर डॉ. हिमांशु द्विवेदी की अध्यक्षता एवं श्री रमेश चंद्र शाह के मुख्य आतिथ्य में दिया जाएगा। ☐

साहित्यिक क्षति

डॉ. सतीश दुबे नहीं रहे

२५ दिसंबर को हिंदी के सुपरिचित साहित्यकार डॉ. सतीश दुबे का निधन हो गया। 'सिसकता उजास', 'भीड़ में खोया आदमी', 'राजा भी लाचार है' तथा 'प्रेक्षाग्रह' सहित ७ लघुकथा संग्रह, एक शोध-प्रबंध, पंजाबी, मराठी, गुजराती, बांग्ला तथा तेलुगु में लघुकथाएँ अनूदित एवं संग्रह प्रकाशित। अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किए गए। उपन्यास फिल्म का निर्माण तथा छात्रों द्वारा शोध-प्रबंध। 'साहित्य अमृत' के लघुकथा विशेषांक में प्रकाशित 'तंगदिली के बीच' और 'पान का बीड़ा' उनकी अंतिम प्रकाशित लघुकथाएँ रहीं।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।